श्री जिनशासन पुष्पमाला का ६ पुष्प

देव-रचना

कृत—

ला० हरजसराय जैन ओसवाल कसुर निवासी

देव-वाणी भाग दो

भाषा कर्त्ता

श्री श्री जैनाचार्य प्रधानाचार्य आगमाचार्य अनुयोगाचार्य
शास्त्रार्थ केसरी सिद्धान्त दिवाकर बाल ब्रह्मचारी
पूज्यपाद श्रीसोहणलाल जिस्सूरिश्वर के सुशिष्य
(श्री वर्द्धमान स्थानक वासी श्रमण संघीय)
मुनि ताराचन्द्रजी महाराज
पंजाबी

—प्रकाशक—

श्री वर्द्धमान स्थानक वासी शासन धर्म समिति

वि सं २०१० चैत्र मास सन् १९५३ मार्च प्रथमावृत्ति१०००	मूल्य दोनों भागों का दो रुपया डाक खर्च पृथक है	वीर निर्वाण सम्वत् २४७९ आचार्य श्री सोहणलाल जन्म १०४ वर्ष

॥ श्री विमानीक देवों की रचना ॥

* श्री देव वाणी *



दोहा—कल्पोत पत्ति देव गण, सहित विमानी इंद ।
दस ही निज परिवार युत, पूजे आय जिनद ॥२१७॥

अर्थ—इस मृत लोक में से जो इन्सान जप तप दान शील करते हैं यह जीव मर के १२ कल्प देव लोक में आते हैं उनके सुखों का वर्णन करते हैं, जो शुद्ध मन से तपस्या करे निर्यंट वह उपजे शय्या में देवी हो देवता हैं, संयुक्त सयुक्त विमानी देव इन्द्र सर्व दस ही आयो आपणे परिवार समेत तीर्थ कर देवों पास आवे और वंदना सेवा भक्ति स्तुति तन मन वचन से करें करते हैं ॥२१७॥

इस भूमि थी घन सख्य योजन ऊंच अप दस भूमि ही ।
निर कलप लाख विमान बत्ती अरू अठाई छवि लही ॥
पण वर्ण मणि ऊंच पण सय योजने ऊपर धुजा ।
जिह देवते जथ लेस धर सुख भोग भोगे जिन रुजा ॥२१८॥

अर्थ–इस सम भूमि से ऊंचे असंख्याते योजन जावें तो प्रथम, और दूजा देवलोक आवे, सुधर्मा देवलोक और इशान देवलोक। सुधर्मा देवलोक मेरु पर्वत से दक्षिण की तर्फ सुधर्मा इन्द्र का राज है, जिसके ३२ लाख विमान का मालिक है, और इशान देवलोक मेरु पर्वत से उत्तर की तर्फ ईसान इन्द्र का राज है। जोके २८ लाख विमान का मालिक है और दोनुं इन्द्रों के पुन्य और छविपंन हैं। ५ वर्ण के जुहरा त मणि हरे, पन्न, लाल, मोती, खजाना भूरपूर है। और पांच पांच सग योजन की ऊचाई उपर ध्वजा फरफराती हैं। देव इन्द्र तेजु लेश्या वाले रोग रहित सुख भोगते हैं ॥२१८॥

विह अपर गहेया देवियों के हैं विमान दुर्ग पूरे।
षट चार लाख सुर मैं कलपे प्रथम की निप में पूरे॥
इतरे ईशान वति रमे थित लघुरति निव धूर तथे।
तृतीये दशी तुरिये सपत दस षडश पल दम दस मथे ॥२१६॥

अर्थ –यहा देव लोक में देविया अपरिग्रहिया हैं जिनो के १० लाख विमान हैं ६ लाख विमान सुधर्मा देवलोक में और ४ लाख विमान ईशान देवलोक में अपरिग्रहया देवियों को (वेश्या) भी कहते हैं, यह देवी सब देवताओं के काम आती है और सब देव इनको भोग भोगते हैं। सुधर्मा देवलोक के देव, दुजा देवलोक के देव ३ पंचमें, देवलोक के देव ५ सातमे देवलोक के देव ७ नव में देवलोक ६ ग्यारमे देवलोक के देव ११ यह छैदेव लोक ६ लाख विमान वाली देवियों से काम भोगते हैं और इशान देवलोक वाले देव चोथे देव लोक वाले देव छठे देव लोक वाले देव, आठमें देवलोक

वाले देव, दशमें देवलोक वाले देव, १२ बारमे देवलोक वाले देव। यह ४ देव भी ४ लाख विमान वाली देवियों से काम भोगते हैं। प्रथम दुजे कल्प वाले देव कम से कम १ पल वाली स्त्री से तथा कुछ ऊपर पल वाली से सुर सुख भोगते हैं। तीजे देवलोक वाले १० पल वाली से, ४ देवलोक १५ पल वाली से, पंचमें देवलोक के २० पल वाली, देवी से भोगते हैं। छठे देवलोक के देव २५ पल वाली से। सातवें देवलोक के देव, ३० पल वाली देवी से भोगते हैं। आठमें देवलोक के देव ३५ पल वाली देवी से भोगते हैं। नवमें देवलोक के ४० पलवाली देवी से भोगते हैं, भोग। दस देवलोक के ४५ पल वाली से देवी भोगते हैं। ११ मे देवलोक के देव ५० पल वाली से भोगते हैं। १२में देवलोक के देव ५५ पल वाली से भोगते हैं। जिन देवियों की इतनी इतनी थिति होगी उन २ से काम भोगते हैं। कैइक देव तो काया के स्पर्श रस से भोगे, कैइक काया का योग चलने से, कैइक वचन का योग चलने से, कैइक मन का योग चलने से, और कैइक दृष्टि के स्पर्श रस से भोगे ॥२१॥

प्रथमे सुधर्म कल्प दीपत मुकट मृग चिहनी सुरा।
थित पल जघन्य निर विंग की सुर मिथु थोड़क दो घरा।
तिथा स्वामी वती सप्त पल थित इतर पञ्च पचास लो।
तिहशक इन्द्र सुरिद्ध सयुत पुन्य भोगे अति भलो ॥२२॥

अर्थ—सुधर्मा देवलोक में प्रकाश करने वाली देवेन्द्रों के मस्तक पर मणि मुकट वाली प्रकाश देती है। और हिरण का चिन्ह है सुन्दर, स्त्री पुरुष दोनों [illegible]

उत्कृष्टि दो सागर की देवी नी उत्कृष्टी ७ पल्योम की और अपरिग्रहिया की उत्कृष्टी ५० पल्योम की हैं, यहां शक्रेन्द्र महाराज विराजमान हैं, और आनन्द से पूर्वा के फल ऋद्धि भोगत मे मगने हैं जैसा करे वैसा भोगे ॥२२०॥

शुभ हम क्रांत शरीर सुन्दर मुकुट कुण्डल जग मगै ।
उर हार भूषण सर्व थ गे वस्त्र उजल छवि लगैं ॥
वाहिन सु ऐरा पति करी सुर चन्द्र आयुद धारणे ।
जिन राज भक्त सेव करवा धर्म काज समारणे ।२२१॥

अथ—शक्रेन्द्र महाराज श्रेष्ट कंचन वर्ण अति सुन्दर अधिक भाति शरीर की छवि है और महा सुन्दर अङ्गोपाग सोभायमान हैं, मथे पर अनुप रत्न मय मुकुट कानों मे कुण्डल और कपोल ऊपर सोभा देते हैं। उद्योत का जग मगट करते हैं और छाती ऊपर रत्नों के मोतियों के हार सोभा देते हैं पुष्पों की मालाओं से गले मैं सोभा देती हैं ऐसा ही सब अङ्ग उपङ्ग भूषण कर मे सोभते हैं और अति श्वेत वस्त्र कोमल सुगन्धि वाले पहनते हैं। अति सुन्दर जिनकी छवि है और सब हस्तियों मे शिरोमणी उज्वल वर्ण चतुरन्ति वस्त्र भूषण से परिमंडित ऐरापति नामक हाथी है जैन कुंजर रूप सुन्दर वाहन असवारि दे अति सोभायमान जिसमे महाबल है, अति तेज प्रचण्ड प्रकाशक प्रताप वत रिपुमान मर्दन सहस्र स्फुलिंग प्रकाशी वज्र आयुध देव हस्त धारक शक्रेन्द्र महाराज जिनेन्द्र देव का भक्त धर्म के काम कार्य मे अति हर्ष से समुत्त होकर करने वाले, विद्वान के साथ हरेक कार्य म इस करके दुसरा नाम सुधर्मा इन्द्र है ॥२२१॥

तेतीस सुर गुरू मित्र जिह चौरासी सहस समान की।
वसु अग्र महिषी परिषदा त्रय सात आत्म रक्षकी ॥
त्रय लाख छत्ती सहस सुर तुन रच जाके जानीए।
चतुलोक पाल सुसोम सु अत शक्र इन्द्र वखानीए ॥२२२॥

अर्थ—शक्रेंद्र के ३३ महामत्री गुरू देव हैं, और ८४००० समानि देव हैं बराबर बैठने वाले हैं, ८ पटरानिया महादेवी ७-७पल की स्थिति और आप अपने परिवार सहित, श्रेष्ट अग्र महिषी देवी हैं। और तीन प्रकार के परिषद् हैं। अन्दर की, मध्य की, बाहिर की, और ७ अणिका, घोड़े, हाथी, रथ बैल, पयदल, नट, गन्धर्व, और ३ तीन लाख ३६ हजार देव हैं आत्म रक्षक शक्रेन्द्र महाराज के और ४ लोकपाल देव हैं, नाम सोमदेव, यमदेव वरुणदेव और वैश्रमनदेव यह सब देव इन्द्र महाराज के हुकम मे हैं, ऐसे सब परिवार के साथ शक्रेन्द्र महाराज आपने पुन्य के सुभ सुख भोगते हैं ॥२२२॥

जिह लग लहै गति हेमवय अरू इर्णवय के जुग लीया।
जिह लग विराधिक साधुत जिह लग गवे कंदर्पिया ॥
गति साधु श्रावक की कही जघन्य जिह सब थोक हैं।
जिह लग लहै जिह जिया गर्भ थी गति सो सुधर्मा लोक है ॥२२३

अर्थ—पहिला कल्प सुधर्मा देव लोक तक है, क्योंके हेमवय इर्णवय क्षेत्र के जुगलिये १ पल की स्थिति पाने वाले आव पूरा करके पहिला देवलोक में जा जन्म लेते हैं, वहा लग वृति विराधक साधु गति पावें और साधु कंदर्पिया कंद्रप की गति पावे, और साधु श्रावक, श्रावक की, जघन्य गति हैं पहिले देवलोक की गति पति है जो

उत्कृष्टि दो सागर की देवी की उत्कृष्टी ७ पल्योम की और अपरि महिया की उत्कृष्टी ५० पल्योम की हैं, यहां शक्रेन्द्र महाराज विराजमान हैं, और आनन्द से पुन्यों के फल ऋद्धि भोगन में मगने हैं जैसा करे वैसा भोगे ॥२२०॥

शुभ हेमे भ्रात शरीर सुन्दर मुकुट कुण्डल जग मगे।
उर हार भूषण सर्व अंगे वस्त्र उजल छवि लगे ॥
वाहिन सु ऐरा पति करी सुर वज्र आयुद्ध धारखे।
जिन राज भक्त सेव करता धर्म काज समारखे ॥२२१॥

अर्थ —शक्रेन्द्र महाराज श्रेष्ट कंचन वत् अति सुन्दर अधिक क्रांति शरीर की छवि है और महा सुन्दर अङ्गोपाङ्ग सोभायमान हैं, मथे पर अनुप रत्न मय मुकुट कानों में कुण्डल और कपोल उपर सोभा देते हैं। उद्योत का जग मगट करते हैं और छाती ऊपर रत्नों के मोतियों के हार सोभा देते हैं पुष्पों की मालाओं से गले में सोभा देती हैं ऐसा ही सब अङ्ग उपाङ्ग भूषण कर के सोभते हैं और अति श्वेत वस्त्र कोमल सुगन्धि वाले पहनते हैं। अति सुन्दर जिसकी छवि है और सब हस्तियों मे शिरोमणी उज्वल वर्ण चतुरदंति वस्त्र भूषण से परिमंडित ऐरापति नामक हाथी है ऐव कुंजर रूप सुन्दर वाहन असवारि दे अति सोभायमान जिसमें महाबल है, अति तेज प्रचण्ड प्रकाशक प्रताप वत रिपुमान मर्दन सहस्र स्फुलिंग प्रकाशी वज्र आयुध देव हस्त धारक शक्रेन्द्र महाराज जिनेन्द्र देव का भक्त धर्म के काम कार्य में अति रूप से समुख होकर करने वाले, विश्वास के साथ हरेक काय में इस करके दुसरा नाम सुधर्मा इन्द्र है ॥२२१॥

तेतीस सुर गुरू मित्र जिह चौरासी सहस समान की।
वसु अग्र महिषी परिषदा त्रय सात आयु का आनकी ॥
त्रय लाख छत्ती सहस सुर तुन रच जाके जानीए।
चतुलोक पाल सुभोग भुजत शक्र इन्द्र बखानीए ॥२२२॥

अर्थ —शक्रेंद्र के ३३ महामंत्री गुरू देव हैं, और ८४००० समानि देव हैं बराबर बैठने वाले हैं, ८ पटरानिया महादेवी ७—७पल की स्थिति और आप अपने परिवार सहित, श्रेष्ट अग्र मेहिषी देवी हैं। और तीन प्रकार के परिषदा हैं। अन्दर की, मध्य की, बाहिर की, और ७ अणिका, घोड़े, हाथी, रथ बैल, पयदल, नट, गधर्व, और ३ तीन लाख ३६ हजार देव हैं आत्म रक्षक शक्रेंइन्द्र महाराज के और ४ लोकपाल देव हैं, नाम सोमदेव, यमदेव वरुणदेव और वैश्रमादेव यह सब देव इन्द्र महाराज के हुक्म में हैं, ऐसे सब परिवार के साथ शक्रेंइन्द्र महाराज आपने पुन्य के सुभ सुख भोगते हैं ॥२२२॥

जिह लग लहैं गति हैमवय अरू हर्णवय के जुग लीया।
जिह लग विराधिक साद्दत जिह लग भवे कद्रपिया ॥
गति सा् श्रावक की कही जघन्य निह सब थोक हैं।
जिह लग लह निह जिया गर्भ थी गति सो सुधर्मा लोक हैं ॥२२३

अर्थ—पहिला कल्प सुधर्मा देव लोक तक हैं, क्योंकि हेमवय हर्णवय क्षेत्र के जुगलिये १ पल की स्थिति पाने वाले आयु पूरा करके पहिला देवलोक में आ जन्म लेते हैं, यहां लग वृति विराधक साधु गति पावें और साधु कद्रपिया कद्रप की गति पावे, और साधु श्रावक, आराधक की, जघन्य गति है पहिले देवलोक की गति पावे है जो

आराधक हैं, और जो गर्भ से पैदा होते हैं, वह आराध विराधक दोनों हैं, और जो असंज्ञी हैं उनकी गिणतिराधक विराधक में नहीं है और जो गर्भ से पैयदा होते हैं, भाव जप तप संजम में हा यो जीव पाल करके ऊंच गति पा सकता हैं ॥२२॥

अथ दूसरे देव लोक का अधिकार।

ईशान कल्प जघन्य स्थिति पलते अधिक टवी सुर।
दो सिंधु साधिक देवकी थोडक कही जगदीश्वरे ॥
नव पल तथा पच धन पल थोडक देवी की कही।
शुभ महिप मूरत चिन्ह मुकटे इन्द्र ईशानो सही ॥२२४॥

अर्थ—२ ईशान देवलोक के देव देवी जघन्य स्थिति १ पल्योम से अधिक उत्कृष्टी दो सागर से कुछ ऊपर है, वहां की देवी की उत्कृष्टि ६ पल्योम की, अपरमहिया देवी की ४५ पल्योपम की उत्कृष्ट स्थिति, और सुन्दर महिषे की मूर्त मुकुट ऊपर और मुकटधारी देव विराजमान है ऐसे इन्द्र महाराज विराजते हैं ॥२२४॥

वर वृषभ वाहन शूली पाणी उत्तराधिप सुर पति।
तन छवि सुभूषण माला अवर शक्रवत सुन्दर सति ॥
सुर ताव तीस समान को वसु अग्रमहिषी परिषदा।
चतुलोक पाल समेत सब परिवार सोहे मुनि मुदा ॥२२५॥

अर्थ—ईशान इन्द्र महाराज के प्रधान श्वेत वर्ण मय महासुन्दर विराजित वृषभ वाहन की सवारी है, और जिनके हाथ में त्रिशुल शस्त्र

ान मर्दन आयुध धारण करने वाले और उत्तर दिशा में अर्धलोक
े स्वामी हैं देवराज शक इन्द्र का शरीर सुवर्ण वर्ण मय श्वेत वस्त्र
ुकुट कुण्डल कानों में और गले में हारादि फुल माला भूषण धारी
महानल वत महायशवाले महाभाग, उत्तम सेज वत विराजमान हैं,
और इनके साथ में ताय त्रिंश देव है और ८०००० समानी देव
बराबर बैठने वाले, अग्रमहिषी पाट की देवी ८ परिवार समेत जिनके
३ परिषदा, अभ्यन्तर की, मध्यम की, बाहर की, सात अणिका तुरग कुञ्जर
'वृषभ' रथ 'पायक' 'नट' गन्धर्व चार लोक पाल (१) सोम (२) यम
(३) वरुण (४) वैश्रमन ऐसे सर्व परिवार मे ईसान इन्द्र महाराज शोभा
को पाते हैं और सुखों म तल्लिन हैं, जैसे सुधमा इन्द्र का कहा वैसे
ईशान इन्द्र को भी समझना ॥२२४॥

जिह कल्प लग युगल लगे गति लिंग निहलग भवे ।
निह लग पर्नो की आयुधर तनु सातकर जिह लग हवे ॥
जिह ठार मैथुन काम सुर लोक नाम ईशान है ।
ईशान इन्द्र विराज तो जिन राज भक्ति सुजान है ॥२२६॥

अर्थ —२ ईशान देवलोक म युगलिया गति पाते हैं, और २
देवलोक म दो लिंग हैं स्त्री पुरुष दोनु उपजते हैं, और उनका शरीर
७ हाथ का है, यहां दोनु लिंग मैथुन काम भोग काया से करते हैं
ऐसा ईसान नाम सुरपुर है। जहां इसान इन्द्र महाराज विराजमान हैं
और वह इशासन इन्द्र श्री जिनेन्द्र देव की भक्ति में करने करने में
बड़े चतुर हैं ॥२२६॥

श्री: तीजे देवलोक का वर्णन ।

सुरलोक सत कुमार और महिंद्र द्वादस नरण के।
द्वादस तथाष्ट विमान लाख अरूपण हैं चतु वर्ण के ॥
शत षष्ट योजन ऊच ऊपरि केतु ध्वद्ध भरे पदा।
षट हस्त देही देव राजत विषय सुख भोगे मदा ॥ २२७॥

अथ —३ सत कुमार देवलोक ४ महेन्द्र देवलोक दोनो देवलो बरावर भूमि पे हैं, पहिले १२ लाख विमान हैं, दूसरे पे ८ ल विमान, दोना के २० लाख विमान हैं। चार रंग के विमान हैं। का रंग छोड़के और चातु विमाना के ऊपर ६०० योजन ऊंची ध्वजा इतने २ ऊंचे विमान हैं। और ऊपर उनके केंद्र योजन की ऊंची ध्व पताका फराता है। और शब्द ५ विषय पूरा हैं, ऐसे सुख वाले विम मे देव विराजमान हैं। शरीर की ऊंचाइ ६ हाथ की हैं। और नि सुख भोगते मदा आनन्द मे रहते हैं ॥२२७॥

दो जलधि से थिति सात सागर लग कही ओदन सही।
वराह चवण मौलिधर सुर पद्म गौर छवि लही ॥
सु स्पर्श इन्द्रिय काम सुख सुरलोक सत कुमार हैं।
तिह इन्द्र सेत कुमार सुन्दर सब को हितकार हैं ॥२२८॥

अथ —३ देव लोक सतकुमार इन्द्र की जघन्य २ सागर उत्कृष्टी सात सागर की दोनोंके सिर पर मुकट हैं उसमे ६ नक्षत्र चि हैं सुअर का चिमरा नाम मूर्त्त चित्र हैं। और शरीर में चिहनो पद्म कमलका गौरवन मानि हैं और काम भोग स्पर्श मय है। आ मान, यह रचना सत कुमार देव लोक मैं हैं, यहा इन्द्र सहा

विराजमान हैं, श्रौर सदा स्वधर्मी चतुर संघ को हितकारी हैं। सतकुमार के समानी देव ७२००० हैं आत्म रक्षक देव, २८८००० हैं चार लोक पाल हैं। अग्रिका ई। ११४४०० । ३ परिषदा ८००० अ दर, की मध्य १०००० की ११००० बाहिर की ॥२२८॥

कुछ अधिक सागर दोइ ते थिति सात साधिक लग सही।
सुर सीस मुकटे सिंह चिन्ह महिंद्र सुर पुर सुख लही॥
जिह लग लहैं गति षट सघयणी इन्द्र श्री महिंद्र हैं।
सुर पद्म गौर शर्श मोली भक्ति चित सुरिंद्र हैं ॥२२६॥

अथ —४ कल्प महेन्द्र देवलोक में देवों स्थिति जघन्य दो सागर से कुछ अधिक और उत्कृष्टी सात ७ सागर से कुछ अधिक हैं मस्तक पर मुकुट चिन्ह सिंह का लक्षण, ऐसे देवता देवलोक का सुख लेते हैं, चौथ देवलोक तक ६ संघयण वाला जाता हैं वहा इन्द्र महाराज विराजमान हैं और गौर वर्ण मय देव काम क्रीडा स्पर्श इन्द्रियमय हैं। सनतकुमार की तरह श्री जिनेन्द्र देव की भक्ति भक्ति में लगे रहते हैं और विमान आठ लाख हैं, तीजे चौथे देवलोक के विमान ४ रंग के हैं, काला नहीं समानिक देव ७०००० हैं, आत्म रक्षक देव २८०००० । लोकपाल ४ देव हैं। ७ अग्रिरा के ८८०१००० हैं देव। परिषदा ३ प्रकार की हैं। अन्दर ६००० हजार देव हैं। मध्य की ८००० हजार देव हैं। बाहिर की देव १०००० हजार विमान का नाम नन्दी वर्द्धन। ३३ तेतीस गुरू ठिकाने देव हैं इन्द्र महाराज के मुकुट मे चिन्ह नकरे का चिन्ह है ॥२२४॥



५ देव लोक का वर्णन ।

शुभ ब्रह्म लोक सुचैन सब तें अधिक शशिपूर्ण निभा ।
षट भूमि घत विमान लाख सुचार चर्ण त्रिधा विभो ॥
शत सप्त योजन ऊ च धुज युत नील दृग्य विराजते ।
जिह इन्द्र श्री ब्रजेश राजत धर्म कार्य गजत ॥३३०॥

अर्थ—श्रेष्ठ ५ ब्रह्म देवलोक सब देवों में बड़े नाम से पान वाला है और आकार जिसका पूर्णमासी के चन्द्रमा जैसा और जिसके चार लाख विमान हैं जोके छै छ भूमिये महल सुन्दर ४००० विमान । ६ मजले महल है बड़े सुन्दर हैं । जिन में ३ वर्ण हैं पाला निला नहीं और विमान ७०० योजन का ऊ चा है जिसके ऊपर सोभा के देने वाली ध्वजा फरती हैं और वहा पर इन्द्र श्री ब्रम्ह नाम से सोभा पाते हैं । लेकिन धर्म के काम में हर समय गजते रहते हैं । और इन्द्र महाराज के समानी देवता हजार हरम में रहते हैं । आतम रक्षक देव (८००००) (६००००) लोकपाल देव (४) अधिका के देव सात अधिक हैं ।(७६३००००) परिवर्ग तीन अन्दर की (४०००) देव हैं मध्य देव की (६०००) बाहिर देव की (८२०००) तेतीस देव गुरु के स्थान हैं (३३) इन्द्र महाराज के सिर के मुकुट पर मंडे का चिन्ह हैं । विमान का नाम-काम ॥३३०॥

जिह लग लहैं परिवर्त की गति तमस काय जहा लगे ।
लोकंत की सुर जिह रमें लेसा पद्म तिह लागे ॥
जिह काम सुख हैं रूपमय तनु पंच हस्त पद प्रमा ।
थिति सुप्त सागर ते दशा लग छाय लवण सौलिमा ॥३३१॥

अर्थ—जहां दरिद्रारूक समान बुद्धि वाले जीवात्मा सकते हैं जिनको दुखिया पयगा ब्रह्मलोक कहत हैं। इसी को ज्ञानियों ने ५ स्वर्गलोक कहा है। और यहां ही गाभी की लाभ काय भी कहीं हैं जग लोकान्त तेन रसने जिनमे जाते हैं, और जहा पर पद्म लाया देवों स हैं यहा पर राम क्रीडा रूप विषय नेत्र भोग हैं और नहीं। उन्हों देवा का शरीर ५ हाथ का है। और गौर वर्ण पद्मवर्ण कान्ति हैं स्थिति जघन्य ७ सात सागर की और उत्कृष्टि १० सागर की है। इन्द्र भग वान के सिर ऊपर मुकुट आगे मेढे का है। जिसका नाम मृग चिन्ह है ऐसे अमर साभा से ५ पंचम ब्रह्म देवलोक ॥२२॥

नर कल्प लान्तक भूमि पंच विमान सहस पचास को।
त्रिप वर्ण योजन सात में ऊँचे रत्न प्रकाश को।
सुर तन सु मोतन छवि जहा तरिम शुक्ल लेश जहा।
मालूर लक्षण मुकुट दीपत इन्द्र श्री लान्तक वहा ॥२२२॥

अर्थ—प्रभाव लान्तक कल्प देव लोक के विमान पंच ५ सहस्त्र महल हैं। और ५० विमान हैं जिनका ३ रंग हैं लाल (१) पीला (२) श्वेत (३) इन ३ रंग के रत्न विमान हैं। और ७०० योजन के ऊंचे हैं उत्तम रत्नों की ज्योति की तरह प्रकाश करने वाले हैं ऐसे विमानों में उत्तम जाति के अमरदेव विराजमान हैं, और जिनका शरीर उज्ज्वल मोती की सदृश छवि के धारने वाले हैं और ६ देवलोक से लेकर सारे देव शुक्ल लेश्यी हैं, लान्तक इन्द्र महाराज के सिर पर जो मुकुट है उसमें हाथी का चिन्ह है। अपने पूर्वोपार्जित पुण्य के अनुसार सुख में लीन हैं। जिनकी स्थिति जघन्य १० दस सागर की उत्कृष्टि १४

सागर की समानिक देव ८०००० हैं, आत्म रक्षक देव (२०००००) हैं। परिषदा तीन अन्दर की (२०००) देव हैं। मध्य की (४०००) देव हैं। बाहिर की (६०००) देव हैं ॥अणिया सात हैं और (६३५००००) देव हैं अणिया के विमान का नाम। गाम हैं ॥२३०॥

थिति दस उदधि लघु चतुर दस लग पव कर रम रूप को।
जिह लग लह गति किल विष सुरलोक लतक भूप को।
जिह कल्प लग गति पुव्व चौदस की जिनवर कही।
जिह लग गमे सघयण पन घर जान आगम ते लही ॥२३३

अर्थ —६ लतक देवलोक की स्थिति प्रथम कह चुके हैं जिनका शरीर ५ हाथ का ऊंचा है, काम भोग नेत्रा से दर्शन रूप है। और जो कोई साधु आदि का निंदया चुगली कर अन्त समय मर कर लोक देव म जाते हैं। और वहां पर किल विषी की गति पाते हैं ऐसे स्वग लातक इन्द्र का हैं इस कल्प से लेकर गति १४ पूर्वों के धारि साधु की जिनेन्द्र देव ने कही है। जहां से छेवट्ठा संघयण नहीं है सघयण वाला जाता है। ऊंच गति मैंव इरचना जैन सिद्धांत में कही ॥२३३॥

सातमें देवलोक का वर्णन।

सुरलोक लतक लप ऊपर महा शुक्र चतुर मही।
चालीस सहस विमान योजन आठ से ऊंचे सही॥
सित पीत वर्ण ॥ श्रद्ध पूर्ण रमे सुर चतुरर तनु।
इय चिन्ह थिति चौदस उदधि लघु बड़ी सप्तदशी मणु ॥२३

अर्थ —६ठ लतक देवलोक से ऊपर महा शुक्र नाम का सातमा

देवलोक हैं इनके (४ ०००) विमान हैं। और (८००) योजन के ऊंचे विमान ४, ४ मनल के महल हैं दो दो रंग के स्वत पिले वर्ण के हैं और ऋद्धि उत्तम ऋद्धि हैं। जिन विमानों में देव विराजमान हैं, उन देवा के शरीर ४ हाथ का हैं और देवा के सिर पर मुकट महा सुन्दर घोड़े का तथा चिन्ह सोमा के देने वाला। जिनकी स्थिति जघन्य १४ सागर की हैं। उत्कृष्टी १७ सागर की हैं ऐसा जैन सिद्धान्त शास्त्रों में लिख हैं ॥२३४॥

विह सप्त मे दिव इन्द्र सुन्दर महा शुक महा द्युति।
सर्वांग भूषण माल अम्बर काम विषय शब्द धरी॥
जिन वचन रागी धर्म भागी भक्ति चित्त वधावतो।
जिन चरण कमल सुपर्ण निज सिर स्तवन रच गुण गावतो २३५

अथ —७मा देवलोक मह शुक्र नाम का महा सुन्दर महा शुक्र इन्द्र विराजमान हैं जिनके शुभ अङ्गोपाग आभर्ण भूषण माला वस्त्र सुगंधिवाले शोभा देते हैं। और काम क्रीडा शब्दमय वचन रूप ने है और विषय नहीं है और जिनेन्द्र देव के वचनों का रागी है धर्म का भागी है। भगवत की भक्ति वधाने वाला है भगवत के पद पङ्कज चरण कमलों में अपना शीश लगाने वाले और नमस्कार करके गुण ग्राम गाने वाले ऐसे इन्द्र महाराज हैं और इन्द्र की सोभा देखो समानिक देव (४००००) लोक पाल ४ देव हैं। तेतीस देव गुरू के स्थान ३३ हैं॥ आत्म रक्षक देव (१६००००) हैं ३ तीन परिषदा के देव (१०००) अन्दर की देव। मध्य के देव (२०००) हैं बाहिर की देव (४०००) हैं। अणिका ७ के देव (५०८०००) देव हैं। विमान नाम॥ विहङ्ग ॥२३५॥

देव (८0000) हैं ३ परिषद के देव अन्दर की २५० देव हैं। मध्य (५००) देव हैं। बाहिर के (१०००) देव हैं। अणिमा ७ के देव (२४0000) हैं। तैतीस देव गुरू के स्थान ३३। लोकपाल ४ देव हैं ॥२३८॥

१० में देवलोक का वर्णन।

दशमें सुप्राणत कल्प उत्तम थिति जघन्य उनीस के।
उत्कृष्टी सागर बीस गेंडे चिह्न मुकट सुसीम के॥
तिर कल्प चतु विमान शतेंद्र प्राणत नाम हैं।
जिन राज वदन पूजने अति भक्ति अभिराम हैं॥२३९॥

अर्थ—नवमें दसमें देवलोक का एक इन्द्र हैं जिसकी जघन्य थिति। १९ सागर कि उत्कृष्टी २० सागर की दोनों देवलोक विमान चार २ मजल के हैं और (२००) सार विमान १०में के। नव योजन के ऊंचे विमान हैं, और वहां देवों के सिर पर मुकट सोभत हैं जिसमें गेंडे की मूरत हैं, दोनों देवलोक की भूमि बराबर हैं और यहा पर प्राणंत नामे इन्द्र महाराज सोभा के पाने वाले हैं। साथ निकट देव अब भी हैं बहुत जिनके विमान का रंग श्वेत हैं, दूसरे नाम से आणत और प्राणत १० देवलोक हैं। जो ९ देवलोक कथा जोड़ यहा पर समझना॥२३९॥

११–१२में देव लोक का वर्णन।

सुरलोक अरणे कादसे थिति बीस ते इक्कीस लौं।
चिह्न वृषभ लक्षण मौलि घर लेखा करे जिन वच मलौ॥

द्विग प्रथम द्वितीये तृतीये च गुग्यो अर्द्ध चन्द्रकार हैं ॥
तिह ते चतुर शशि पूर्ण ते फुन अर्ध शशिवत चार है ॥२४०॥
सब स्वर्ग ते उत्तम महा गुण तीन मध्यमी नहैं ।
इक्कीस सागर ते चढ़त बाइस लग धारक कहे ॥
पर हुई मूरत चिन्ह मुकटे ज्योत प्रकाशनो ।
चतु खित दुक्ख पविमान जेसय अच्युतन्द्र सुहावनो ॥२४१॥

अथ—१२मा अर्थात् देवलोक की स्थिति जघन्य २० सागर की उत्कृष्टि २१ सागर की मुरत के सिर पर मुकट में बैल की मूरत अति सोभित है। भगवान के वचन सत्य हैं, विमानों का आकार १-२-३-४ अर्धचन्द्रमा के आकार के विमान हैं और ५-६-७-८ इन चार विमानों का आकार पूर्णमासी चन्द्रमा के आकार हैं और ९-१०-११-१२। इन चार का आकार आधे चन्द्रमा के आकार वाले ॥२४०॥ १२मा देवलोक सब दशा में सारे देवलोक न उत्तम महागुण कारी सोभायमान हैं। सो १२ अच्युत देवलोक में ३ संघयण वाले साधु साध्वि श्रावक श्राविका लेते हैं और जो निरद करनी करते हैं वह सब लेवगे १२ मा देवलोक जिनकी स्थिति जघन्य २१ सागर की उत्कृष्टि २२ सागर की है सर्व पावेंगे ११-१२ के विमान हैं ३०० सौ हैं। चार चार मनले हैं और ६०० योजन के ऊंचे २ हैं वर्ण १ श्वेत हैं। ११-१२ का बैल का चिन्ह हैं मुकट में समानी देव (१००००) है। आत्म रक्षक देव हैं (४०००) अणिका ७ सात के देव (१२७१०००) है। ३ तीन परिषदा अन्दर के देव १२५ मध्य के देव २५० और बाहिर के (५००) देव हैं। और शरीर वस्त्र आभर्ण भूषण कान कुंडल सिर पर

मुक्ट मूरत हुंडयसु की ऐसी भाति ज्योति प्रकाश दत हैं ॥२४१॥

उत्कृष्ट श्रावक गति जहा चार पदवी सो कही।
आजीविश आभोगोया गति दृष्ट त्रय तिह लग सही ॥
वैक्रय उत्तर जिह लग करै सेवक पति पद जिह लगे।
मन भोग रस चतु कल्प उत्तम नाम अच्युत जिन भगे ॥२४२

अर्थ —श्रावक की गति उत्कृष्टि १२ में देवलोक तक हैं। वहा पर जाकर चार पदवी प्राप्त करें एक तो इन्द्र पदवी, दूसरी समानिक पदवी, तीसरी ३३ त्रेतिस त्रायतिम गुरू पदवी, चौथ लोकपाल पदवी पावे। यह चार पदवी में से एक पदवी आराधिक कि पावे और आजीव कमति यहा लग जावे, और १२ लग ही अभियोगी जावे यहा लगे ही ३ दृष्टी वाला जावे और १२ में देवलोक तक ही उत्तर वैक्रय कर सकता है। और स्वामी सेवक भी यहा लग ही हैं। अब आगे विशेष कथा रचना हैं। १२ देवलोक १-२-३-४ इन चारों देव लोक में काम भोग ३ योग से है। १-मन, २ वचन, ३ काय। और ५-६-७-८। इन चारों देवलोकों का काम भोग २ योग से हैं। १ मन २ वचन और ९ १० ११-१२ इन चारों देवलोकों का काम भोग एक योग से करते हैं। मन से अपनी इच्छा पूर्ण पूरी कर लेत हैं। ऐसा श्री जिनेन्द्र देव ने जैन सिद्धान्त में कहा हैं॥ ४२॥

इहि कल्प द्वादस भूमि वासन वर विमान विराजत।
योजन असख्य प्रमान के छवि सरस फे छवि छाजते।
कल्पत भूमि कल्प नाम वडस के घर इन्द्र को।
उतकिृष्ट थिति सुख सो लहे चितधार वचन जिनेन्द्र को ॥२४३॥

अर्थ —यह १२ देवलोक की बावन ५२ भूमि का घडि प्रधान, उत्तम विमान सोभते हैं वोह विमान असंख्याते योजनों के लम्बे चोडे हैं और कितनेक सख्याते योजनों के लम्बे चोडे हैं और सुन्दर छवि से सोभा देते हैं और जो २ विमान देवलोक हैं उनके अंतम की भूमि उपर घडंसक नाम का, कल्प विमान हैं उसमे इन्द्र महाराज का यहां पर रहना हैं घडंसक विमान में और आप आपने ऊंडे सुधर्मा विडसक १ ईसान विडंसक २ संतकुमार विडसक ३ महेन्द्र विडंसक ४ इस प्रकार से सर्व जाणना और ईशान घडंसक विमान के चारू दिशा में, चार घडंसक विमान हैं ऐसे नाम से ऐसे ही ॥ ४३॥

यहां पर चार लोकपाल का वर्णन ।

विह इन्द्र वास विमान के दिशा पुव्व सोम सुवर्ण को ।
दक्षिण दिशा जम वर्ण पछम उत्तरे वैसमन को ।
रम भांत चार विमान माहि लोकपाल सुरिंद के ।
बहु मुदवत महत सुंदर बचन राह जिनंद के ॥२४४॥

अर्थ —जहा देवलोक मे घडसक विमान हैं और जहा इन्द्र महाराज विराजमान हैं । वहा इन्द्र महाराज के चारों तर्फ चार लोक पाल रहते हैं चार विमानों में पूर्व दिशा की तर्फ "सोम" नाम लोक पाल है । और दक्षिण दिशा की तर्फ "यम" नाम से लोकपाल है । पश्चिम दिशा में वरुण नाम का लोकपाल रहता है । और उत्तर दिशा में वैश्रमन, तथा (कुबेर) नाम का लोकपाल हैं यह सब दिशा इन्द्र महाराज के विमान से गिणना जो पहले आचुके हैं (१) घडसक विमान

के चारों तरफ प्रस्तक विमान हैं। जहां मे लोकपाल देव रहते हैं लोकपाल महा ऋद्धिवाले बडी पदवी वाले अति सुन्दर सोभा वाले और सच्चे सेवक ऐसे वचन भगवत कहे ॥२४॥

किल विषी थिति त्रिपाल त्रि सागर प्रयोदम धारक सुरा।
पापी आघो किल कल्प जिन धुग तृताय पर धुरा ॥
लवक यह सुख दोष के फल ऊंच थानक नहि लहैं।
निंदादि दोष विसार सयुत सजमी इह फल गहै ॥२४॥

३ तीन किल विषी देवों का वर्णन।

अर्थ —देवलोक मे ३ किल विषी देव रहते हैं जिनका वास रहना जहा पर दश प्रकार के ज्योतिषी देवों से ऊपर और पहले दूसरे देवलोक से नीचे रहते हैं ३ पलिये देव किलविषी और ३ सागरीये देव किलविषी, पहले दूसरे देवलोक से ऊपर और तीजे चोथे से नीचे ॥१३ सागरिये देव किल विषी पाचम देवलोक से ऊपर और छठे देवलोक से नीच हैं किल विषी देव जो जो कोइ निंदादि करेगा यह जीव नीच ठिकाने पैदा होता हैं, जो निंदा करता हैं वहो अमृत छोड के विष्टा खाता है, इसलिये निंदा के प्रभाव से छुडे देव बनते हैं किल विषी, निंदा मत कर इसलिये निरदोष संजम पा लेने से शुभ गति की प्राप्ति होती हैं ॥२४॥

गति वेदोप जीव पुन्यों का फल।

फलयो पवी इक लहै तिर्थंकर पद लह इक केवल।
चक्रे श केशव बल महीधर सधु श्रावक केवल ॥

मिथ्यात्व युत इक भूमे [illegible]
भव जन द्यो इहि देव रचना [illegible]

अर्थ —१२ देवलोक में से [illegible]
आप अपने पुन्य के अनुसार कई [illegible]
जीव तीर्थंकर दयकी पदवी पावें [illegible]
कैइक चक्रवर्ती की पदवी पावें [illegible]
की पदवी पावें। एक जीव पृथ्वी [illegible]
कैइक नारक पदवी पावें, एकके [illegible]
शटे सैनापती मंत्री माथ पाद [illegible]
धान्य सुख मोक्ष पद पावें, कितनेइ [illegible]
मन संयुत ससार में जन्म [illegible]
परिभ्रमन करें चार गति [illegible]
जिने द्र दव के हैं हे मन जीवो [illegible]
इसरे सुणने से समझने मे [illegible]
है जय हो ॥२४६॥

चौसठ इन्द्र पवित्र मन [illegible]
उकमत अङ्ग प्रमोद पूर्ण [illegible]
जिन भक्ति फल शुभ गति [illegible]
ओडक लहे निर्वाण पद ॥ [illegible]

अर्थ —सारे ६४ इन्द्र हैं [illegible]
प्रकार वाण व्यतर १६ प्रकार, [illegible]

भगवंत के सच्चे भगत हैं जो कोइ सच्चे दिल से ग़ुसी प्रमोद वित्त
पवित्र सुध भावों से अंगोपग की खुसी से मन की पवित्र भावना
अगर भगवान की भक्ति होजावे तो यह जीव आत्मा इस मावलोक
आके पुन्य के प्रभाव से धन धान्य रिद्धि सिद्धि काम भोग संसार
सुख पावे और सारे कर्मों का क्षय कर निर्वाण पद पावे जहां मरण
जन्म नहीं है यह गणधर देवों का कहना है इसलिये चौसठ इन्द्र
और भी देव भक्ति के लिये आते हैं ६४ इन्द्र भवनपतियों २० इन्द्र
हैं। वाण व्यंतरों के ३२ इन्द्र हैं। ज्योतिषियों के १० इन्द्र हैं। विमा
नियों के दश प्रकार के इन्द्र चल इन्द्र चमर इन्द्र इस प्रकार से चौसठ
सुर इन्द्र ॥२४७॥

सवैयामत्तगयद-छद-सारे इन्द्रों का।

पचहि पच कही असुरेंद की पट त्रिया धर नादिक फेरी।
व्यतर जोतिक इन्द्रन की चतु अग्रह महेषि सुरिद्ध घनेरी ॥
शक्र इशान कि आठ इमे परिवार समेत जिनद कि चेरी।
वदन पूजन प्रेमधरी जिन वेन सुने धर रीझ घनेरी ॥२४८॥

अर्थ–इन्द्रोंके अग्र महेषी देवियों की सख्या ऐसे हैं चमरेन्द्र की
५ देवी पटराणी चल इन्द्र की ५ देवी पटराणी और असुरेन्द्र की १०
राणी, धरणेंद्र की आदि ले की नव इन्द्रों के १८ को ६-६ देवी है।
ज्योतिषी इन्द्रों के चार २ पटराणी हैं, वाण व्यंतर के ३२ इन्द्रों के
एकेक इन्द्र के चार २ पाठको पटराणी हैं। और शक्रेन्द्र के ८ देवी
पाठ की इशानन्द्र की ८ पटराणी हैं। ऐसे अप आपने परिवार से

साथ लेकर ऋद्धि सहित जिनेन्द्र देव की चेरी बन कर सेवा करती हैं। वंदना करैं पूजा स्तुति गुण ग्राम गाय अति सुखी हर्ष के साथ प्रेम से और भगवंत की वानी सुने आनन्द माने ॥२४८॥

चौसठ साठ हजार समानिक हैं चमरेंद्र बलेन्द्र किमारे।
षट सहसयुते धरणादिक व्यंतर ज्योतिक चार हजारे॥
चार असमीय असीय बहत्तर सत्तर साठ पचास सुमारे।
चालीस तीस सुबीस दसो भवनादि सहस सुशोभत सारे॥२४६॥

अर्थ —इन्द्रलोक के इन्द्रों के समानी देवों की संख्या चमरेन्द्र के समानी देव (६४०००) हजार हैं वलेंद्र के देव समानी देव (६००००) हजार हैं। धरणेन्द्र के समानी देव ६ हजार हैं। आठ व्यंतर के इन्द्रों के चार ४ हजार समानीक हैं देव। ज्योतिषियों के इन्द्रों के समानिक देव हैं (४०००) हजार। शक्रेन्द्र के (८४०००) हैं समानिक देव। ईशानेंद्र के (८००००) समानिक देव हैं। सनत्कुमारेन्द्र के समानिके देव (७२०००) हजार है। माहेन्द्र के (७००००) हैं समानीक देव ब्रह्मेन्द्र के (६००००) हजार समानिक देव हैं। लांतवेंद्र के (५००००) हजार देव समानीक हैं। महाशुक्रेन्द्र के (४००००) हजार समानिक देव हैं। सहस्रारेन्द्र के (३००००) हजार देव समानिक हैं। प्राणतके (२००००) हजार देव समानिक हैं। अच्युतेन्द्र के (१००००) हजार देव समानिक हैं। यह सब समानीक देव मंत्री वजीरवत् कहे हैं ऐसे सर्व इन्द्र सोभा पाते हैं। और इना से चार गुणे आत्म रक्षा के लिये चौकीदार वत् पहरा देते हैं, इन्द्र महाराज के पास हरदम ॥२४६॥

भगवंत थे स्ते भगत हैं जो कोइ सच्चे दिल से खुसी प्रमोद चित्त पवित्र सुध भावों से श्रंगोपग की खुसी से मन की पवित्र भावना अगर भगवान की भक्ति होजावे तो यह जीव आत्मा इस मातलोक आके पुन्य के प्रभाव से धन धान्य रिद्धि सिद्धि काम भोग संसार सुख पावे और सारे कर्मों का क्षयकर निर्वाण पद पावे जहां मरना जन्म नहीं है यह गणधर देवों का कहना हैं इसलिये चौसठ इन्द्र और भी देव भक्ति के लिये आते हैं ६४ इन्द्र भवनपतियों २० इन्द्र हैं। वाण व्यन्तरों के ३२ इन्द्र है। ज्योतिषियों के १० इन्द्र है। विमानियों के दश प्रकार के इन्द्र बल इन्द्र चमर इन्द्र इस प्रकार से चौसठ हुवे इन्द्र ॥२४७॥

सवैयामत्तगयद छंद-सारे इन्द्रों का।

पचहि पच कही असुरेंद की पट्ट त्रिया धर नादिक केरी।
व्यतर जोतिक इन्द्रन की चतु अग्रह सुहेषि सुरिंद्र चुगेरी॥
शक्र इशान कि आठ इमे परिवार समेत जिनंद कि घेरी।
चंदन पूजन प्रेमधरी जिन बैन सुने धर प्रीत घनेरी॥२४८॥

अर्थ -इन्द्रोंके अग्र महेषी देवियों की संख्या ऐसे हैं चमरेन्द्र की ५ देवी पटराणी वल इन्द्र की ५ देवी पटराणी और असुरेन्द्र की १० राणी, धरणेंद्र की आदि कों क्री नव इन्द्रो के १८ को ६-६ देवी हैं। ज्योतिषी इन्द्रों के चार २ पटराणी हैं, वाण व्यन्तर के ३२ इन्द्रों के एकेक इन्द्र के चार २ पाठरी पटराणी हैं। और शक्रेन्द्र के ८ देवी पाठ की ईशानेन्द्र की ८ पटराणी हैं। ऐसे अप आपने परिवार से

साथ लेकर ऋद्धि सहित जिनेन्द्र देव की चेरी बन कर सेवा करती हैं। वंदना करैं पूजा स्तुति गुण गान गावें अति खुशी हर्ष के साथ प्रेम से और मगरेंद की बानी सुने आनन्द मानें ॥४८॥

चौसठ साठ हजार समानिक हैं चमरेंद्र वरोन्द्र किमारे ।
षट सहस्रयुते धरणान्द्र व्यंतर ज्योतिष चार हजारे ॥
चार अस्सीय बहत्तर सत्तर साठ पचास सुमारे ।
चालीस तीस सुवीस दसो सयवादि सहस सुशोभत सारे ॥२४९॥

अथ —इन्द्रलोक के इन्द्रों के समानी देवों की सख्या चमरेन्द्र के समानी देव (६४०००) हजार हैं वरोंद्र के देव समानी देव (६००००) हजार हैं। धरणेन्द्र के समानी देव ६ हजार हैं। वाण व्यंतर के इन्द्रों के चार ४ हजार समानीक हैं देव। ज्योतिषियों के इन्द्रों के समानिक देव हैं (४०००) हजार। शक्रेन्द्र के (८४०००) हैं समानिक देव। ईशानेन्द्र के (८००००) समानिक देव हैं। सनतकुमारेन्द्र के समानिक देव (७२०००) हजार हैं। माहेन्द्र के (७००००) हैं समानीक देव ब्रह्मेन्द्र के (६००००) हजार समानिक देव हैं। लांतवेंद्र के (५००००) हजार देव समानीक हैं। महाशुक्रेन्द्र के (४००००) हजार समानिक देव हैं। सहस्रारेन्द्र के (३००००) हजार देव समानिक हैं। प्राणतके (२००००) हजार देव समानिक हैं। अच्युतेन्द्र के (१००००) हजार देव समानिक हैं। यह सब समानीक देव मंत्री वजीरवत् कहे हैं ऐसे सर्व इन्द्र सोभा पाते हैं। और इनासे चार गुणे आत्म रक्षा के लिये चौकीदार बन पहरा देते हैं, इन्द्र महाराज के पास हरदम ॥४९॥

साथ सभी परिवार सुरेश्वर भक्ति कर प्राण में रुचि धार।
स्तोत्र विचित्र सुवर्ण प्रसून कि दाम अनेक बनाय सवारे।
संस्कृत प्राकृत देस विदेश कि भाष मइ गुण ग्राम उचारे।
मोद लहे निजरा बहु कर्म कि होत सुसंतत पुन्य भंडार ॥२५०॥

अर्थ — सर्व इन्द्र आपने ७ समानीक सुरेश्वर वा प्रभू स्नेही, परिषदा ३ लोकपाल चार ४ अंगिरा ७ प्रणिकापति, प्रातम रक्षक देव अभियोगी देव। विमान इत्यादिक परिवार सहित आते हैं भगवान की भक्ति करैं वंदना नमस्कार करैं चित्त से स्तोत्र रचे अवार रंग फूलों की माला गूथे केई सारंगी तार इकतार स्वर बजाय बजाव केई संस्कृत छंद काव्य रचे केई प्राकृत गाथादि छन्द रचैं, केई देस विदेस की भाषा रचैं केई गीत रचे ढाल साजे पहेली रचैं यह अनेक भाति के कविता करैं, अति हर्ष खुशी मनावे ऐसे काम करने से महा कर्म की निजरा होवे और साता वेदनी कर्म बांधे ऊंच गोत्र शुभ कर्म बांधे, और पुन्यों के भंडार भरे गुण गावे तो ॥२५०॥

साज सजे इक ऊनचवास कि ये दस दोय सुताल बजावे।
सात सुरेतिह ग्राम करी पटराग सभी परिवार सुनावे।
नाटक भांत बत्तीस रचे बहु भांत सुछन्द पढे रस पावे।
भक्ति करे सुर श्री जिन की कर जोर नमे जयकार सुनावे ॥२५१

अर्थ —४९ प्रकार के वाजों से साज सजै और १२ भांति के ताल बनावे खरजादि स्वर आदि सात स्वर, तीन तीन ग्राम साथ उचारे छै राग छतीस रागनी तीस पुत्र सर्व परिवार साथ गावे बत्तीस विध ... अनेक भाति के छन्द पडे औसे छन्द जिसे सिंगार रस

हास रस आश्चय रस शान रस पावे इस प्रकार से देवी देवते भगवत की भक्ति करते हैं और फिर वदना करें जयकार बुलावे इस प्रकार से जो कोइ भगवान के गुण गावे वोह फल पावे ॥२५१॥

द्वादस कलप ते परे, कल्पातीत कहाय ।
दुक्कर करणी अति तपी, महा प्राक्रमी थाय ॥२५२॥

अर्थ —१२ देवलोक से परे ऊचे लोक मे कल्पातीत देवते हैं वहा पर बहोत दुष्कर करनी करके जाते हैं तपस्या के बल से अति घोर तप करे वह जीव ऊच पद पावे ॥२५२॥

जति लिंग बिन और नही, पावे पद अहिमींद ।
नो ग्रीवेग अनुत्तरे, दो विध कहैं जिनद ॥२५३॥

अर्थ —विना साधु लिंग जाति के और कोई ऊच पद [illegible] कर सक्ता हैं यह साधु लिंग में हैं ऊंचे जाने की एक दो [illegible] नो नवमी वैकार देव बनता हैं और दूसरा ५ अनुत्तर [illegible] बन सकता है यह दोपरकार के मान्य हैं जिनेन्द्र [illegible] कहा है और आगे भी हैं ॥२५३॥

भद्र सुभद्र सुजात दिव, सुमन सुचीये [illegible]
पिय दसण सुदशणो, अरू मोघ शुभ [illegible]
सुपबुद्ध यशोधरो, नव ग्रीवेक [illegible]
पच विषय सुख अधिक सुर, सु ले [illegible]

अथ —नवग्रीवेक देवलोक के [illegible]
(३) सुमन से (४) सुदशन (५) प्रिय [illegible]
बुद्धे (८) यशोधरे (६) यह नव [illegible]

१.वर्ण २ गंध ३ रस ४ स्पर्श ५ यह पंच विषये मुन पंच इन्द्रियों के पोषनहार सुख भोगते हैं। और जिन्हें हैठले देवों सुरों से अनंत गुणे अधिके सुख हैं। और पुन्य के फल अति हर्ष से भोगते हैं देव ते नव नरग्री वेग के ॥२५४॥॥

नव ग्रीवेके नव मही, दसमी अनुत्तर जान।
बावन कल्प अकल्प दस, बासठ महि विमान ॥२५६॥

अर्थ—नव भूमिका नव ग्रीवेक नवाडी हैं, और एक भूमि अनुत्तर विमान की यह सब मिलाके १० भूमि होती हैं और बावन भूमि कल्पों की १० भूमि अकल्पों की हैं यह सारी भूमि ६२ हुऐ। १० भवणपति, १६ वाण विंतर १० त्रियगजृंभक ५ ज्योतषि १२ देव लोक ॥ ५३—यह सर्व निर्य वयग भूमि हुए हैं और १० मेंह ६३। कल्प कल्पातीत सर्व मिलकर ६२ भूमि होती हैं। इन त्रेसठ भूमि के उपर सारे देवों के विमान हैं ॥२५६॥

ऊंचे एक सहस मित, योजन नव ग्री.क।
तामें विंव कर तनु अमर, सजे एक ही एक ॥ २५७॥

अर्थ—नव नवग्रीवेक के एक हजार योजन के ऊंचे विमान हैं उन विमानों में रहने वाले देवों का शरीर दो हाथ का ऊंचा है और अति सुंदर है और सुदे २ आप अपनी ऋद्धि से सोभापाते हैं, सजे धजे भोग में हैं ॥२५७॥

बाइस सागर ते वढत, एक २ नव माहि।
थिति जधन्य इन ते अधिक, इक इक ओडक ताहि ॥२५८॥

अर्थ—नव ग्रीवेके देवों की स्थिति पदी भरे देवलोक की

स्थिति जघन्य २२ सागर की, उत्कृष्टि २३ सागर की, दुने की जघन्य २३ सागर उत्कृष्टि सागर की तीजे की जघन्य २४ सागर उत्कृष्टी २५ सागर स्थिति है। चौथे जघन्य स्थिति सागर २५ की। उत्कृष्टि २६ सागर की स्थिति है। पाचमें जघन्य स्थिति २६ सागर की उत्कृष्टि २७ सागर स्थिति है। छठे की जघन्य स्थिति २७ सागर उत्कृष्टि स्थिति २८ सागर की है। सातमें की जघन्य स्थिति २८ सागर की है उत्कृष्टि २६ सागर स्थिति है। आठमे की जघन्य स्थिति २६ सागर की है उत्कृष्टि स्थिति ३० सागर की है। नवमें की जघन्य स्थिति ३० सागर की है। उत्कृष्टि स्थिति ३१ सागर की है ॥२४८॥

नव ग्रीवेक तीन त्रिक, हेठ मध्य उपरेव।

तिह विमान शत तीन युत, अष्टादस मग एव ॥२४६॥

अर्थ —६ नवग्रीवेग के देवों की तीन त्रिक हैं। ३ हिसे ३ भाग पहिले त्रिक नीचे जिसमें ३ देवलोक है। १३-१४-१५ दुजीत्रिक विचाले (बीच में) भी ३ देवलोक हैं। १६-१७-१८॥ ऊपर की त्रिक में ३ देवलोक हैं। १६-२०-२१ तीनों के विमानों की सख्या १ त्रिक विमान १११ हैं। २ त्रिक में १०७॥ ३ त्रिक १०० यह सर्व विमान ३१८ हुवे ॥०५०॥

इक सौ ग्यारह सात युत, सौ तीजे सम एक।

श्वेत रत्न मय मेरु युत, जामे देव अनेक ॥२५१॥

अर्थ —और जिनों का श्वेत रत्नों रंग हैं अति सुन्दर ऊपर ध्वजा है ऐसे विमानों में अनेक देव रहते है। नव ग्रीवेक देव सैं ३१८

जिह लग देव निमानीया, महित लोक देव ।
वासुदेव पद लेन की, भाषी श्री जिनदेव ॥२६१॥

अर्थ —६ नव ग्रीवेक देवलोक मे अरु १२ देवलोक से और ६
लोकांतक देवों से निकल कर वासुदेव की पदवी पा सकता है
और देवों से वासुदेव नहीं बनता हैं जिन कहा हैं ॥२६१॥

अनियानी सनियानय, अ त अनत मजीया ।
आराधिक द्रव्य लिंग की, जिह लग देव महिषा ॥२६ ॥

अथ —बिना निदान (नियाना) करे देव बने और नियान
करने देव बने जो करनी बेच देता हैं वोह जीव अनते भावन्तर लेत
हैं और जो करनी नहीं बेचता हैं वह जीव सुख पाता है संसार मे
नियाना करने वाला कोइ कइ भाव लेता है। नियाना नहीं करने वाला
जलदि भव अतम करता है और संजम के आराधिक कि गति सुभ
होती हैं और सजम के विराधक की गति माड़ी होती हैं निश्चय
समझो ॥२६२॥

जिह लग भव्य अभव्य सुर, समाकित अरू मिथ्यात ।
ज्ञान तीन अज्ञान त्रय, नव ग्रीवेक कहात ॥२६३॥

अर्थ —६ नव ग्रीवे के देवों मे ३ ज्ञान हैं ३ अज्ञान हैं २ दृष्टि
हैं, दो भव्य १ अभव्य ३यह जिनेन्द्र देव ने कहा-मिश्र दृष्टि नहीं
नव ग्रीवेग देवों में ॥२६३॥

इक सम दिष्टी शुद्ध चित, निसशय व्रतपाल ।
धर्माराधिक सुर रुचिर, दक्षण ज्ञान रसाल ॥२६४॥

अथ —१ देव सम दृष्टी निमल आत्मा संशे रहित साधु वृति

पाल के धर्म के आराधक हुवे और जिनका ज्ञान दर्शन सुन्दर हैं निमल हैं ऐसे देव तिरने वाले होते हैं ॥२६४॥

इक सशय मिथ्यातयुत, समकित रहित चार।
कर करनी सम साधु की, तहा भए अवितार ॥२६५॥

अर्थ —एक जीवने सशय मिथ्यात्व सहित और सम दृष्टि रहित आचार पाल साधु की करणी तपस्यादिक उत्तर गुणी करके और वहा जाके नवग्रीवक मे देवता हुवे हैं ॥२६५॥

उत्तम दो सघयण के, नव ग्रीवेक थान।
ता ऊपर समदिष्ट घर अमर अनुत्तर विमान ॥२६६॥

अर्थ —उन्हीं देवों के दो सघयण उत्तम प्रथम लिया वज्र ऋषभ नाराच सघयण अरु ऋषभ नाराच संघयण वाले साधु वहा जाते हैं नवग्रीवेकों मे, और नवग्रीवेक देवों के ऊपर अ तम देव भूमि पच अनुत्तर विमानों की हैं वहा पर देव सर्व समदृष्टी देव है, और पाच अनुत्तर विमानों से ऊपर कोइ देव भूमि नहीं हैं, भगवान् का कहना ॥२६६॥

गति थिति कलयानी कही, प्रथम सघयणी थाय।
थोड़े भव कर कर्म चय, मुक्ति महा पद पाय ॥२६७॥

अर्थ—यह देव गति कल्याण कारी स्थिति, कल्पों की हैं प्रथम वज्र ऋषभ नाराच सघयण वाल पावे, वह जीव थोड़े भव लेकर जप तप सयम करणी कर कर्म क्षय कर मोक्ष पद पावे ईश्वर बने भगवान कहावेंगे ॥२६७॥

विजय विजयत जयत फुन, अपराजित सुविमान ।
सर्वार्थ सिद्ध के चहु, दिश ही दिपति सुथान ॥२६८॥

अर्थ—पाच अनुत्तर विमान हैं उन्हों में से ४ विमानों चारू दिशा मे और मध्य सर्वार्थ सिद्ध विमान है, सर्वार्थ सिद्ध विमान से पूर्व दिशा में विजय विमान है, दक्षिण मे दिशा विजयत विमान है, पश्चिम दिशा म जयत विमान है। और उत्तर दिशा मे अपराजित विमान हैं दि०, सुन्दर अति प्रकाश वाले शोभायमान वहां मे देवर सुख अति साता मानते हैं ॥२६८॥

ऊचे योजन इक दस, शतते ऊपर केतु ।
द्रव्य अनुत्तर मणि दिपत, तामे सुर सुख लेतु ॥२६९॥

अर्थ—५ अनुत्तर विमान (११००) योजन के ऊचे हैं उसरे ऊपर १ अति सुन्दर महेन्द्र नाम की ध्वजा शोभति हैं उहां विमानों अति प्रधान उत्कृष्टे देव रहते हैं, महा उत्तम मणि की मरवे दिपते हैं, और यहा पर देव सुख भोगते हैं आपनी करनी के फल का आनन्द लेते हैं जिन वचन हैं ॥२६९॥

इक कर तन सित रतन द्युति, अति बल सुख जस शक्ति ।
सकल अमर सिर मुकटमणि, चित जिण वर गुण रक्ति ॥२७

अथ—वहा पर देवों का शरीर एक हाथ का ऊचा है वर्ण महा श्वेत मणिमय हैं अति बल अति सुख अति यश अति शक्ति अति गुण कीर्ति अति पुण्यवान हैं और सारे देव इन्द्रदेव देवों के सिर ऊपर जैसे मुकट सोभता है ऐसे ही सब से ऊपर शोभा पाते हैं और भगवत के गुणों में रक्त हैं ॥२७०॥

सप्त सप्ती पंचिंद्रिया, पुरुष लिंग जिह ताय ।
अल्प कर्म उन मुक्ति के, देव अनुत्तर थाय ॥२७१॥

अर्थ—अनुत्तर विमान तब तस और सप्ती हैं, ५ पंचेन्द्रिय हैं पुरुष लिंग हैं और देव हैं जिनके कर्म थोड़े रह गये मुक्ति के निकट हैं कौन प्रकार से ? ५ अनुत्तर विमान के देव हैं जिन वचन है॥२७१॥

पंच विमान अनुत्तरे, पंच विषय उतकिष्ट ।
पंचम गति के पाहुणे, पंच दान चित इष्ट ॥२७२॥

अर्थ—५ अनुत्तर विमान श्रेष्ठ हैं, ५मी गति मुक्ति श्रेष्ठ है, ५ शब्द विषय उत्तम सुख उत्कृष्ट हैं। ५ पदे महा श्रेष्ठ हैं और मुक्ति के देने वाले हैं ५ दान मन श्रेष्ठ हैं, लज्जादान (१) करुणादान (२) अभयदान (३) सुपात्रदान (४) ज्ञान दान (५) यह ५ दान मुक्ति देते हैं ॥२७२॥

चहु में लघु इकतीस की, उतकिष्टी तेतीस ।
मध्य सर्व तेतीस ही, सागर कही मुनीश ॥२७३॥

अर्थ—विजयादि ४ विमानों वाले देवों की स्थिति जघन्य ३१ सागर की और उत्कृष्टि ३३ सागर की सर्वार्थ सिद्ध के देवों की स्थिति अजघन्योत्कृष्टि ३३ सागर की यह जिनेश्वर देवजी ने कहा है ॥२७३॥

जितने सागर आयु सुर, तापखे फुन सास ।
तितने वर्ष सहस गति, भूख करे प्रकाश ॥२७४॥

अर्थ—जिस २ देवतों की जितनी २ आयुष्य हैं स्थिति उस हिसाब से देवगति में देवता के आहार और श्वासोश्वास गिण लेणा चाहिये अगर दश हजार वर्ष की आयु हैं तो दश ... मे

इवासोदवास आता है अगर भूख लगे तो पच मे लगे, और ... की होवे सो हजार पक्ष वितने बाद स्वासोश्वास आवे अगर वर्ष विते तो अहार की इच्छा जागेगी आहार लेव भूख लगे रोमाहार वासना पुरी करे यह हिसाब चतुराइ से निरखोगे सो अच्छा होगा ॥२७४॥

मध्य गिरद पाथड लिखे, ता चहु दिशे त्रिकोण ।
सो परे फुन गिरद इम, धुर खित आसठ होण ॥२७५॥

अर्थ—ऊरध लोक देवों की त्रिसठ भूमिका कहि है, उनसभ भूमिका मे से विचका विमान गिरदगोल है असंख्याते जो जन्मा और उसके चारों दिशा एक २ त्रिकोण के विमान हैं और असंख्याते योजन के उनसे असंख्याते योजन परे एक २ चतुकोणे विमान हैं फिर उनसे परे एक २ गिरद हैं (गोल) उनसे फिर परे गिरद हैं ३ त्रिकोणे ४ चतुकोणे विमान हैं (जैसे सुर्यांवदेव के विमानों का नकशा है ऐसे ही समझना चाहिये) इस प्रकार प्रथम भूमि एक २ दिशा त्रेसठ त्रेसठ विमान हैं ॥२७५॥

खित खित इक इक घटत इम, अंत अनुत्तर एक ।
पक्ति वध विमन इम, चहु दिस अमर अनेक ॥२७६॥

अर्थ—एक २ भूमि घटवि २ अंतम अनुत्तर देव भूमि एक है विजयादिक विमान त्रिकोणे हैं इस प्रकार से पक्ति बध विमान । चारु दिशा असंख्याते देव बसते हैं सत्य वचन ॥२७६॥

धुर विचलो नर खेत मित, सम दिस उड शुभ नाम ।
अंतिम जबू दीप सम, सर्वार्थ सिद्ध ठाम ॥२७७॥

अथ —प्रथम भूमि के निचका विमान (४५) लाख योजन का लम्बा चौड़ा है उसके चौगिरदा (४ चारों तरफ) परधि त्रि ३ गुणा कुछ ऊपर है मनुष्य क्षेत्र ढाई द्वीप सम उसके तुल्य है और उसके ऊपर सम निश है उस विमान का नाम ऋद्ध है सबसे श्रेमठमी उतम भूमि सर्वार्थ सिद्ध की है जबूद्वीप प्रमाण ढाई द्वीप समझो न है सत्य वचन १२७७॥

पक्ति पची सर्व ही, योजन अगनित मान ।
तिम ही ताके अन्तर, जिनवर वचन प्रमान ॥२७८॥

अर्थ —पंक्ति बंध विमान सार ७८१२ है वह विमान असख्याते योजनों के लम्बे चोडे हैं, और जिनों के अन्तरे भी असंख्याते योजन के हैं यह वचन जिनदेव के हैं ॥७८॥

पुष्प विकीर्ण और सब, सख्य असख्य प्रमाण ।
दीपे शेष खित ऊपरे, विनध वर्ण सठान ॥२७९॥

अर्थ —(६३) विमान निचले संख्याते प्रमाण (७८१२) है और पक्ति बंध असख्याते प्रमान इनसे छोट विमानों की विमान पुष्प किर्णे संज्ञा है (८४,८६१४६) वह विमान केई२ सख्याते योजनों के है, कई असख्याते योजनों के हैं, और केई थोडे २ अन्तरे हैं केई बड़े २ अन्तरे हैं और जिनों के नाना प्रकार के वर्ण हैं। और अनेक प्रकार के सठान है ॥२७९॥

चौरासी लख सहस युत, सतानवें तेईस ।
सर विमान खित थामठे, देख कहे जगदीश ॥२८०॥

अर्थ—(८४९७०२३) सर्व विमान हैं जे सठ भूमि का के ऊपर

हैं विमान यहां पर देवते आनन्द भोगते हैं। जिन वचन सत्य है ॥२८०॥

सात बीस सय धुर घरा, अन्तिम सब इक्कीस।
भू विमान मिल पिंड सब, योजन सय बत्तीस ॥२८१॥

अर्थ—पहली भूमिका मोटी (२७००) योजनकी हैं दो कल्पों के विमान उसके ऊपर हैं। और ऊचे (५००) योजन के हैं फिर ऊपर दो कल्पों की मोटी भूमि (२६००) योजन की हैं, उसके ऊपर विमान (६००) योजन के ऊचे हैं ऐसे विमान भूमि का दोनों मिल (३२००) योजन का पिंड हैं, ऐसे ही दूसरे २ कल्प (३२००) योजन के हुवे। ऐसे ही अन्त तक गिने तो श्रोडव अनुसार विमान ऊचे (११००) योजन की धरती (२१००) योजन की सब भूमि यह सर्व मिल करके (३२००) योजन की हुई, यह ५ अनुसार विमान का वर्णन है ॥२८१॥

आयु वर्ष पनु ते परत कोडि पुव्व लग कोई।
पाल महाव्रत देश व्रत, सुर विमान पद होई ॥२८२॥
सो औडक नर देव के, सात आठ भव पाय।
केवल दंसण ज्ञान, लहि सर्व शिव पुर जाय ॥२८३॥

अर्थ—८ वर्ष से ऊपरत आयुष्य वाला मनुष्य, एक कोड पूर्व लग साधु वृति पाले अथवा श्रावक वृति पाले और आराधिक विमानी देव होवे वह जीव उत्कृष्टे ७ भव देवता के करे और मनुष्य के ८ भव लेकर केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त कर सिद्ध मुक्ति में अजर अमर पद पावे जन्म मरण से रहित हो जावे ॥२८२-२८३॥

कल्पातीत सुमक्ति चित प्रभु सोवे निज ठाम ।
ध्यावे से वे गुण सिमर, मोक्ष है अभिराम ॥२८४॥

अर्थ —१२ देवलोक से परे सब कल्पातीत देव कहे जाते हैं अहमिंद्र पद है यह देव वहा से ही भगवान की वन्दना स्तुति सेवा भक्ति कर गुण गान तन मन वचन से सदा रत रहते हैं ॥२८४॥

चार जात के स्वर्ग लग, आय करे जिन भक्ति ।
वंदन पूजन थुति करण, कथा सुने चित रक्त ॥२८५॥
चहुं विध सुर तें होत हैं, बल चक्री मर्त्य ।
सुर विमान जिनराज हरि, तीर्थंकर वचवत ॥२८६॥

अर्थ —चार प्रकार के देवता देवी यहा पर भगवंत को वन्दना नमस्कार के लिये आते हैं। १२ देवलोक से आगे नहीं भक्ति करते हैं स्तुति करें कथा सुनें एक चित्त से और भावलोक में आने वालों को कल्प कहते हैं। १२-२-१०-१६-२० भवनपति तक भगवंत के दर्शन को आते हैं देवता गण ॥२८५॥ और आगे (१) भवनपति (२) वान व्यंतर (३) ज्योतिषि (४) विमानी यह चारों ही जाति के देवों में निकल कर बलदेव बने चक्रवर्ति बने, केवली बने, वासुदेव बने, तीर्थंकर ऐसे २ जीव देवलोक से आकर यह पदवी प्राप्त करते हैं। यह वचन जिनेन्द्र देव भगवान के हैं सत्य हैं ॥२८६॥

परमाधर्मी किल विषी, नहि पावे पद यह ।
तिर्य कर हरि ईश वरा, चक्रि केवलि सेह ॥२८७॥

अर्थ —१५ परमा धर्मी और तीन किल्वि विषि यह अठारह १८ जाति के देवता कोई भी पदवी नहीं प्राप्ती करते जिन वचन ॥२८

तिहु लिंगा ते देव गति तावे तीन लिंग ।
नही नपु सक सुर गति विषे, जिन वचने नहि लिंग ॥२८८

अर्थ —३ लिंग वाले जीव देव गति मे पावें नपु सक लिंग वाले जीव देव गति मे नही हैं, ३ तीन लिंग देव गति से बाहर हैं देवगति में तो देवी और देवता यह दो ही लिंग हैं जिन वचन हैं ॥२८८॥

त्रय लिंगी आराधकी, पुरुष लिंग ही पाय ।
बिना अराधक लिंग बिन, सुर गति मे जिय थाय ॥२८६॥

अर्थ—देव गति में जो जीव जाता है, ३ तीन लिंगों मे से निकल कर आराधिक हो देवगति में पुरुष लिंग पावे, और आराधक के बिना दोनु लिंग देव गति मे हैं, वह भगवान का कथन हैं ॥२८६॥

जिन वचने अनुरक्ती चित्त पाले तिम आचार ।
निमल अ स क्लेश ते, पार करे संसार ॥२६०॥

अर्थ —जो जीव जिनेन्द्र देव के वचनों मे अनुरत चित्त रहे तो तन मन से धर्म करे शुति शुद्ध पाले निर्मल चित्त रखे और निरक्लेश रहे वह जीव संसार को परतपार कर सकता है ॥ चार गति बंद कर मुक्ति जावेगा सत्य वचन हैं ॥२६०॥

बहु आगम विज्ञान धर, लहि समाधि गुण गेह ।
आराधिकपद पाय के, ऊ ची गति को लेह ॥२६१॥

अर्थ —बहुते सिद्धा त शास्त्रों का जाण पना हो और ऐसा ज्ञान धारी समधि पावे और गुण को ग्रहन करने वालो हो दोष रहीत शुद्ध आचार पाले और आराधिक पद प्राप्त करके चारों गतियों के चक्र समाप्त कर स्वर्ग से निकल ऊ च गति मोक्ष में जावे ॥२६१॥

सर्व आराधिक इक तथा, सर्व विराधिक हैन ।
देश आराधि विराध वी, चतु विध ज्ञाता वैन ॥२६१॥

अर्थ—आराधीक विराधिक के चार भेद कहे हैं भगवत ने एक सर्व आराधक १-एक सर्व विराधक २-एक देश आराधक ३-एक देश विराधक ४-यह चार भेद ह उा सूत्र म ६ षष्ट म अग मे दृष्टान्त वृक्ष दृष्टान्त जहा पर चार प्रकार की वायु चलती है ॥२६१॥

सहे परिषह क्षमा कर चतु तरे सुख होइ ।
तथा गाही पर ज्ञिण के सर्वाऽऽराधिक सोई ॥२६३॥

अथ —जो जीव क्षमा धारके सब परिषह सहेन करते हैं और साध्वि श्रावक श्राविका जी के शिष्यों के कठन शब्दादिक सम प्रकार से सहेन करते हैं ऐसे ही गृहस्थी के अन्य लिंगी के दुष्ट वचन ताडना तर्जना घन बंधनादिक सहेन करते हैं और तिर्यंचादि का परिषह सहन करते हैं देवता सन्नी आदि से चलायेमान न होवे, यह जीव सर्वाराधिक कहे हैं ॥ १ साधु साध्वी की वचन रुपी वायु ॥२ श्रावक श्राविकों की वचन रूपी वायु ॥३ सनातन गृहस्थी के वचन रुपी वायु ४ अन्य लिंगी साधुओं की वचन रूपी वायु को सहेन करें । ऐसे ही उत्तम दव दव्वा नाम के वृक्ष कुमलाते नहीं है पूर्व१-पश्चिम २-उत्तर ३-दक्षिण ४ की हवा चलने से घबराते नहीं ऐसे ही साधु साध्वी सब की सहे तो आराधिक होगा ॥२६३॥

सहे चतुर विध सघ के, औरन के न सहेय ।
देश विराधिक सो भए, जिनवर वचन कहेय ॥२६४॥

अर्थ —चार प्रकार धर्म संघादि के परिषह सहेन करते और

औरों के न सहेन करे तो वह साधु जीव देश विराधिक है ॥२६४॥

और संघन के सहित हैं, सबो सहे न जेय।
देशा अराधिक दर दशा, भेद तिम नेय ॥२६५॥

अर्थ —और गृहस्ती अन्य निगा आदिक सर्व जीवों के परिषह सहेन करे चतुरविध श्रीसंघ के परिषेह नहीं सहेन करता है वह जीव देशाराधिक और सर्व विराधिक है मुक्ति नहीं ॥२६५॥

निज मति पर मति सघन के, सहन कोई मोई।
सर्व विराधिक सो भए, पूव हीन गुण जोई ॥२६६॥

अथ —आपने धम जैन की निंदा करे औगुण वाद बोले और परमत मार्गो से प्रतिकूल चले औगुण वाद बोले सर्व लोगों से और सब पर क्रोध कषाय करें किसी की भी नहीं सहन करें वह जीव सर्व विराधिक कहा है ॥२६६॥

राग सहित आराधकी, देव विमानी होई।
पदवी पच लिपे यति, वीतराग शिव सोई ॥२६७॥

अथ —सराग सयमी आराधीक निश्चय ही होवे उत्पन्न विमानी के देवताओं म देव पद पावे और पचम पदवी लिपय पदवी पावे साधु और वीतराग सयम पालन करने से मुक्ति गमान होवे, जन्म मरण के दु खों से रहीत होकर अमर पद पावे, सराग संयम से आराधक होवे और वीतराग सयम से मुक्ती पावे, जिन वचन है ॥२६७॥

बाल तपी उत्कट अपि, तप मानी वैरीय।
क्रोधी तपी निमित्त की अमर आर्त में थीय ॥२६८॥

अर्थ—अज्ञानी तपसी नाना प्रकार के कष्ट सहैन करे, भूख इत्यादि सहैन तथा गरमी सर्दी सहन करे शरीर को दमे ऐसे तपी ज्ञानी कहाते हैं परन्तु जीव अजीव पदार्थ का ज्ञान पना रहित हैं और उत्कृष्टि यद्यपि अपने आपने को बोलत हैं वागेजार क्रोध उठे ऐसे तपी हैं और तप के अभिमानी अन्तमरतम में से नेर नहीं जावे और क्रोध के साथ तपस्या करे ज्योतिषी वरष लाम अला भवतावे ऐसे जी करणी करके देव गति मे जाय पर असुर कुमार मे उपन होवे और उच गति मे नहीं जावगा ॥२९८॥

अरिहन्त अरू धर्म का, गुरू उपाध्याय किया ।

निंदा चहु विध सघ की, सुर किल विषिया थीय ॥२९९॥

अर्थ—जो जीव संसार में अधिक दुख पाते हैं उनका कारण यह है कि पापी देव किल विषि उन्हा म जाकर पैदा होते हैं, उन्हा में क्यों उत्पन्न होते हैं ? अरिहन्त देवों की अरिहंत धर्म की (१०) यति धम की १२ श्रावक धर्म की निन्दा करे और सब चारा संघ की जो निन्दा करेगा वह जीव किल विषि देवताओं में जाके पैदा होता हैं, अवर्ण वाद बोले खोटा वचन कहे इस कारण से किलविषि देव बने ॥२९९॥

विकथा हास कतूहले, करे चपलता काम ।

इन्द्र जाल इम दोष धर, कन्दर्पी गुरू ठाम ॥३००॥

अर्थ—चार प्रकार की कथा स्त्री कथा (१) भोजन कथा (२) देश कथा (३) राज कथा (४) करे, विकार सहित हांसी कतूहल चपलता इन्द्र जाल के साथ जादू टुणा मंत्र तंत्र आदि करें दोषादि सहि

करणी के फल वदपी देव मे उत्पन्न होवे और फिर ममार मे भ्रमण करेगा ॥३००॥

मत्र यत्र तत्रौषधि, सुख रस ऋद्धि हेत ।
इत्यादिक दोष सहित, अभियोगी गति लेत ॥३०१॥

अर्थ—मत्र साधन करे, यत्र लिख करे, तत्र द्रव्य मिलान कर औषधि से वशीकरण मोहनादिकारण मैने मिलाने ऐसे दोषो सहित करणी करे, सुख साता स्वाते ऋद्धि वाले रहेन सहेन रस के लिये आपने छदे है परछन्दा त्यागे पर छदे चले नही, वह जीव ऐसे जीव अभियोगी देव पने उपन होवे जन्म ले नोंकरों रा नौकर बनेगा ॥३०१॥

विष भक्षण आयुद्ध करी, जल अग्नि इत्यादि ।
अनाचार सेवी मरे, बधे जन्म मरणा द ॥३०२॥

अर्थ—विष खाकर मरे, शस्त्र मार मरे, पानी कुप म डुब मरे अग्नि में जल कर मरे, इत्यादिक बुरी प्रकार की मृत्यु से मरे अति चार सेवन मरे, अकरण योग नहीं, करणी चाहिय उसे भी करते मरे, ऐसी तसी करे मरता रहे तो संसार मे जन्म मरण करते व बहोत रुलाते रहेंगे ॥३०२॥

तप सयम करणी करे, विषय सुख चाहि ।
धम हीन धर्मा तरो, दु ख लहै भवमाहि ॥३०३॥

अथ—जो जीव तप जप सयम करणी करे, और अन्तस करण मे शब्दादि ५ प्रकार के विषय सुख भोगन कि इच्छा से नियानादि करे तो शुभ गति प्राप्ती करना कठिन है, धर्म से रहा रहै धर्म का अ तराय पावे संसार मभे ॥३०३

किए नियाने तुछ फल, बहु करणी को जाय ।
रत्न अमोलक मूढ जिम, वेचे लघु धन पाय ॥२०४॥

अर्थ —अति कठिन तप क्रिया करणि करे जिसका अधिक फल पावे और उस तप से इन्द्रादि की पदवी प्राप्त करता हैं महाऋषि हो भी पासके बड़ी आयुष पावे ऐसी करणि से बहुतसी पदवी ऋद्धि पासके परन्तु राग भोग रूपादि इच्छा के वास नियाना कर थोड़ी कीमत मे महाकरणी बेचदी नही तो जिसमें महा लाभ सुख मिलता मगर जैसे अहीवरी ने कोड़ी बदे करोड़ों की जवाहरत बेचदी ऐसे ही निदान करने वाला होता है ॥२०४॥

विषय कषाय विकार वस, फोडे लब्धि जो कोइ ।
प्रायश्चित दंड लिए विना, नहीं आराधिक होइ ॥२०५॥

अर्थ —जो साधु श्रावक तपसी जप तप के प्रभाव से कोई लब्धि होती २८ में से अगर विषय भोगों के वास और कषाय नव नो कषायों के वस और राग द्वेष विकारों के वस कोई लब्धि फोडे सो आराधिक नहीं होगा बिना प्रादिचयत लिये जिन वचन सत्य है ॥२०५॥

तपस्या करणी बहु करे, काम लालसा तीव ।
गणका दवी मोहि देवी माही गति, बहुसुर भोग करीव ॥२०६॥

अर्थ—जो कोइ स्त्री तप जप नेमादि करणी करें और चित्त मे लालसा विषय विकार राग रग काम भोगों की हैं मिलते नहीं चाह चाहेत हैं वह स्त्री देवगति में जाके, गणका देवी वैश्या बनेगी उसे फिर देव भोगेंगे ॥२०६॥

जिह इच्छा संतान की, बाल गोशाल खिडाय ।
बहु पुत्तिया तिम सो भवे, करणी का फल खाय ॥३०७॥

अर्थ—जो स्त्री कोइ तपस्यादि करणी करी और दिल में इच्छा संतान की है और लोगों के बालकों को खिलावे रिमावे उनके साथ बहुत प्यार करे सो वह तपस्या करे जोर से देव गति में जावे यहा पर जाके बहुत पुत्तीया नाम की देवी बनेगी वैक्रिय लब्धि से अनेक बालकों के रूप बनावें और लड़के लड़कीया और देवों को नाटक दिखावे ॥३०७॥

क्रोध तपी आयुध पणे, माने वाहन होई ।
कपटे सभा निरादरी, लोभ ऋद्धि गेइ ॥३०८॥

अर्थ—क्रोध के साथ तपस्या करे, तो देव गति मे जाके शस्त्र पने देव होवे जैसे सुदर्शन चक्र श्रीकृष्ण महाराज पास था, सुदर्शन चक्र मान के साथ तपस्या करे सो देव गति में जाके वाहन बने, गज घोडादि इन्द्र महाराज के सवारी देने के लिये हाथी घोड़ा बने जैसे ऐरावत (हाथी वमदवेत) गज बनाया तापस का जीव खीर खाने वाला कार्तिक शेठ का जीव इन्द्र बना सवारी लेने वाला दो सागर जो अज्ञान पने से तप करते हैं वम पशु देव बनेंगे और जो कपट के साथ तपस्या करते हैं उनका सभा मे निरा.री होती हैं आदर समान नहीं पाते हैं । और अपने जो लोभ लालच के साथ जो तपस्या करता है । वह देवगति में देव बने उनको ऋद्धि के मालिक बनेगे नहीं, यहा पर भी वहा पर भी देख २ झुरेंगे बहुत ही थोडी ऋद्धि पायेंगे आके मातलोक में सत्य है वचन अरिहंत देवजी के ॥३०८॥

मुख विगार भडे हुये, तप करणी के साथ ।
भड देव में उपजे क, बधे कर्म आनाथ ॥२०६॥

अर्थ —मुख से बुरा बोले गाली देवें ऊंचा नीचा हंसे हांसी मसकरी करे अप शब्द (गंदे) मखोल करे दूसरे को भंडे और साथ ही तपस्या भी करे इसी प्रकार की करणी करने वाला भाड देवों की देव गति आपावे फिर पर दोप बहुत कमावे और कर्म चिकने घने बाधे और अनायादि की योनि पावे, दुःख बहुत भोगने पडेंगे ॥२०६॥

इत्यादिक दोपे करी, नही आराधिक होई ।
दोप रहित मुनि अनुवृत्तो, आराधिक पद सोई ॥२१०॥

अथ —ऐसे दोपों को लेकर और भी अनेक विधि के दोप हैं और जो दोप सहित तप १ जप २ नेम ३ वृत ४ दय ५ पौषद ६ कोइ पच्चक्खाण ७ वृत ८ महाव्रत ९ इनको बिना नेम द्वेप से निन्दा करके औरा के अवगुण लेके पाल रहा है ऐसे जीव आराधिक नहीं होते है और जो निर्दोप साधु श्रावक के ५ महाव्रत पालन करते है साधु के और अनुव्रत पाला करते है श्रावक के दोप रहित ऐसे जीव आराधिक होते हैं ॥२१०॥

आराधिक नर भव लहैं, ऋद्धि धर्म सयुक्ति ।
सात आठ भव भोडके, पावे अविचल मुक्ति ॥२११॥

अथ—आराधिक देव काल करके मनुष्य गति में आवे और ऋद्धि धन धान्य धर्म दान शील प्रेमादि सहित उत्तम ऊंच पद मनुष्य होवे ऐसे ७ भव देवता के करें और आठ भव मनुष्य के करे संसार के सुख भोगकर ८ पालन करके केवल ज्ञान केवल

दर्शन पाकर प्रधाय पद शिव का पावेंगे ॥३११॥

भक्ति करें भगवन्त की, दर्शन वन्दन गाय ।
चार जात रचना लगे, लेवे प्रभु गिर आय ॥३१२॥

अर्थ—१२ कल्प देवलोक से चार जाति के देव भगवान की भक्ति करते हैं और दर्शन करें नमस्कार करें गुण ग्राम कीर्ति गावें भगवत पास (समपि) आवें सेवा भक्ति करें (और आगे ॥३१२॥

नाटक गीत रचाय, सुख वाणी जीनराज की
नर भव शुभकुल पाय, धर्म सहित सर्वत्र लहै ॥३१३॥

अर्थ—भगवान की भक्ति देव करें, नाटक नृत्य गायन करते हैं अरु ३२ प्रकार के नाटक भाव गीत गावें भगवत का यश बहुत करें अनेक जन्मों के संचित कर्मों की निर्जरा करते हैं कर्म खपावें ऐसी भक्ति का फल परलोक में मनुष्य जन्म पावें उत्तम कुल में आवें धर्म संयुक्त ऋद्धि सिद्धि सम्पदा पावें ॥३१३॥

उत्तम सुर वर सोय, जो जिन धर्मी भक्त चित्त ।
जिन मग द्वेषी जोइ भव सागर में सो भूमें ॥३१४॥

अर्थ—जो उत्तम प्रधान देव हैं, वह देव भगवत देवाधिदेव की भक्ति चित्त से करे और जिन धर्म का रागी हो जिन मार्ग दया सत्यशील संतोषादिक गुणालंकृत का प्रेमी प्यारा हो, सो देव चार गति संसार रूप में भ्रमन करता पड़े मुक्ति ननदिक हो यह वचन जिन के सत्य है ॥३१४॥

ऊंच नीच बहु भांत, रचणा कहीए देवकी ।
सुनो भविक चित्त शांत, धर्म साध शुभ गति लहो ॥३१५॥

अर्थ —सुर देवों की क्रीड़ा कहतूल रचना ऊच नीच बहुत प्रकार से कही है। सोई भव्य जीवो तुम सुनो चित्त लाकर के सोचो जो घोर धर्म दया दिसा येगा वह जीव उत्तम पदवी को लेवा है ॥२१५॥

कबहुं सतोगुण ठाण, कबहु रजोगुण में रमैं।

कबहु तमोगुण आण, करैं कर्म बहु भात के ॥२१६॥

अर्थ —कभी किसीम में ध्यादिक सतोगुण में बरतते हैं। कभी किसीम मय व्यवहार रचणा रजोगुण में रमते हैं कभी किसीस मय क्रोधादि युद्ध क्रिया शास्त्र चलावण तमोगुण म बहुत खुश रहते हैं इस प्रकार के शुभाशुभ कर्म करते रहते हैं ॥२१६॥

कबहू तिय साथ कलोल करै, कबहू नृत्य गत विनोद चहै।

कबहू चाहिराज सभा विगसे, कबहूं रिपु सोरण भूमिदहैं॥

प्रभु साथ सपूरण भक्ति करी जोर सु छन्द उचार कहै।

मिल मित्र हसे हित रीत रमैं, इमभांत दिवो निश मोदलहैं ॥२१७

अर्थ —देवता देवलोक में किसी समय अपनी ललानों के साथ हास विलास करते काम भोगों में रम जावें हैं और कभी २ नृत्य नाचते में नाटक करने में गीत गाने में बजन बजाने में इत्यादि क्रीड़ा करते में आनन्द मानते हैं, कभीयान सभा में सिंहासन ऊपर तिष्ठ बैठ होट मोके बहुत खुश होते हैं कभी शत्रु के साथ युद्ध भूमि पर युद्ध करते हैं और नाना प्रकार के परहरण चोरी करें कैदक रम रुद्र रूप दिखाते रिष मरा कोध करे ऐसे २ भी देव गति में देवता होते हैं, चोरी आदि करने वाले, कभी भक्ति रूप भगवत की भक्ति करते हैं। स्तुति महिमा करते हैं अरु अनेक प्रकार के स्तोत्र छन्द श्लोक

काव्य सुनावे कभी आपस में मित्र मित्रों मिले हर्से रसें स्नेह करे बहुत ऐसे आपस में हर्ष मनाव नित बचन है ॥३१७॥

कितहु नट होकर नाचत है, कितहु बरजत्र बजावत हैं।
कितहू रूप रूप करी हिनके चपला गतिवेग जनावत हैं ॥
गज रूप करी गरजाट करें, सिंहनाद करी हरि आवत है।
फणिधार फु कारकर वरहि, बहुभांत कि नाच दिखावत हैं ॥३१

अर्थ —किसी जगह पर देवते नाटक रूप करके नाटक कर नाचते हैं कहिं पर अनेक प्रकार के यन्त्र बजाते हैं, कहिं पर घोडे का रूप धर बहोत शीघ्र चलते दौपडावें, कहिं पर हाथी का रूपबना कर गर्जते हैं कहीं पर शेर का रूप करके समुत्रन आते है और कहिं कहिं पर तुरंग कुरंग गज गोमृगादि रूप धार कर औरों को डरावें कहिं पर साप काल नाग का रूप बना फु कार करता आवे, कहिं पर मोर का रूप करे और फणीधर सापों को भैगाय फिर खुसी में आकर नृत करता हैं और अपनी शक्ति भी दिखाता हैं कलोल भी करता हैं, यह बातें सब अपने पूर्वा पुन्योदय से योग मिलता है ॥३१८॥

कितहु असवार बने पर के, कितहु बिन वाहण धावत हैं।
कितहु हथयार बने सुर के, कितहु हथयार चलावत हैं ॥
कितहु त्रिय ओर चले पुरुषा कितहू रूचि स्रोत्रिय आवत हैं
कितहु प्रश्नोत्तर वाद कछु सुर खेल सिद्धान्त दिखावत हैं ॥३

अर्थ —कहिं पर देवता असवार होते हैं दुसरे देवों पर कहीं खुद देवों को चढावे और आप वाहन बने, कहिं पर देवों का देव खुद शस्त्र बनता हैं, और कहिं पर आप दूसरे देवों को शस्त्र बना दूसरों

पर चलाते हैं, कहीं पर देवता देवी को देख पिछे भागते हैं, कहि पर देवी देवता को मन तन से पिछे आती है खुश होकर और दासी कहें आशापुरों कहि पर देवी देवते आपस मे वाद करें कहि पर देव देव आपस में चर्चा करते हैं, कहि पर देवी देवी आपस म प्रश्नोत्तर करती हैं, और सर्व आपस में जय पराजय करते हैं, परन्तु आपने २ सिद्धान्त सुनाते हैं ॥२१६॥

कितहु ललना सुचित त भई, पिय के पग शीश छुहावत हैं।
कितहु रिसवार गुमान भरी, पिय आतुर होई मनावत हैं॥
कितहु लड़के पिय खेलत हैं हर्षे निर्पे मुसकावत हैं।
इनही नतु भात कलोल करे, रपणा गुणवत सुनावत हैं॥३२०

कभी तो देवी आपने देव इन्द्र के पर्गों में विनय से शिर देती हैं अरु कभी मिठे २ विनय से शब्द बोलती हैं कहती हैं हे स्वामी आप मेरे पति देव है। और तन मन से भाव भक्ति भी बहुत करती हैं बार २ पति के चरणों के ऊपर आपना शिर रखती हैं इन्द्र महा राज को मोह लेती हैं कभी आपना रूप योवन लावण्य गुण चतुराइ दिखाती हैं फिर इन्द्र आनन्द मानता है और कभी २ देवी अभिमान में आजाती हैं तो स्वामी को बड़े कठोर वचन कह रूस जाती हैं फिर इन्द्र महाराज के साथ बोलती भी नहीं गुस्से में रहती हैं फिर इन्द्र महाराज उसके बिना दुखी हो जाते हैं और कामातुर हो पावों में सिर दे इन्द्र आपनी देवी को मनाने के लिये अरू कुसामदे वचन बालें लाल पाल कर उसे मानाते हैं। उसका विनय से गुमा दुर करते हैं, कहि पर आपस में देव देवीया रल मिल क्रीडा करते हैं बहुत

खुशी मनाते हैं, और आपस में नयन मिलाय विषय करे मुखो मुस
राते हैं इत्यादिक अनेक प्रकार के कलोल करें ऐसी दय रचना गुण
जन सुनाते हैं ॥३२०॥

कितहु परखे छल सोमुनि को, धर रूप पिशाच डरावत हैं
कतहु कर जोर लगे चरणी, निच सो अपराध खिमावत हैं
अति रीझ धरी सम सेवक री मुनि के गुण ग्राम दिपावत हैं
कमहु घर औघ लखे तपसी निज ठाम नमे गुण गावत हैं ॥

अर्थ —कहि पर देखते ऋषिश्वर मुनि महाराज की सत्य
दृढता देखने के लिये परिषहा देवें ई कारण हेतु के श्रावक प्रम
हेतु छल कपट करते हैं ३ रूप से परिषाह लेवें एक तो देव रूप
यक्ष भूत पिशाचादि रूप धनावे दूसरा सर्प नकुल मुसक डास नि
,सिंह चित्ता निघाग बाग रिछ नाग हाथी और जरिले जानवरादि
धनावें, तीसरा खड्ग नेजा भाला त्रिशूल तीर बरिच्छी फरसु अ
लेकर कोई रूड मुंड मुख दद्र रम रूप निंदय आके डरावे, और
के है ? साधु अगर तु धर्म नहीं छोड़ेगा तो तुझे मारूगा, तो हे स
धर्म में दृढ रहना भय न खाना, तो सम्यक् दृष्टी देव विचारे यह स
दृढ है धन है। तो वह देव अति प्रसन्न हो अपना अपराध क्षम
खमाते हैं हाथ जोड़ ध दना करते हैं और साधु मुनिराज के चरणों
ऊपर आपना सिर धरते हैं स्तुति भक्ति करते हैं और सेवक बन अ
भाव धर खुश हो मुनि महात्मा के गुण दिपावें गावें देव देवी
पर साधु को परीक्षा करते हैं कहि पर चर्णो में पढते हैं कहिं
मुनियों को डराते हैं, कहीं पर माफी मागते हैं, कहिं पर मुनिराज

सेवा करते है कहि पर सतों के गुण गाते हैं कहि पर तपस्वियों के दर्शन को जाते हैं सत्य हैं ॥३२१॥

सुर सगम तीर्थ थान कहू ऋषि ज्ञान जगे निर्वाण समय ।
कितहु तिथि अष्टम चौदस पूर्णम् मास अमावस पर्वणमें ॥
नृत गीत उठे भट युद्ध मचे मत वाद जगे कितहु मग में ।
जिन जन्म महोत्सवि मेरु लगे वर दीप नदीश्वर माहि रमैं ॥३२२

अर्थ —देवताओं के इक्ठे होने का समय बताते हैं सारे देव आने वाले किस समय पर आते हैं, एक तो जिस समय किसी महात्मा को केवल ज्ञान होता है तो वह देव केवल महोत्सव करने के लिये आते हैं, और दूसरे निर्वाण के समय पर भी आते हैं, तीसरे अष्टमी के दिन चोथे १४ के दिन, पचमे पूर्णमासी के दिन और छठे अमावस्या के दिन सातमें कोइ पर्व के दिन आते हैं। आठमें अरिहत देव जी के समुख नाटक गीत नाच वाजत्रादि के बजाने के लिये आते हैं, और नवमे कोइ महा संग्राम युद्ध होता होवे तो देव देखने के लिए आते हैं, कहि पर मत भेद वाद विवाद होता होवे तो भी उसके हार, जित्त देखने सुनने के लिये भी आते हैं देवता दशामें जिनेन्द्रदेव के जन्म उत्सव करने के लिये देवता देव इन्द्र मेरु पर्वत ऊपर आते हैं ११-१२-१३-१४ मे पाच कल्याणों के मोह छ्न करने के लिये आते हैं। १५ में प्रधान नदीश्वर द्वीप में आके ८ दिन का महा उत्सव मनाते हैं ॥३२२॥

जिनराज महोत्सवि माहि करैं, पति के उपजे वर बादल की।
वर्षा शुभ गध मई जल की, फूल २ सुगन्ध मई

कलधौत मणी रज तो तम की पट भूषण की मुक्ताफल की।
सुर दुदंभि नादकरे हितसो, दमही दिम माहि प्रभा झलकी।।३२३

अर्थ —श्री जिनेश्वर देवों के महोत्सव महिमा सुर देवता करते हैं, और आपने राने देव इन्द्र के उत्तपात (पैदा होने) पर महोत्सव भी करते हैं लेकिन सुन्दर सुगन्धी वाले बादल करके रचणा रचके अनेक प्रकार की वर्षा वर्षाते हैं पानी भी सुगन्धी वाला होता है जैसे गुलाब इलायची मोतिया करणादि फल फूलादि की सुगन्धि पाच वर्ण सहित महा सुगन्धी वाले प्रधान पुरुषों के पत्तों की सुवर्ण मोती की मणि की रूपे की वस्त्रों की आभरण भूषणों की उत्तमोत्तम मोतीयों की ऐसे अनेक प्रकार से वर्षा करते है देवता और साथ ही देव दुदुंभि बजाते है अति प्रीति के साथ मोहत्सव भी करते है देव देवीयां और उनके शरीर आभरणादिका प्रकाश भी उद्योत दशों ही दिशा प्रभा फैल जाती है जिसमें ७ भद है सुन्दर रस १ शिंगार रस २ हास रस ३ दानरस ४ कामरस ५ बानरस ६ निहारस ७ इस प्रकार से देवता आपस मे धर्म की महिमा करते है, यह वचन जिनेन्द्र देव का है।।३२३।।

कितहु परे औषध गध मई, कर चूर्ण देन उडावत हैं।
कितहू परे रत्न मई करछा लिय उत्तम धुप धूखावत हैं।।
कितहु परे मंद लई निध सो नभ माहि सुरेल दिखावत हैं।
कितहु सुर वृन्द घणे हित सो जयकार सु शब्द बुलावत हैं।।३२४

अर्थ—कहिं पर देव देविया बहुत बढिया औषधि को चूर्ण की तरह पीस अकाश में उड़ा देते है कहिं पर घणे कीमत के रत्नों

ढांकि घना कर उसमें उत्तम सुगंध धूप धूपाकर सारे फेरते हैं
कहि पर देव देविया आपस मे प्रधान गेंद लेकर खम खेल
हैं और कैसी शीघ्र गति से गेंद ले फौरन आसारा मे फैंक
हैं फिर आपस म चिलाते झप्पा झप्प पकड़ लेते हैं कहिं पर
सारे देव देविया मिलकर सर्व आपस मे ऊंचे स्वर से जय जय
शब्द बुलाते हैं स्तुतिगुण गान करते हैं भगवत ॥२२४॥

तीर्थ नीर सुकुंभ भरी इक खीर समुद्र सुलावत हैं।
लिला निमला जल गंध मई, प्रभु मजन हेत अनावत हैं ॥
औषध मेरु गिरि मिलसो वर चन्दन आदि मगावत हैं।
दु वर्ण सुपुष्प सुगंध मई, वन चन्दन आदि सुल्यावत हैं ॥२२५

अर्थ —एक एक देवतो मगध वरदाम विसालादिक तीर्थों से पानी
कुंभ म वरतन भर कर लाते हैं और कैइक देवता क्षार समुद्र (समुद्र)
से पानी कल से भर कर ल्याते हैं और केइक देव गंगा सिंधु आदि
उत्तम नदीयां का जल अति निमल महा सुगंधी वाला भगवन्त स्नामि
स्नान कराने के वास्ते पानी ल्याते हैं आपने आप लाते हैं औरा
भी मागते हैं और प्रधान औषधि सुमेरु पर्वत के ऊपर पहस्य आदि
नों से ल्याते हैं, घडीया बावना गोसी चन्दन लगाने के लिये लाते
कैइक देव बहोत रंगो वाले सुगन्धी वाले फूल लाते हैं सुन्दर नन्दन
आदि से माला और सुगन्धे वास्ते सिंगार आदि के लिये और भी
बहोत सामी लाते हैं ॥२२५॥

मरदग सु झालरु भेरि तुरी ना[illegible] पटन झांझर की।
घण घोर,महा शिव दु दुभि शीघ्रमार मई पुत दक्षण की।

रस हास सिंगार सुवीर सजे रघण रस अद्‌भुत लक्षण की ।
अति मोदत देव महोद्यव हैं प्रभु भक्ति करे शुभ पक्षण की ।।३

अर्थ—मृदङ्ग (तबला) बजावें भालर भेरी तुरी रसनाई इत्या-
दिक बाजों की धूनी होवे नरसिंह घटे शरा बजावें उनके शब्दों की
ध्वनि दुंदुभि नोबत नगारे छैंण ढोलक बाजे उनका महा शब्द होता
था साथ हीं उनके अनेक देवी देवताओं के जयकार रूप ध्वनि उच्चा-
रण की जाती थी जहा पर राग रंग होते हैं वहा पर यहा का
अवश्य ही होते हैं हास्य रस सिंगार रस का नरम वीर रस काम रस
सिंह रस इस प्रकार से कार्यो की अधिक हैं। ऐसे रसों का वहा पर
समागम हैं ऐसे २ विषयों में फँसकर भी फिर धर्म में तल्लीन हो
महोद्यव कर भगवत की भक्ति करते हैं ॥३२६॥

सब द्वीप समुन्द्र असख्यत मैं, लघु मध्य विषम लखान भई ।
इक योजन लाख प्रमान अयं, वर जंबु सुदीप सुनाम थई ।।
जगती पर वज्र मई गिरदे, चतु द्वार चहूं दिश शांत भई ।
विजये विजयत जयत तथा, अपराजित नाम सदीव लई ।।३२

इस भूमि पर असंख्य द्वीप समुद्र हैं सब द्वीप समुद्रों के बीच में
मध्य भाग में सब से छोटा प्रमान एक लाख योजन का लम्बा चौड़ा
है चारों तरफ और उसकी परधि चक घोफेरे ३१६२२७ योजन पौने
३ कोश १२८ धनुष्य १३॥ अंगुल कमेरी इस तरह से जंबू द्वीप की
सीमा को पाता है और इसके गिर्द एक कोट हैं वज्र का रत्न मई है
जिसका नाम जगती हैं। वह जगती ८ योजन की ऊंची १००० योजन
की ऊंडी भूमि मे गियो हैं और जिसके चारों दिशा में चार द्वार हैं।

नाम पूर्व विनय १ दक्षिण विनयत २ पश्चिम जयन ३ उत्तर अपराजित ४ इनी नाम पर इनके स्वामी रचक हैं देव बड़े कान्ति वाले हैं ॥३७॥

इमदीप विषय वर मध्य विषय गिरि मेरू सुजोजन लाख तणो
तिम पूर्व पश्चम में विराजत महाविदेया जिन धर्म घणो ॥
भरयो दिस दक्षण उत्तर तो मम ईरवत्तों सब साच भणो ।
सुर रवा म अणादिर दीप तणो तरु जयू सुदर्शण वासमणो ३८

अर्थ —इस जंबू द्वीप के मध्य भाग मे प्रधान पर्वतों में पर्वत सुमेरु पवत हैं जो के एक लाख योजन का ऊचा उसके ऊपर चूलिका है उस चूलिका के ऊपर १ महेन्द्र ध्वजा है और सुमेरु पर्वत पर चारों वनों से सुभायमान है सबसे प्रथम सम भूमि पर मेरुके चारों तर्फ भद्रशाल वन है (१) फिर मेरू पर्वत के ऊपर जाके चारो तर्फ नन्दन वन हैं (२) आता है, फिर आगे ऊपर जाके, सुमानस वन आता (३) फिर ऊपर आगे जाके मेरु के सिखर पर पडग वन सोभा पाता है (४) इस पडकवन के मध्य भाग मे मेरू पर्वत की चूलिका सोभाती हैं और मेरू पर्वत के पूर्व दिशा म पूर्व महा विदेह क्षेत्र हैं मेरू से पश्चिम दिसा में पश्चिम महा विदेह क्षेत्र है, पूर्व महा विदेह क्षेत्र के मध्य भाग में हो सीता नदी पूर्वागामनी विजय दरवाजे के निचे से होकर लावण समुद्र में जा मिली और इस सीता नदी ने महा विदेह क्षेत्र के दो भाग कर दिये गये महा विदेह क्षेत्र के १६ विनये है नदी ने ८ विनय दक्षिण की तर्फ होगये हैं। और ८ उत्तर की तर्फ होगये हैं और इसी तरह से पश्चिम महा विदेह क्षेत्र भी समझ लेना चाहिये

जिसमें उन क्षेत्रों के दो भाग किये शीतो वाहनी नदी ने और बराबर पर्वत के अन्तरे में हो पश्चिम दिशा में जयंत नाम के द्वार के निचे से होकर लवण समुद्र में जा मिलती हैं, अनेक नदी लेकर पश्चिम महा विदेह क्षेत्र की भी १६ विजय हैं दो भाग नदी ने कर दिये ८ विजय दक्षिण की तर्फ होगये और ८ विजय उत्तर की तर्फ होगये, एक २ विजय में छै २ खंड हैं एक २ खंड में तीर्थ कर चक्रवर्त वासुदेव बल देव प्रति वासुदेव जिनेन्द्र देव का धर्म साधु साध्वि श्रावक श्राविका समदृष्टि उत्तम पुरुष आदि २ अनेक आत्मा होगी और वहां पर सदा चौथा काल होगा ऊंच गति के अधिकारी हैं ५०० धनुष की औगाहणा लेकर जीव विशेष हैं कोड़ पूर्व वाले जीव बहुत हैं और ५मी गति जाने वाले जीव बहोत हैं। "अब क्षेत्रों का हिसाब है" मेरु पर्वत से दक्षिण की दिशा में विजयंति नाम का द्वार है उस द्वार की तर्फ पास ही भरथ क्षेत्र है भरथ क्षेत्र पूर्व पश्चिम लवान हैं दक्षिण उत्तर चौड़ा है जंबूद्वीप प्रमान १ लाख योजन का लम्बा चौड़ा है जिसके १९० भाग किये जायें तो तथा तकसीम करीये तो जितने २ भाग हीसे में आयेंगे सबके १ भाग का तो भरथ क्षेत्र है। दो भाग जितना चूल हेमवंत पर्वत हैं। ४ भाग का तो हेमवत क्षेत्र है। ८ भाग का जो महा हेमवत पर्वत है। १६ हिसे जितना हरिवास क्षेत्र हैं, ३२ भाग का निषढ पवत हैं। ६४ भाग का महा विदेह क्षत्र है। ३२ भाग करै इतना बड़ा नीलवत पर्वत हैं। १६ भाग रम्यक् वास क्षेत्र हैं। ८ भाग जितना रुक्मी पर्वत हैं। ४ भाग इरावर्त क्षेत्र हैं २ भाग का शिखरी पर्वत हैं एक भाग जितना इरावत क्षेत्र हैं एक भाग ५२६

योजन और ६ कलाउ पर हैं। एक कला का हिसाब १ योजन के १६ भाग करें तो ६ भाग का नाम छै काला हैं यह भरत क्षेत्र ५२६ योजन ६ कला का लम्बा चोडा। जिसके मध्य भाग में ५० योजन का चौड़ा वैताड़ गिरि पर्वत हैं जोके लवण समुद्र की जगती कोट के साथ आ मिलीं हैं वैताड पर्वत और इस करके भरथ क्षेत्र से दक्षिण दिशा मे दक्षिणार्द्ध भरथ क्षत्र हैं क्योंकि गंगा अरू सिंधु नदी ने भाग ३ कर दिये वैताड़ पर्वत के आधा भरथ उत्तर की दिशा में हैं, आधा दक्षिण दिशा है जो वैता पर्वत से दक्षिण भरत क्षेत्र हैं मध्य खंड में २४ तिर्थ कर होत है १२ चक्रवर्त्ती होते हैं ६ नव वासुदेव होते हैं ६ बलदेव होते है ६ प्रतिवास देव होते है, साधु साध्वि श्रावक श्राविका अनेक पुन्यवान उत्तम पुरुष होते हैं जैसे भरथ क्षेत्र का कहा, वैसे ही उत्तर दिशा मे ऐरावत क्षेत्र समजना और उत्तर दिसा मे अपराजित नाम का द्वार हैं जिसके पास इरावत क्षेत्र हैं जिसका वर्णन भरथ क्षेत्र जैसा जाण लेना चाहिए। अब आगे महा विदेह क्षेत्र से दक्षिण दिशा की तर्फ निषढ पर्वत है और की तर्फ नीलवंत पर्वत हैं निस निषढ अरू नीलवंत पर्वत मे से गज दंते निकले चार २-८ गजदंते हैं ४ गजदंते पर्वत मेरू साथ आमिल गये है और दो गजदंते के अतरे दक्षिण दिसा देव कुरूक्षेत्र की तर्फ गये दो गजदंते उत्तर दिशा उत्तर कुरुक्षेत्र की तर्फ गये है यह दोनु क्षेत्र युगलियों कहै जन रत्न मई सुदर्शन नामे वृक्ष हैं और परिवार सहित जंबू वृक्ष के उपर जंबू द्वीप का स्वामि है और अणाढिये नाम से देवता का वहा पर वासा हैं रहने का यह देव बड़ा पुन्यवान हैं अपने अर्थे कर्म का फल भोगता और सदा आनंद से रहते हैं ॥२८॥

६ दीप सपूर्णचद जिसो इनको लवणोदधि ही वलिया।
विर जोजन लाख विषम जल, विच है दगमाल जिमो दलि
दस सप्त हजार उचत मई, नव पच हजार दमा छलिया
छुठिया लवणोधि नामा दिपै रचना घर सुकृत ही फलिया॥

अर्थ —यह जंबू द्वीप गोल है जैसे पूर्णमासी का चन्द्रमा
कलां से पूर्ण होता है ऐसे ही जम्बूद्वीप गोल है चन्द्रमा की तरह
जिसके चारू तर्फ लवण समुद्र ने घेरा हुआ है जो के २ लाख यो
का चोडा है चुडी के आकार घेरा हुआ है लवण समुद्र के मध्य
मे इक उदक पानी की माला है, जिसका कारण अपने आप
अन्दर बाहर दोनु तरफ गिर जाता है, वोह जल माला १७००० यो
की ऊंची चढकर पानी की माला निचे ढल जाति हैं और यह
१००० योजन सम भूमि के नीचे से ऊपर १६००० योजन ऊपर
जाती हैं ऐसे १७००० योजन है माला लवण समुद्र के मध्य भाग
पताल कलशे हैं चारों दिशा में चार बड़े और छोट हैं उन कलशों
से जल पानी निकलता है फूहारे की तरह यह पानी ऊंचा दोनो
ढल जाता है और वह उदक माला १०००० योजन की चौडी
है और जिस वक्त यह पानी ऊपर को उच्छलता है उस वक्त
समुद्र का स्वामी स्वस्थिति नाम देवता है वह देव हर वक्त सेवा
रहता है रत्नों के वज्रमय कड्छे लेकर खड़े है और उनके पास
हैं उन्हों का पुन्य भी प्रवल अधिक हैं ॥३९॥

लवणोदधि को वलिया वर घातकि खड विथार तिमो दुग
तिर मेरू गिरि चौसाठ विजय विच है भरथो तिय उत्तरा

इम धात की दीप परैं जलधी जिह नाम कहावत काल
तिह ते पुन पुष्कर द्वीप इमे दुगुणो २ विस्तार भयो ॥

अर्थ—लवण समुद्र को चारों तर्फ से धात्री खंडद्वीप ने
लिया चौडी चुडी के आकार से और धात्री खंड द्वीप ४ लाख
का चोड़ा है। जिसमे दो सुमेरू पर्वत हैं ८४००० जोजन के
जोके जंबूद्वीप का सुमेरू पर्वत है उसके एक तो दक्षिण की तर्फ
पर्वत है धात की खंड का और दूसरा जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से
की तर्फ हैं धात्री खंड का मेरु पर्वत हैं, एक उत्तर में एक
पर २ मेरु पर्वत से ३०–३० विजय दोनों पर्वतों ६० विजय हैं
धात्री खंड में दो भरथ हैं दो ऐरावत क्षेत्र दोनू भरत
महापुरुष होते हैं और भी अनेक दोनों ऐरावत क्षेत्रों में
पुरुष होते हैं और भी अनेक धात्री का खंड को घेरले
आकार कालोदधि समुद्र हैं ८ लाख योजन का घेरा
कालोदधि समुद्र को घेरा देने वाला चारों तर्फ पुष्कर द्वीप है
योजन का चौड़ा हैं जैसे धात्री खंडद्वीप का कहाहै
भी समझ लेना चाहिए आगे ऐसे ही
जिनेन्द्र देव की वाणी हैं ॥२२०॥

तिह पुष्कर दीप तदार्ध विर मेरु
नित ईरवतों भरथो हित में
इह द्वीप दुसार्द्ध दुमिधु युते नरसे
इहतांई घणादिक खेचरणा सुरजाति त्रिलोक लहीं

अर्थ—उस अर्ध पुष्पर द्वीप मे दो मेरु पर्वत हैं

खंड द्वीप दोनों मे ६४ विजय हैं दो भरथ दो इरावत हैं। इन देशों म तीथ करा देवादिक पद के धारक पुरुषों की उत्पत्ती जहां है यहा निश्चय हैं और इस अध पुस्कर द्वीप के परलेपार एक पर्वत है पुढी आकार वाला है उसका नाम मनुष्योत्र पवन है जोके मानुषों म प्रधान हैं उसके परे कोइ मानुपन ही हैं और दूसरे नाम से ढाइ द्वीप भी कहते हैं मनुप क्षेत्र भी कहते हैं और समय क्षेत्र भी कहते हैं मुक्ति इसी क्षेत्र से लेते हैं। यह क्षेत्र ४५ लाख योजन का लम्बा चोड़ा हैं इस ढाइ द्वीप के अन्दर गजना लिसकाना बादला मेघ होना सुभा वर्षना कही २ रज घातादि कदामह होना चन्द्रमा सूय के प्रहण का होना चन्द्रमा सूय मह नक्षत्र तारों का चलना और शुभाशुभ फल का बतलाना ढाइ द्वीप से बाहर नहीं हैं फल ॥३३१॥

जिह बाहर पावक काल सुकाल भवे नर उत्पत्ति काल करै ।
जिहा ठांइ महा व्रतधार मुनि व्रत द्वाम्म श्रावक धर्म करै ॥
नर रूप जिनेश्वर चक्रपति बल केशव केशव जेह हरे ।
सर्वज्ञ मुनि युगलादि विराजित सो नर क्षेत्र सुबुद्धि भरै ॥३३२

अर्थ —इस ढाइ द्वीप क्षेत्र मे बादर अग्नि काय रहति हैं इसके बाहर नहीं हैं और इस क्षेत्र मे काल सुकाल होवे, मनुष्य मात्र जन्मते हैं मरते है और इसी क्षेत्र मे साधु साध्वि श्रावक श्राविका भी हैं तीथ कर चक्रवर्ति वासुदेव बलदेव प्रति वासुदेव राजा मंडलीक राजा केवल ज्ञानी युग लिये और नर नारि नपु सक उच नीच मनुष्य योनि मे अनेक पैदा होंगे इस क्षेत्र म और ढाई द्वीप से बाहिर नहीं होते हैं, यह सर्वज्ञ के वचन हैं ॥३३२॥

देव लिया फिर सावधान होते हैं आपने नाम सुधारने के लिये त्या
होजाते हैं और फिर श्रावक के ११ व्रत ग्रहण कर सकते हैं और ए
१२ मा व्रत नहीं है क्योंकि द्रव्य से दान नहीं दिया जाता और तपस
अधिक करे कर्मो को खपावें अंत समय मे संथारा करें ऐसे जीवों की
गति ८ मे देवलोक तक जासके है मर कर और चार पदवि में से
कोई पदवि पावे ऐसा भगवान कहते हैं। द्रव्य १ देव भाव देव २ सम
दृष्टि ३ इन्द्र की पदवी पाव ॥३२४॥

तिर्यंच पचेंद्रिय सनी असनी अकाम सह निजरा कि फन्सी।
गति भवन पति वन देव विषय थिति ओछक भाग असल्ल।
भवनपति पुरातन जात लखी ग्रह बाल तप गति जोति कनी।
समदृष्टि लई शुभ रूचि धुर कल्प लगें शुभ भाव भली ॥३२५॥

अर्थ—सनी असनी जो जीव है यह सब पर वश पने भूख
तृष्ण शरदी गरमी रोग शोक वध बंध इत्यादि कष्ट सहते हैं, सो उन
करके इन जीवों की अकाम निजरा होती हैं बि इच्छा जो काम होता
है उसको अकाम निजरा कहते हैं तो उसका फल क्या यह जीव अंत
समय उन जीवों का अंत समय परिणाम शुभ हो जाते हैं इस करके
यह जीव काल करके देवता बने भवनपती या वाण व्यिन्तरां में पैदा
होवे जिनकी स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की हैं और उत्कृष्टि आयु
एक पल्योपम की स्थिति पाते है। भवन पतियों देवों की जघन्य दश
हजार वर्ष की उत्कृष्टि तक सागर की है। और छोटे देवी देवताओं
की १ पल्योपम की भी हैं और पल्य के असख्याते म भाग की हैं।
पल्यों की भी कहि हैं और पलके असंख्याते में भाग की तिथि पाते हैं

अब संनी तिर्यञ्च पचेंद्रिये मनवाले जीव को जाति स्मरण ज्ञान होजाये और पिछले भव के अनुसार तप किया मगर अज्ञान के वस भूख तृषादिक नाना प्रकार का तप करते रहे हिंसामई जिसमें संवर नहीं है ऐसे तप वाले भी मर कर भवनपती देव वाण व्यंतर देव ज्योतिषी देव इन देवताओं में जा पैदा होते हैं और जो जाति स्मरण ज्ञान के साथ हो तो उसको समदृष्टि कह सकते हैं क्योंकि उनके भाव दान शील तप भावन दिल में वरते और अगर भाव चढ़ते जावें तो प्रथम देवलोक में जाकर उत्पन्न और यहा के सुख भोगे ॥३३५॥

जुगला थिति भाग असंखपलो सब छपन्न अंतर दीपन के।
गति मौन वने पिन हेमवए पिण इरणवए पल एकन के ॥
पूर कल्प लगे उपनैं तिय ते दुतिय लग जानन शोधन के।
पिछले शुभ मिचत ते सुर ही निज आयु सम कहि उछनके ३३६

अर्थ —अकर्म भूमिये मनुष्य जुगलिया जिनकि स्थिति जघन्य तक क्रोड़ पूर्व से अधिक और उत्कृष्टि पलके असंख्याते वें भाग की हैं और सब छपन्न अन्तर द्वीपों के जुगलियों की स्थिति जघन्य पल्यके असंख्याते में भाग कम हैं, और उत्कृष्टि पल के असंख्याते मे भाग की हैं, और सर्व सारे अकर्म भूमियों मनुष्यों की स्थिति जघन्य तो कोड़ पूर्व से कुछ अधिक हैं। उत्कृष्टि ३ पल्योपम की हैं। बाकी सर्व मध्यम स्थिति हैं (विशेष वर्णन देखो श्री जीवाभिगम सूत्र) और यह सर्व जुगलियो ५ भरत क्षेत्र मे बसने वाले, ५ इरावत क्षेत्र में रहने वाले और ५ महा विदेह क्षेत्र मे हमेशा रहते हैं, अन्तरा नहीं जिनों का अब आगे ५ देव कुरु ५ उत्तर कुरु ५ हरिवास ५ रम्यक् वास ५

हेम वय ५ ईरणजय, और ५६ अन्तर द्वीपे यह छयामी ८६ युगलियें मनुष्य मरकर नर्क में नहीं जाते तिय चमे भी नहीं जाते और मनुष्य में भी नहीं जाते यह तो सर्व दश प्रकार के भवनपतियों में सोला वाण व्यंतर देवताओं, दश प्रकार के ज्योतिषी, निमानी ? पहले देवलोक दूजे देवलोकों में जावे फिर वहा से मरकर मनुष्य गति में आते हैं यह युगलियें शुभ संचित शुद्ध भावणा के जो कम किये थ उनका फल देवलोक में सुख भोगते हैं ॥२३६॥

न गता गति नारकी घात शिखी निस्लैन्द्रीय समूछम मानव जल भू वन बादर में उपजे नगता गति सूक्ष्म के मत्र में ॥ नर ते नर मे तिर्यञ्च तथा, उपनै न असंज्ञि तिर्यचन में। जूगलू घर ही सुर नाहि तहा उपजै इम फेर नहीं दिव म ।२

अर्थ —श्री जिनदेवजी ने कथन किया है। कि चार देवलोक के देवताओं की गत अगति के दोनों तोलों म से चवों की देवसें देवलोक से मर कर नर्क गति मे नहीं जाते हैं और मर कर फिर देवता से देवता नही होते हैं और ३ विकलेंद्रिये में असनी मनुष्य में अग्नी वायु काये में और पाच सूक्ष्म स्थानरों मे मर कर देवता नहीं जाते हैं और ८६ युगलियों में देवता मर कर नहीं जात हैं और असंनी तिर्यच में भी नहीं जाते हैं परन्तु देवलोक से देवता मर करके पृथ्वी काया में आप काया में वनासपती काय मे जाकर उत्पन्न होते हैं और संनी तिर्य■ पंचेंद्रिय में गर्भनक सन्नी मनुष्य पंचेंद्रियों में पैदा होते हैं। मनुष्य मर करके मनुष्य होजाते हैं तिर्यंच से मर कर तियच भी बन जाते हैं नर्क से मरनार्कि नहीं होते है, देवता से मर देवता नहीं

होते हैं। यह कथन श्री परमात्मा वीतरागी देवका है सत्य है ॥३३७॥

गति संधि लगे मरणांत समय नर मे तिर्यंञ्च निपय सुर को।
तिह मिश्र सुभाव भवे सुरको इत अंतिम पावन के धूर यो ॥
इस गर्भ निपय उपनै युन रैमय भाँध मह नल हैं उरको।
तप धान तथा फल होत इमो इहि रैन अनंत नलि गुरुको ।३३८

अर्थ—एक २ देश की काल के समय मरणांति समुघात होती है क्योंके जब संधि का वक्त होता है तब गति समुघात कहते है उसको और वक्त दोनों गति के प्रदेश का ताता बंध जाता हैं जाना और जाना उसका नाम संधि हैं। और जब एक इन्द्रिये मे देव पंचेन्द्रिये आता हैं तब उसको मिश्र कहते हैं और जब एक येनिया करता हैं जब भी उसको मिश्र कहते हैं, गति से गति का प्रदेशों अरिय प्रदेशों का जब ताता लगता है तब प्रदेश गति में आते हैं ज्यादा और जाते हैं थोड़े उनका नाम समुघात है और जिस वक्त एक काया से दूसरी काया में जाता है। उसका नाम संध मिले एक इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय से एक इन्द्रीये में आके पैदा होते हैं तो उसकी उस वक्त मिश्र कहना, नर से तिर्यंच में जावे तिर्यंच से मनुष्य में आवे नर्क से मनुष्य में आवे मनुष्य से नर्क में जावे [illegible] मनुष्य या तिर्यंच योनि में जावे उसको मिश्र कहिये मनुष्य और [illegible] या तिर्यंच या नर्कों में जावे तो उसको उस वक्त [illegible] से दूसरी गति में जावे उस वक्त उसको मिश्र कहते [illegible] मनुष्य १ नर्क २ तिर्यंच ३ इस देव गति का [illegible] उसने अंतम पवित्र होता हैं क्योंकि जब तक [illegible]

होजागे और इकठे जाव फिर नहीं आत तो उनका मिश्र पना दूर हो जावे फिर जिस गति मे गया जीव उसी गति का कहलायगा फिर जो जीव पूर्वले पुन्य के प्रताप से वैक्रिये लब्धि औधिज्ञान या विभंगज्ञा देव ऋद्धि पाइ देव भव मैं सुख भोगे भोग कर फिर मनुष्य मात के गर्भमे आवे फिर गर्भ में रहते हुवे भी पूर्व कर्मो नपवे प्रभाव से वैक्रि लब्धि ज्ञानादि साथ लेके आया और गर्भ में रहते हुवे अगर ज्ञान में उपयोग लगावे तो बाहर कि जितनी वार्ता सुनी सब जाने उस वक्त इच्छा होवे तो वैक्रिय करे तो दो प्रकार के जीव बनाव एक समदृष्टि जीव औधिज्ञान और दूसरा मिथ्या दृष्टि विभंग ज्ञानी जो सम्यक दृष्टि धर्मामिलाषी मुक्ति के इच्छुक शुभ भावी जीव बनावे ऐसे भावा मे वरते तो वर्तमान गर्भ विषे काल करे गर्भ में से देव गति में जावे 'यह जीव मर के पहले सुधर्मा देवलोक तक जाय उत्कृष्ट यह जीव सम्यक् दृष्टि १ दूसरा मिथ्या दृष्टि जीव पापाभिलाषी राज्य ऋद्धि सुख काम भोग मनवंछत सुख भोगे युद्धादिभिलाषी महारंभीया ऐसे भावों मैं सदा मन वरते तो वर्तमान गर्भ मे से जीव काल करके जीव १ नर्क गति मे जावे और नर्क मे नारकी बने, ऐसे जीव देवगति नर्क गति से आया, एक २ जीव गर्भ मे ही ऋद्धियंत होवे तो जानो पिछले भव का तप जप का बल साथ आया है यह वचन अनंत वली केवल ज्ञानी के हैं वचन सत्य हैं जानना ॥३३८॥

सुर द्वीप पतिगिरि कूट गुफा पति द्वार पति दिजाधि पति ।
वन देव पुरी पति चैत पति जलधीश्वर तीरथ देवसती ॥
द्रहवास पुरी सलिला धरणि मणि औषध वी रमणी सुमति
इम और घणीविध द्रव्य विषय हित धारक मानवलोकरती ३

अर्थ —कैइक देवतो द्वीपो के स्वामी हैं कैइक देव पर्वतों के स्वामी हैं, कैइक वृक्षा के मालिक हैं वताढ पवत की यह ५२ गुफा हैं उनके नाथ हैं और कैइक ग्र गोपों के द्वार के स्वामी हैं विजयादिरो देव हैं उनके स्वामी हैं, केइक ग्र ग्रा के नाथ हैं, केइक देव नगर नारिया के मालिक हैं कैइक दसनैंद्रह वलावा के सागरों समुद्रों में के पति हैं कैइक दत्तें तीथ के स्वामी हैं। कइक देव मगध वरदाम विभा मादि के पति हैं और कइक देवता ग्रा मे के वासी देवी श्रीयत् और कैइक देवी देवता सलिला नदि के गगानदि देवी के सिन्धु आदि के नदीया के कोश भंटार के मणि मोती आदि के जवाहर हीरे पन्ने आदिके और औषधि आदिक मन्त्र तन्त्र आदिके रक्षपाल चक्रेश्वरी देवी वैरोत्त्या देवी सिद्धायका देवी जैसे और अनेक भान्त के देवी देव आदि मनुष्य लोक में रमण करने वाले प्रमोद मानाते हैं ॥३३६॥

इक हैं सुखदायक कल्पपति द्रुगला जनके सुख सेवन को।
इक हैं परमा धर्मी यमरूप रहैं नरके दुख देवन को॥
इकलोक फिरे षड मधि विपथ जगमार मली विध लेवन को।
इक कुष पदार्थ साथं रहे रतनादि निधि सुख देवन को॥३४०

अथ —एक २ देवते अनेक जीवो को सुख देते हैं जैसे १० प्रकार के कल्प वृक्षा के मालिक देवतौं हैं और उनके जरिये अकम भूमि जूगलियां के जीव आपणी जीव का अपणी आशा पुरी करते हैं। और आपणा वंछत सुख भोगते हैं, और एक २ देवते अनेक जीवों को दुख देने पर प्रसन्न रहते हैं। जैसे भवणपति असुर कुमार जाति महासुर रूद्र रूप यम १५ प्रकार के परमा धरमी जिन्हों दिल में

दया नहीं और वह जीव नर्क में नारकियों को कुन्न छन्दन भेदन मार पिट करने में नारकी जीवों को बहुत दुःख देते हैं ॥ एक २ देव सारे लोकचार गति में फिरके देखते हैं कौन २ से जीव सुखी या दुःखी हैं जैसे त्रियाम्भक देव वाण व्यंतर जाति में सें आपणे लोकपाल को आकर सूचना सुनाते हैं आते हैं आप अपणे सेवा में मारि रावर राखें, और एक २ देवते उत्तम पदार्थ के साथ रहते हैं जसे चक्रवर्ती के १४ रत्न एक २ रत्न के साथ एक २ हजार देवता साथ रहते हैं और दो हजार देव जो चक्रवर्ती का शरीर है उसके साथ रहते हैं और उसकी रक्षपाल करते हैं, ऐसे १६० ० देव चक्रवर्ती १४ रत्न नव निधान के तन मन से सेवा करते हैं देवते यह श्री भगवन के कथन हैं ॥३३०॥

इक मत्र अधीन सुरी सुर हैं इक यत्रन मं इक तन्त्रन में ।
मति भेद भये जग माहि कहे तिनके हितरत भये मनमें ॥
इक वदन पूजन सेवन ते सुखदायक काम विषय घन में ।
इम देव विराजत लोक निपय इक हैं रखवाल महा घन में ॥३४१

अर्थ —एक २ देवता मत्रों के अधिन हैं। जैसे रावण ने मत्र साधे थे १००० एक हजार और जैसे प्रभाव चोर के अधीन थे मंत्र। एक २ देवता यंत्रा के अधीन हैं जैसे विद्याधरों के विमाम और जैसे कपड़ा सिनेवाली मशीन इसका नाम यत्र है जिस प्रकार से सुदर्शन चक्र श्रीरामचद्र का आशालिसेट (अग्निअस्त्र) रावण का और एक २ देवते तंत्रों के अधीन हैं जैसे आजकल रेलगाड़ी मोटर आदि और जैसे हवाई जहाज चलते हैं। आजकाल प्रत्यक्ष पवन पानी अग्नि के

सहियता से चले। उनको नव स्न्ने हैं इनके भी नम मे दव हैं। एक एक ऐरता मर्ता मे पक्षपाती है मन्चे को झूटा उनावे जम चेटाराना सत्य न्याय निति पर आ औग रावण राना अनीति पर था परन्तु धर्मेन्द्र ने धनेन्द्र ने दोना न रागिर को विजय दिया करें और सचा विनाप्रिया जैमे देवी देवता वली नार्गा लडर मत भेद करक दिखाते हैं जैसे गौशाले के मत को सचा कहने थ ओर श्री भगवान स्वामी के मत को झूठा कहते थ देखने। देवत नो राग द्वेष के पिडे पड़े हैं। कैइक देवन दूसरे को मुख दन मे सुख है जस अरिहत कैइक धन के अधीन के हैं कैइक वदनादि करन म जैम तथा कर भगवान को) सुख रहते हैं और नगी कइक देवत पुन्य के अधीन हैं जैमे चक्रवर्ती के १६००० हजार हुकम म रहत हैं जम वासुदेव बलदेव प्रति वासुदेवादि के सेवक हैं देव एक २ देवता धपा धपने म धन धान्य के पग करने में चान्दी स्वर्णमणि जमीनादि की सेवा म रहत हैं देवता ॥३४८॥

इक खेचर खेत्र विषय रमन नर नारि विषय बहु शक्ति धरी।
जैम चाल पताल प्रवश विध जल थारा शत धानादि करी॥
घन रूप बटावन भेगन घगी बहु द्रव्य उगावन गुप्तचरी।
इम और घणी अस रीत विषय धरत मन मोहन रीत भरी॥३४२

अर्थ —एक २ देवत विशारदा के देश नगर म प्रवेश कर वहा के नर नारियों के शरीर म आपनी शक्ति भर देत है, जिसके जरिये आकाश गमन करें पताल प्रवेश न करें पाणी अग्नी वायु मेघादि उतपन्न करणा इन चिजो की उपन पैन्न करना और रूप परवत विश्व कारिणायुवान से बाल करें बालक से जुवान करें वृद्ध से जुवान जुवान—

से वृष कर या ते वृष कर वृक्ष मे वानर करे, नारी मे नर नर से
नारी करें देव आपकी शक्ति मे ऐसा रूप बना देव और अनेक रू
अनेक भेष धर और अनेक प्रकार के द्रव्य भी उत्पन्न कर इत्यादि
और भी लोक रचना बदल न मोहनी सूरत बना देवें सबको श्रेष्ठ
सुन्दरी लगे ऐसी करके दगा कर देवें देवते ॥३४७॥

इक देव रमैं नर की तरुणी नर साथ रमैं इक देव त्रिया ।
नरलोक विषय इक मोह करें इक दूर रहैं मन दूर किया ॥
इक मोह करी नर मन बन इक वैर करी बध रोग दिया ।
रचना सुरकी बहुभात लखी जिन जैनहि बैन पयूष पिया ॥३

अर्थ —एक २ वाण व्यन्तर देव मनुष्य नीके साथ भोग भोगते
हैं एक २ व्यन्तरणी देवी के साथ भोग भोगते हैं मनुष्य नर और
देवता भी एक २ मनुष्यलोक के साथ मनुष्यो से मोह ममता करते हैं
एक २ देवता भी इसलोक से दूर रहते हैं भय खाते मन से दूर रहते
हैं और एक २ देवता पुण्य आत्मा के साथ प्रीति करते हैं और सात
सैना का भी काम करते हैं जैसे पूर्ण भद्रमान भद्र देवता आगमे कान
पहिले ता २ कर देवकी सैना बनगी ठाणाग सूत्र के नव मे ठाणे
कहा है ऐसा कामदेव करगे एक २ देव तो राग द्वेष के वश वैर बाध
है। भय देते हैं रोग पिड़ा बीमारी करते हैं ऐसे अपने अनेक प्रका
स्वरो की रचना हैं। जने ने जैन मार्ग के वचन रूपी अमृत पान किया
है वह इसको भली प्रकार से जाणते हैं देखते हैं जीवों की रचना
को ॥३४३॥

इक वैर करिनर के घसके रिपुको दु ख देन हरारन ही।
पिछले भव मोह करी दु ख मोचन कारन को इक आवन ही

रिपुंमो रण मंडण कारण जो मिलने पुन मित्र कि धावनही।
सुर ऊरध केजु पताल धसे तिह कइम ऊरध आवन ही ॥३४४॥

अर्थ—एक २ देवता आपने शत्रुओ को देखते हैं तो उन्हे नर्क में दुःख देने को जाते हैं और मारते हैं डराते हैं पिडा देते हैं आपने शत्रु समझ कर एक २ देवने आपना मित्र जाण दुःख मे दुर करते सुख देते हैं क्योंकि पूर्व भवा का प्रेम होने से शत्रु के साथ युद्ध करते हैं और मित्र के साथ मिल जाते हैं मित्र जैसे सीता का जीव एक २ देवता ऊपर से पताल मे जाव पताल से ऊपर को आवे जैसे सीता सती का जीव गया और आया ॥३४४॥

इहि लोक अधीन श्रुतागम ही सुरलोक विषय सुर साथ रहै।
तिह देख पढ़े श्रुता धारक को अभिमान गले चित्त शोक गहै॥
पछतावत हैं चित्तवत इसो धल आतम होत प्रमाद वहैं।
नहि उद्यम आगम माहि कियो अब होई निरुद्यम खेद सहैं॥३४५

अथ—एक २ जीव इसलोक मे से परलोक देव गति मे जाते हैं और जो २ उनके विद्या याद हो वह सब में जाति हैं प्राकृत संस्कृत हिन्दी आदि पढे शिखयो धारे सिद्धान्त शास्त्र वेद पुराण सिम्मरति पद्म पुराण आग वेद (११) उपवेद (१०) छेद (४) वेद-मूल वेद (५) षट् द्रव्य परमाणु पद्‌गल इत्यादिका ज्ञान हो अहिंसा मइ जीव को सो वह जीव देव गति मे आपनी विद्या लेके साथ जाते है एक २ थोड़ी विद्या वाले होते हैं जो २ थोडी विद्या वाले और नहीं पढ़े लिखे प्रमाद में वक्त खोया यह देख और जो बड़े पडतों को देख आपने आप बहोत ग्लगीर होते हैं चिन्ता करते हैं पश्चाताप बहोत करते हैं और मन

ही मन में बहोत दु॰ मानते हैं कहते हैं हमने उद्यम नहिं किया उन देवों के सामने लजा खाते हैं (उदाहारण ठाणाग सूत्र) और जब जबाब नहीं आता तो निरउत्तर होजाते हैं बचन सत्य हैं जिनका॥२४६॥

कितहु जिन आगम की चर्चा जिन आगम साख सुनावत ही।
कहु वेद पुरान पढ़े हित सो अपने २ मत्त मारन ही॥
कहु छन्द कला प्रगटे सरसे स्वर ताल सुगीत बतावन ही।
कहु शब्द मई वर ग्रन्थ पढ़ नर बोध प्रकाश सिखावन ही॥२४७

अर्थ —कहिं २ पर ठिकाने २ देवत एकत्र होते हैं सम्यक् दृष्टि देव और मुक्तगामी आपस में चरचा करते हैं जिनन्द्र देव के बचन सिद्धात की सत्य बात सुनाते हैं और धर्म चर्चा सूत्र करते हैं। और कहीं पर देवते वेद पुराणादि पाठीयों की चर्चा होती थी प्रीति से और आपो आपने मत को चाहते हैं आपने २ मत की शोभा करते हैं। क्योंकि जिनदेव ने कहा हैं परिव्रयक ब्रह्मचारी, तपस्वी, योगी, सन्यासी, तपी, जपी, सयमी दानी इत्यादिक मर के देव गति में जाते हैं और कहीं २ पर देव इकठे हो छन्द शास्त्रों को पढ़े अनेक प्रकार के छन्द प्रगट करें और नव रस रचणा सहित अलङ्कार संयुक्त सहित कहे कहिं पर सप्त स्वर ग्राम मुर्च्छा पट राग ३६ रागणी अनेक भाति के गति कहते हैं और मृदगादि बाजत्र ताल प्रगट करे। कहिं २ पर शब्द शास्त्र व्याकरण शास्त्र कोषादि प्रकारों और आपो आपने ज्ञान का प्रकाश दिखाते सत्य हैं॥२४७॥

कितहु सुर आप थकी अधिको लखके अति आरत माहिपरै।
कितहु निज थी लघु को लख के फिरके अभिमान विवाद धरै

जिह पास मृषापति रूप सखी तिहको बहु दोष विकार भरै ।
समदिष्ट सखी जिह साथरहैं तिनकोदु:ख दोष विकारहरै ३४८

अर्थ—कहीं २ पर देवता आपने से अधिक ऋद्धि अपने मन मे बहुत दुःख मानने और दुख २ करके उसको आर्त्त ध्यान चित्ता करते हैं कहते हैं मैंने गुरू महाराज का कहना नहीं माना पुन्य दान नही दिया जिस करके अब मैंने निचा देखा कहीं २ पर देवलोक के देवता आपने से कम ऋद्धि वाले को देखकर अपने मन मे अभिमान गर्व अहंकार करते हैं । और उसका तिरस्कार करते हैं विषाद करते हैं उसको कहते हैं अय ? बेसमझ मूर्ख ? कहीं पर देवते जो इकठे होते हैं साथ में मृषावाद मत रूप सखी हैं जिनों के साथ मिथ्यात्व सेवन की है और उन्हों को अधिक पाप विकार लगते हैं दोषों मे भारी होते हैं। (पक्षपात मे कुछ नही देखते हैं)। कहीं २ पर देवते सम्यक् दृष्टि इकठे होते हैं तो सब आपने पाप दुःखों को दूर करते और भगवान के गुण गाते हैं पुन्य बाधते हैं ॥३४८॥

कितहु सुर चोर कला धरके दनडे अरु रत्न त्रिया परकी ।
पकरे तहि देख धनी बलमो बहु आयुद्ध चोट करे कर की ॥
वम काय विषय छर जाय कवे जेहि ओतिन देव मणि घरकी ।
इक दुष्ट कला घर देवगणे परमानत सीख बराबर की ॥३४९

अर्थ—कहिं २ पर एक २ देवते चोरी करते हैं कैंई तो रत्नों की और कोइ पराई देवता की देवी को चुरा लेजाते हैं जब मालिक को पता लगता हैं तो खबरदार हो पिछे २ दौड़ते हैं जो बलवंत हैं वह पकड़ लेवे हैं और हथियारा से मारते हैं हाथों से ताड़ते हैं अपनी वस्तु

ले लेते हैं और उसको दंड देते हैं जो मन याद रहे रोना ही रहे कहीं २ पर चोर तमस काये म जा छिपते हैं, वहा पर महाधकार है हैं, जहा पर कोइ भी रोशनी नहीं है ऐसे चोर बला के जानने का चोर देव हैं यह चोर देव लोक परलोक का भय नहीं मानते हैं। कहीं पर उन्हों देवों के भी सिर पर दुष्ट दयताहरण करने वाले और भय से उनकी शिक्षा मानते थ ॥२४६॥

रण माहि सुरा सुर भूभत है अहिदव सुवर्ण कुमार मिला ।
इम ही इतरे रिपु साथ भिडे तल प्राक्रम आयुध धारवली ॥
इतनो तु विशेष विमानन को तिण कंकर पात चलाय चली ।
यहु होत मणिमय आयुदही रिपुमन लगै छिद शक्तिदली ॥

अर्थ —देवलोक म भी यह हाल होता है देखो असुर कुमार देव सुवर्ण कुमार देव आपस म अयुद्ध करते हैं लड़ते हैं ऐसे ही और भी शत्रु साथ में भिड़ते लड़ते हैं एक २ जाति आपस में बहोत लड़ भिड़ते हैं और बडे होते हुवे भी शक्रेन्द्र इशानेन्द्र जैसे आपस में संग्राम करते हैं तो छोटी जाति का क्या ? कहना है। ऐसे ही एक जाति के लड़ते हैं। और एक जाति दुसरी जाति से लड़ने मरने आपस मे बल प्राक्रम फोड़ते हैं शस्त्र धारके बलवान देवते युद्ध करते हैं और विमानी देवते भी पुन्यवानों में विशेष करके गिणे जाते हैं और जो आपने शस्त्र बिन और तृन तृणं कंकर पत्र फल इत्यादि वस्तु चलावे तो रत्न मई शत्रु कोशस्त्र होने लगते हैं और शत्रुवों की शक्ति को बल हीण कर देते हैं ऐसे युद्ध रचना देवों की होती है ॥२४७॥

शुभ शब्द सुगंध सुवर्ण मई रस उत्तम साथ स्पर्श मले।
सुख भोगन पच विषय तिरघा मन वैन शरीर विषय कुशले॥
बहु वर्ष पलोपम सागर की जिह आयु जरादिक रोग टले।
इहि पुन्य महा तरू के फल हैं सुनयो नर नारि सुजान रले३५१

अर्थ—बहोत अच्छे शुभ शुद्ध शब्द रागादिक के ध्वनि बाजंत्रों का शब्द मेघावकी घनघोर घयटा बादलों की गर्जे ऐसे ही शब्दों की जयकार शब्द वाले आपनी शोभा शब्द इत्यादिक शब्द विषय पच वर्ण अनेक भेद के मनोगम देव ने कुंकुमचन्दनादिक महा सुगन्धी वाला पुष्पमाला सुगंधी वस्तु इत्यादिक सुगन्धी सुग मिष्ट मनोहर रस स्वाद सुख पियूष पानादि रस इन्द्रिये सुख शुभ स्पर्श स्त्री पुरुष सयोग आलिगन कोमल वस्त्र शिय्या इत्यादिक सुख भोगते हैं और दुसरा पच विषे सुख मन वचन काया सुख कारी मिलि हर्षेत सुख भोगते हैं घने बहोत वर्षं दश १० हजार ३ पल्योपम की सागरोपम की आयुष हैं और जरा रोग आग क्षीणता रहित हैं ऐसे सुख देवता भोगते हैं, यह सब नव प्रकार के पुन्यों का फल पाना हैं तपस्यादि करणी का फल सुखदाई मिलता हैं सुनों तुम हे पुरुषों ? हे स्त्रीयों ? हे चतुर जीवो ? श्री भगवन कहा हैं सो सत्य हैं॥३५१॥

शुभ वचन २ देव सबे अब भक्ति करें जिन की थुनि की।
पग बन्दन पूजन प्रेम भरी महिमा बरणे तिनके गुन की॥
सुनके सम धर्म कथा रचणा रच नाटक गीत महा धुन की।
शुभकर्म विषय शुभ वचनमे रचणा रचणी जिन की उनकी ३५१

अर्थ—देवते भी श्री जिनेन्द्रदेव भगवान की भक्ति करते हुवे

शुभ कर्म बधते हैं और भी देखो साधु महात्मा की महासनी माफिक जी की भक्ति करते चरणों मे शिश झुकाके वन्दना करते हैं पूजा स्तुति गुण ग्राम गाते हैं अति ही आपने मन में मगन होते हैं और धर्म कथा अति रूचि प्रीति से सुनते हैं कथा सुनके नाटक करते हैं गीत गायन करते हैं ऐसे भी किया करते हैं शुद्ध भावना भाते हैं शुभ बंधन बांधते हैं इस भांति सुरों की रचना कही श्री जिन भगवान ने ॥३४२॥

सुर बंधन भाव मलीन विषय बहु कर्म भविष्यत नीच भई।
तन चोट लगें जब आयुष की न मरें जिन पूरण आयु थई॥
सुर शक्ति न आयु बधावन की गति योनि छुड़ावन की न भई
समके शिर ऊपर कर्मबली इह सार महा मुनि राज दई॥३४३

अर्थ —देवलोक के देवता भी अशुभ कर्मों बंधन बांधते हैं नीच भावों में आकर हिंसादि के भाव तिम तीव्र कषायों में प्रवर्तते हैं और मोटा बंध बांधते हैं सो वह कर्म आगमेकाल उनका दुष्ट फल मिलेगा तिर्यंच दुगति में भोगे था मनुष्य दुर्गति में पड़ेंगे मनुष्य चिंडाल कोढ़ यादिक कि युनि में जाकर जन्म लेते ऐसे दुर्भाग्य उदय पाप से पावें अगर देवता के शस्त्र लग जावे तो दुख पावें लेकिन मरते नहीं क्योंकि जितनी आयुप कर्म की स्थिति बांधी हैं बिना भोगे मरते नहीं देवता में अनेक शक्ति हैं मगर आयुप कर्म बधाने शक्ति नहीं और नहीं घटाने की है आपनी आयुष्य या औरों की भी नहीं आयुष कर्म घटाने बधाने की शक्ति नहीं देवता मे बिना निमत के और नहीं आपनी गति योणी छुड़ा शके नहीं औरों की गति योनि बदलने की

ति हैं देवता मे और सब जीवों के सिम पर कम महा बलवान हैं
द महा ऋषियों गणधरनि देवों ने कहा है ॥३४३॥

रलिंग यही कहु धायक भाव चढे लहैं केवल ज्ञान वहा ।
रू दयतहा मुनि भेष दय महिमा नृत गीत करत वहा ॥
हुष्टि करैं पन वर्ण प्रसून सुगंधित नीर सुधूप महा ।
कहु साधु सुधावक देहत जो सुर भक्ति नृतादि करत तहा ३५४

अर्थ—भगवन ने कहा हैं किसी जगेह पर अन्य लिंग (यानी
भाषयो मे दुसरा भेष हो उसको अन्य लिंगीकहते है) महनीजीव महा
ग्य मैं आया हुवा और उत्तम विचार यानें ध्यायक भावों से गुण
र चढते २ चढते केवल ज्ञान पामक्ता हैं भरत महाराज चक्रवर्ती
म महलों में केवली हुवे सेठ सुदशन ग्ला पुत्र वास पर केवली
य देवी, माता हाथी जैस आपाढ भूत साधु नट केवल हुवा देवता
साधु का भेषदिया दे और देवता फिर नाटक नृत गीत महिमा
रते फिर देव कहीं पर पंच प्रकार की वृष्टी वर्षा करते हैं कहीं पर
व वर्ण के पुलों की वृष्टि करते हैं कहीं पंच रत्नों वल्ला पानी की
र्षा करते हैं कहीं पर अनेक सुगंधी वाला चलकी वृष्टि करते हैं और
हीं २ पर देव धूप घृपाते हैं महा खुशी मानते हैं कहीं २ पर साधु
न्त्य संथारा कर शरीर छोड़ने हैं कहीं पर उत्तम श्रावक शरीर
यागते हैं वहां पर देवते आकर महोत्सव करते हैं सुगधी वल्ला पानी
न्यावृष्टी नृत गीत करें, जैसे श्न सुध माल वरुण श्रावक ने शरीर
यागा देव महिमा करी धर्म की ॥३४४॥

पुर थंभन शस्त्र शिखी जलजीव पशु नर व्याल महाबल को ।
रेरण मैं तरू बेल उगाय करे, फल फूल फली सबको दलको ॥

लघुकाल विषय रच वाम पुरी विपनी ग्रह यात मही थल को
बहुकाम करें न करें शिवको मुनिराज करें पर उज्जलको ३४४

अर्थ—श्री भगवंत न कहा है के देवनों को ऐसी स्थंभन शक्ति है जो शस्त्र को अग्नि को जल पवन पशु नर सप को महाकालन को भी एक छिन में शृंखलना उत्पन्न करैं फल पुष्प पत्र संयुक्त थोरे काल में रचलें ये धमन योग द्वारा नगर बजार हाट भुवन संयुक्त जैसे चक्रवर्ती महाराजा के चक्ररत्न के लिये जो बढाइ रत्नादिक १४ रत्न थे उनके जो अधिकार में हैं देवते वह चक्रवर्ती के लिये सब कुछ तैयार करते हैं एक मुहुर्त्त में जह से ना दो चक रोग पैदा करते हैं देव ऐसे ही यह भी जायगा और भी ऐसे २ अनेक काम कर सके हैं लेकिन देव गति मे से देवते सिद्ध मुक्ति में नहीं जा सकते क्योंके बिना मनुष्य के वैक्रेय शरीर वाले मुक्ति में नहीं आते मुक्ति में सं भाव साधु ही जायेंगे ॥३४४॥

जल माहि तरावन पाथर को गिर पाट उडावन खेल करे ।
नर नारि पशु अहि कील धरें अव सर्पवि दे शुद्ध बुद्ध हरे
शवको सम जीवत देव करें कह जीवन शव रूप धरे ।
इमशक्ति घणी विध हैं सुरकी सुनसी नहीं जोमव सिंधुतरे ३

अर्थ—देवतें पाणी ऊपर पषाण को भी तीरा देते हैं, जैसे श्रीरामचन्द्रजी महाराज ने कटक यानि सैना को पार उतारने के लिये सागर के ऊपर से पत्थरों का पुल बंध्या था मगर देवता पथरों को उडाकर २ आपना खेल पूरा करते हैं और आपनी इच्छा के अनुसार नर नारी पशुओं सर्पादिक को कील के रखें और उनको भय सर्पा

निद्रा दूर कर चेतन रहित के जैसा बना देवें अगर कहीं पर चाहें तो मृतक को जीवित करके दिखा देवें और कहीं पर जीवित को मृतक के समान कर देवें ऐसी २ अनंत शक्ति देवता में हैं लेकिन साधु महात्मा जसी शक्ति नहा हैं। जो देवता देव जन्म से मुक्ति लेलेवे और इसी जन्म में साधु मोक्ष लेलेते हैं सिद्ध बुद्ध होजाते हैं ॥३५६॥

दृग हीन सुलोचन उत्तम ए मुख गुंग सुवाच भए जिनते।
वपु कुष्ट सुगंध अनंग छवि अति दीन महिप भए तिन ते॥
लघु बुद्धि विचक्षण रोनथए मन वांछित ऋद्धि करें छिन ते।
सुरशक्ति घणी जिनराज कहीं छद्म मस्त सुधाकर रहे गिनते ३५७

अर्थ—श्री भगवान ने कहा है के देवतों की शक्ति ऐसी चाहे तो अंध को सुन्दर बडे नेत्रों वाला कर देवें मुख के गूंगे वाले को महा सुन्दर बोलने वाला बना देवें जिन्हों के शरीर में महा कुष्ट रोग होवे और दुर्गंधी वाला शरीर होवे ऐसे २ जीवों को देवता कामदेव जैसा शरीर बना देवे सुन्दर और जो महा रंक जीव होवे उनको देवता प्रथ्वी पति के समान कर देवें। मुख को थोडी बुद्धि को चतुर विचार वाला चतुरों के शिरोमणि बना देवें ऐसे २ काम देवता करें तत्क्षिण में मनवच्छत आशा पूर्ण करें जैसे देवता किसी को चिंतामणि रत्न देकर चिंता मिटा देवें परन्तु किसी को केवल ज्ञान नहीं दे सकें हैं। इस वास्ते श्री वीतराग देव ने कहा हैं के हे मनुष्य २ मनुष्य का जन्म दुर्लभ से पाया हैं शुद्ध पुन्य दान जप तप सेवा भक्ति करले गुरुदेवों की सेवा करे ३५७॥

खिणमो पहुंचावण दूर धकी लघु सेन विषय बहुधा पसरें ।
कहु सीस प्रहें नरको पशुको कर चूरण देय विदेस मरे ॥
तिह फेर चुने रच सीस धरे तिह जीवन को नहिं मार परें ।
इह प्राक्रम देव महाबलका पर शक्ति नहीं निज मुक्तिकरें ३५८

अर्थ—अनेक योजन दूर क्षण में ही पहुंचा देवे जैसे समुद्र में से जिनपाल को सेलक देवता चम्पा नगरी मे पहुँचा या और और छोटा क्षेत्र हो तो बड़ाकर करके (पसरे) एक मनुष्यो पुरुष का या पशु का कोई देव शीस उतार कर लेवे और उसका चूर्ण करके चारों तरफ उड़ा देवे फिर उसको इकठ्ठा कर नव उसका शिर उसी प्रकार से कर देवें परन्तु उस आन यान को पता नहीं लग किंचिमात्र दुःख न होवे ऐसी २ शक्ति देवता मे है । तथा चाहे सो कर देवे परन्तु इस नाम मे देव गति से मुक्ति नहीं प्राप्त कर सके हैं ॥३५८॥

दिनको रजनी निशि वासर ही हिम ग्रीषम र शीत करें ।
बिन काल विषय वर्षा रुतहि वर्षा ऋतु में विपरीत धरें ॥
विष अमृत ककर को मणि ही दग पारक कानन आदि भरें ।
जलको थल भूमिकरें जलही सुरशक्ति घणी मुनि बाखरें ३५

अर्थ—देवता मे शक्ति है दिन को रात्रि को दिन कर देवे शर्द ऋतु को ग्रीषम ऋतु करे और ग्रीषम ऋतु को शर्द ऋतु करे ग्रीषम काल को सीत काल करे या सीत काल को उष्ण काल कर देवें और बिना वर्षा ऋतु के वर्षा कर देवे वर्षा ऋतु को विपरीत कर देवे और विष को अमृत करे, सुधा को जहर कर मणि को कंकर करे कंकर को

रत्न करे, दावानल म कुसुम (पुष्प) कर दवे जलमे थल, थल मे जल करदेवे ऐसी २ शक्ति देवता मे है परन्तु मोक्ष नहीं लेसक्ते हैं ॥३५६॥

उन्हो कछु गर्भ नटावत हैं कछु भात करें अति छिप्र सही।
नहा खेद कछु जननी सम सुर शक्ति प्रभाव अनादि लही॥
कछु नाभिथी नाभि प्रवेशतही कछु जोनि थकी कुन योनि वही।
कछु नाभिथी योनि विषय थइयोनिथी नाभिविषय सुर शक्ति यही

अर्थ —एक २ देव हिरण गवेषि जैसे गर्भ पटावन की रचना करनी चाहते हैं जैसे किसी स्त्री का गर्भ घटा देवे शीघ्राति शीघ्र कर तो कुछ भी पिडा गर्भवती को गर्भ के जीव को नहीं होवे और ऐसी जल्दी कर करते हैं जीसे उसको मालूम भी नहीं पड़। मालूम पडने के चार भेद हैं एक तो नाभि मे निकाले और नाभि से प्रवेश करे, २ योणि से निकाले और योणि से प्रवेश करे गर्भ मे ३ नाभि से निकाल और योणि से प्रवेश करे गर्भ मे ४ योणि से निकाले और नाभि से प्रवेश करे गर्भ मे ऐसी शक्ति देवता म हैं ॥३६०॥

इक देव कतूहल खेल करें पशु मानव सीस खगाय धरें।
तिह देख हसे फिर ठाम कुठाम सवार धरें मन मोद भरे॥
इकदेव महाबलि छिप्र गति कुछ द्रव्य उछाल चलत फिरें।
इम दीप तणे गिरदे इकवार सुआई सप इम शक्ति सुरें ३६१

अर्थ —एक २ न्यते खेल कतूहल करते हुवे मनुष्य का पशु का सिर कटा देवे और उनर का न्यर कर देवें फिर ऐसे रूप को देख देख के हसे और आपस मे कतूहल करे फिर उनका सिर ठिकाने २ कर देवे ठिकाने करके आपन मनमे बडेहर्ष धरतहैं दवताम ऐसी शक्ति

है और २ देखो एक देवत महाबलवत शीघ्र गति से कोई वस्तु उछा लके और इस जम्बूद्वीप के चारों तरफ फिर के २१ बार चक्र लगावें, और उस गिरती हुई वस्तु को भूमि पर पड़ने से प्रथम पकड़ लेवे ऐसा शक्ति देवता में है लेकिन मुक्ति की शक्ती नहीं है ॥३६१॥

अति प्राक्रमवंत सुज्ञानगुणी बहु कारज साधिक लोक तणे।
नहीं शक्ति मुनिव्रत की तिनमें नहिं श्रावक की व्रत देस भणे॥
इस कारण सम्यक्त्व सभी मुनिको पद उत्तम जान तिणे।
तिनके पद पंकज पूजन की बहु भक्ति करैं जन दास बनै ३६२

अर्थ —श्री वितराग देव ने कहा है के देवता अति बलवत साहस मे पूरे और चतुर गुणवन्त संसार के वस्तु से कार्य सिद्ध करने में बड़े होनहार हैं परन्तु साधु महाराज के पंचमहाव्रत पालन की शक्ति नहीं लेकिन श्रावक के भी १२ व्रत नहीं पाल सकते हैं और होते हैं सम्यक दृष्टि जिनेकी गुण सही है और सत महात्मा का पद उत्तम जाणे आपन से ऊंचा मानते और उन्हों के चरण कमलों में वन्दना नमस्कार करके सेवा भक्ति करते और सेवक बन के रहते मनुष्य हर समय ॥३६२॥

रिपु मोह महाबल साधु हणे नहीं शक्ति सुरिंद महाबल की।
सुरतेन भये मुनिलोक अलोक प्रकाश करैं द्युति केवल की॥
सब दूर अशक्ति करैं करणी मुनि मोक्ष महा पद उज्जवल की
इस कारण देवमहा मुनिका धरभक्ति मनिष्य महाफलकी ३६३

अर्थ —इस जीव का परम शत्रु है मोहनी कर्म महा बली है सदा संसार में भ्रमण करने वाला है जिसको महामुनि जन उस मोह

कर्म का नाश करते हैं, ऐसी शक्ति तो देवता के इन्द्र में भी नहीं है तो छोटे देवों का क्या कहना है, और इन्द्र देवों से नहीं होती संत महात्मा लोग लोक में केवल ज्ञान की ज्योति प्रकाशते हैं, सर्व देव रूपी इन्द्र भी अशक्त हैं मोक्ष साधन की करणी से करणी तो महा साधु महात्मा कर सक्ते हैं इसी वास्ते इन इन्द्रादि साधु महाऋषियों के चरण कमलों में नमस्कार करते हैं और चित्त में भाव भक्ति करते हैं जो आगामी काल सुख मङ्गल देनेवाली भक्ति जो भक्ति है वह सुगति सुरूप सुशील सुतप सुदान सुबुद्धि सुपरिवार सुयश सुमान भाग्य लक्ष्मीसुपुत्र भगवत की भक्ति देने वाली है ॥३६३॥

जिनराज समोसरणे इक कोड़ जघन्य पदे सुर सेव करें ।
उतकिष्ट परसन इन्द्र समेत असंख्य मिलें जिन मोद भरें ॥
जिन जन्म समय दिख रूप समय वर केवल पावन मोक्ष वरें ।
सब इन्द्र महोत्सव आय करें शुचि अंग उपांग सुभक्ति भरें ॥३६४

अर्थ —देवाधिदेव तीर्थंकर देवजी के समोसरण में जघन्य तो एक क्रोड़ देव सेवा में होते हैं भक्ति करने वाला और जब उत्कृष्टे होते हैं तो असंख्याते देवता होजाते हैं सारे इन्द्रादि देव परिवार सहित आवे तब हो जाते हैं और सब मिल सनतादि मिलकर आये हैं और श्री तीर्थंकर देवका जन्म दिक्षा केवल ज्ञान निर्वाणादि का महोत्सव करने के लिये ६४ इन्द्र मिलकर आते हैं खुशी मनाते हैं और अंग उपंग से भाव भक्ति करके हरे भरे होजाते हैं ॥३६४॥

जिन पाद प्रदेश सुदष्ट करे वहु रत्न प्रदेश ग्रह सुचने ।
तिह मेल रचे सुर वैक्रय को वहु रूप जनेयुत वृन्द गुणे ॥

वहु द्रव्य रचे युत आदिपुरी वनसिधु चमू इम और सुने।
सुशक्ति धर्णा नहीं मुक्तिमई मुनि शक्ति उर तदि देव धुने ३५

अर्थ—देवी दवते पर कोई किमी समय म वैक्रिय करन क ख्याल हो तो आपन शरीर के अन्दर म आत्म प्रदेश निकाले और असंख्यात योजन का दड करे अनेक प्रकार के विविध वर्ण रत्नादि के प्रदेश निचे और आपन प्रदेश रत्ना के वैक्रिय करे जैसी अपनी इच्छा हो सो रूप बना सकता है विविध रूप करे अनेक द्रव्य वस्तुओं को बना देवे जैसे अनेक नगर रचे घर हट हवेलि बजार आदि सहित करे या वृक्ष लता फल फूल सागर बलव वनचर खेचर पशादिक सागर नदी सरोवर बावडी समुद्र कच्छादि अनेक जाति करे वैक्रय से और सेना हाथी घोडे रथ पैदल नाना प्रकार के शस्त्रधारि जैसे और भी रचना करें देव ऐसी २ शक्ति देवता में बताई हैं भगवन ने परन्तु मुक्ति लेन की शक्ति नहीं मुनिजन ने आपनी आत्म शक्ति से लिया है अमर पद ॥३६॥

गुण पूर्ण सयमवत मुनि सुर तेज उलघ चले स्व चले।
इकमास प्रवर्जित व्यतर को उरगादि दुमास उलघ चले॥
इकमास त्रिमास बंधे तरते असुरो ग्रह तो इम इन्द्र नले।
इक सम्म दुमे २ चौ नवते पुनते मुनि उजल सर्व थले ॥३६६

अर्थ—जो साधु संयम में तप जप मे सेर विनय में ज्ञान सत्व में पूर्ण हो वह मुनि गुणवंत हैं उसका तप तेज देखो कैसे उपर जाते हैं अपने धर्म के बल से देवता के तेज बल को उलंघ ... तेजवत होवे (एक मास के साधु बाण ... स

और दोमासका साधु होवेतो नाग कुमारादिक नर जातिके भवणपतियों से उपर जावे ३ मासका साधु होवेतो असुर कुमारासे उपर जावे। चार मास का साधु होवे तो तारा ग्रह मे ज्योतिषी देवों मे उपरजावे। पंच मास का मुनि होवे तो चन्द्रमा सूर्य से ऊपर जावे। छै मास का अणगार होवे तो सुधर्मा ईशान देवलोक कल्पा से ऊपर जावे। सात मास का ऋषिश्वर होवे तो सं कुमार महेन्द्र दो कल्पों से ऊपर जावे आठ मासका सत होवे तो ब्रह्मदेवलोक लातक देव दो कल्पों से ऊपर जावे। नव मास का महात्मा होवे तो महा शुक्रदेवलोक सहस्र देव लोक दो कल्पों से ऊपर जावे। दश मास का श्रमण होवे तो आणत प्राणत आरण अच्युत ये चार देवलोक कल्पा म जावे, ग्यारा मास का त्यागी होवेत नव ग्रीवेग म जावे उपर, बारह मास का माहण होवे तो पंच अनुत्तर विमान वासी देवा म जावे ऊपर परन्तु क्षिपक श्रेणी में चढके सब से ऊपर सारे लोक को उलंघकरके अलो-लोक की संधि में जा विराजेंगे ॥३६६॥

इसलोक विषय नर नारि घरे सुर ध्यान सेवन मन लिये।
कर ध्यान रचे विधि पूजन की सुख संपति को बहु राज दिये।
जगराज कुराज कहे जिननी बिन कारण सुराज सिद्धान्त लिखे
इम कारण देवनमे मुनिको हम वदत है मुनि को हर्षे ॥३६७॥

अथ — इस ससार में बहुत स्त्री पुरुष देवी देवता को वन्दन पूजन करते हैं और मन्त्र जपे जंत्र लिखे ध्यान धरें और बहुत सामग्री के साथ उन देवी देवतों का पूजन करते हैं सुख संपत्ति पुत्र पुत्री स्त्री राज ऋद्धि सिद्ध इच्छान वाने ऐसी आशा करते हैं कहते हैं

हमारे रोग शोक दु ख जन्म मरण मर्ने सङ्कट मिटा दे ऐसी दुनिया कहती है। और भगवान ने इस प्रकार से कहा है । वे जगत के जीवों ? कार्य से शुभाशुभ करते हैं क्योंकि बिना रोटी खाये भरे पेट म अन्दर नहीं आता ऐसे ही बिना अ न्तर के त्यागे मुक्ति नहीं मिलती है अभय त्याग जैन सिद्धान्त म वर्णन है कि बिना दया दान ज्ञान त्याग वैराग्य के मुक्ति नहीं है। इसलिये आप लोग देवता कि आशा छोड़ दो और जो कुछ चाहते हो तो मत महात्मा का मेरा करो वंदना सतकार पुना स्तुति गुण गावो देवता ना दे सकता ना ले सकता है। मुक्ति मुनि महात्मा सब कुछ कर सकते हैं मुनियों को देवता भी नमस्कार करते हैं ॥२६७॥

धुर एक मुहूर्त अंतर माहि अनाज अपूर्ण आदि दशा ।
उपरत भपूर्ण देह मई दुतिया सुख भोग मऊ सरिसा ॥
जब आयु रहे षटमास तबे तृतीया दु ख शोक वियोग धसा ।
इसकारण भापन है त्रिदशा शुभ कर्म करी सुरलोक बसा ॥२६८

अर्थ —देवता को त्रिदश क्या ? कहते हैं ? क्या कारण है ? भगवान के वाक पहले जिस वक्त जीव देव गति मे आकर सिभा मे पैदा होता है तो एक अन्तर मुहूर्त तक अपर्याप्त होता है। और उसके बाद पूर्ण पर्याप्त हो जाता है। फिर उसके बाद पच पर्याप्ति सहित देवता का शरीर सपूर्ण हो जाता है उस जग जन सिभा के ऊपर बैठता है और अवधिज्ञान का उपयोग लगता है फिर पूर्वोक्त भवों का स्वरूप जाना और देखा तो वर्तमान काल की बात जानी आगमी काल की बात देखा इसलिये पहले एक अन्तर मुहूर्त के बाद

ो २ सोच विचार किया देखा जाणा और सपूण शरीर पाया सुख
ोग विलासों मे लगा यह (दुसरी दसा है) अब तीसरी दसा कहते
; जब आयुष छै मास की शेष रहती है। तब तीसरी दसा होती हैं
म वक्त आपने मन मे दुख वियोगादि से वल हीण होना ज्ञात होने
ागा तब पश्चाताप करने लगा हाय २ यह मेरा सुख छोडना पडेगा
॥ कारण से यह तीसरी दशा कही हैं। जो सुभ कर्म क्रिया करेगा
ह सुभ गति पावगा उत्तम देवलोकादि यह भगवान के वचन
॥३६८॥

॥ नव रस रचना-दुमला छन्द ॥

तन रूप प्रभा पट भूषण की भवनादि छवि सुसिंगार कहे ।
ल प्राक्रम वैक्रम को करुणा सुगम रस वीर स्वरूप लहे ॥
दु ख मोचन को सुख देवनको सुर दयाल भए करुणा सुगहे ।
ीसवत भए भयके करखे रण खेत विषय रस रुद्र रहे ॥३६६॥
सुख भोग विलास कुलाम विषय रत गीत रसे रस हास भवे ।
अपवित्र कुगध कुरूप रसे अमनोगम माहि गिलान ठवे ॥
लख काल लमा परके डरते भयवत भए रस भीत लवे ।
रस चित्र विनद विभूत लखे रस सत समो सरणे सुहवे ३७०

अथ —श्री जिनदेव ने दुनिया के बिच म नव रस बताये हैं,
ौर देवों मे भी नव रस हैं जो यहा पर निर्देश किया जाता है ध्यान
ो पट क्योंकि इनके पढने से विचार उत्पन्न होगें अब सबके नव रसों
ी रचना करते हैं ऐसे देवता का शरीर शरीर के रूप वर्ण की
सुन्दरता वस्त्र आभूषण अभरण की क्रांति भवन विमान आवास की

छवि चमक पड़ती इत्यादिक सु न्दरता को देखें तो उसमें सिंगार रस उत्पन्न होता है ॥१॥ बल प्राक्रम फोटना वैरय करना और युद्ध करना इत्यादिक कार्य करते में सहासिक हो उसको वीर रस कहते हैं ॥२॥ जब दयालु भाव आवे दु खी को दुखी देख उसका दुख दुर करने लगे सुख देने लगे उसको करुणा रस कहत है ॥३॥ जब देवता कोप क्रोध करते भयानक रूप धारे पिशाचवत व्हे जब संग्राम करे आयुद्ध करे शस्त्र चलावे तो उसको उस वक्त रुद्र रस कहते हैं ॥४॥ १४३ जब प्रसन्न होय और सुख भोग भोगें नाटक गीत वर्णना के राग रंग म मगन होवे भगवत की पूजा भक्ति म आनन्द मान होडसको हास्य रस कहते है ॥५॥ जब अपावन वस्तु दुर्गंध कुरूप कुवर्ण मादो आम मति देख तब मन से उसका दु ख माने तो उसे विभत्सरस कहते है ॥६॥ जब काल आया जाणे अथवा बलवंत डरावे भय देवे भयवंत होवे तो उसको भय रस कहते हैं ॥७॥ जब देवादि इन्द्र की शालादि विभूत देख विभो देखे तब अद्भुत रस द होता हैं ॥८॥ जब तीर्थंकर देव के समोसरण आया भगवत की वाणी सुने अर्थ ग्रहण करे और प्रश्न पूछे खुशी से तब उसको शान्ति रस कहते है ॥ ऐसे जो नव रसों को जाणे वह चतुर ॥२६६॥

दिस दक्षिण उत्तरलोक दुधा सुरवास दुधा तिह इन्द्र दुधा।
दुब्र आयु वड़ावल रिद्धि तथा क्रिम दक्षण ने उतरे निरधा॥
मध्यलोक तणे विच मेरु गिरि जग मध्य दिशा निहले वसुधा।
दिगपाल करी सुरराय सजे जिनको जिन वैन पियूष छुधा२७१

अर्थ —देवलोक के दो भे है एक तो उत्तरार्द्ध दुसरा दक्षिणार्ध

से ही देवओ के दो वासे हैं और दोना वासों में दो २ इन्द्र भी रहते एक २ जाति जुद २ भे हैं। दक्षिण दिशा वाले से उत्तर दिशा वाले ज्ञ विशेष हैं आयुप में शक्ति ऋद्धि मे भय करते नहीं कीसी का योंकि सारे लोक के मध्य भाग म सुमेरु पर्वत है उस मेरु पर्वत से दिशा गिणी पूर्वदिशा १, अग्निकोण २, दक्षिण दिशा ३, नैऋत्य ोण ४, पश्चिम दिशा ५, वायव्य कौण ६, उत्तर दिशा ७, ईशान ोण ८, यह आठों दिशा हैं पूर्व मे आधा पूर्व दिसा दक्षिण की तफ ार पश्चिमतक एक इन्द्रकावासा है आर आध पश्चिमसे लेकरउत्तर रा आवे पूर्व दिसा तक दूसरे इन्द्र का वास है जैसे एक रोटी ाधी २ कर लेवे तो ऐसे आधा लोक उत्तरार्ध आधा लोक दक्षिणार्ध से सुमेरु पर्वत भद्रशाल वन से शोभता है इसी प्रकार से ८ दिसा पाल आठ दिशापाल देव मन रूपी पवन पर निवास करते हैं और ःढिवत हैं उनके साथ सुमेरु स्वामि सुदर्शन देवराज शोभते हैं ऐसे नते२ देव के अमृत मइ वचन सुनो तिनकी सेवा करो तन मन ॥३७१॥

देश दक्षिण लोक पताल विषय चमरेन्द्र विराजत भौनपति।
तेनके सिर उपर ऊर्ध्वलोक सुशक्र सुरेन्द्र अनूप मति।
ऐम ही वल इन्द्र सु उत्तर म तिह ऊपर इन्द्र ईशान पती।
ऐम ही इनके उनके उपरे वर इन्द्र विमानपति सुगति ॥३७२

अर्थ —अब देवेन्द्रों के नाम लिखे जाते हैं दक्षिण दिशा के ताल मे चमर चचा रायधानी हैं वहा पर असुर कुमारो के इन्द्र ामरे इन्द्र के नाम से बोलते हैं सुधर्मि सभा में सिंहासन उप

विराजमान रहते हैं आपना सब परिवार सहित शोभा पाते हैं और इनसे भी ऊपर दश्लोक समदिस सुषमा दयलोक सुधर्मा विस्मद विमान की सुधर्मा सभा में सुरमा इन्द्र महाराज विराजमान रहते हैं स्वपरिवारयुक्त ऐसे ही इस प्रकार शिला के पाताल में बल धंचा ... धानी हैं वहा पर असुरकुमारा की बली इन्द्र नाम से बोलते हैं वह भी सुधर्मा सभा में सिंहासन ऊपर विराजमान हैं सब परिवार के साथ प्रसन्नता पूर्वक करते हैं और इनके भी ऊपर उपलोक समदिशा ईशान दयलोक ईशान सुसमा में विराजमान रहते हैं, ईशान इन्द्र बली इन्द्र के सिर ऊपर लोक में ईशान इन्द्र आपना हुकम चलाते हैं ऐसे ही ऊपर से समझ लेना चाहिए सर्व नाम से जो ? इन्द्र महाराज हैं ऐसा कथन जिन पुर्वा का है ॥३७२॥

एकइ समया सु ईशान मिले इक ठाम विषय हित रीत करै।
एकइ हित कारण युद्ध मचे बल आक्रम पौरस मैन भरै॥
थर जानत शक्र ईशान जबै तब सतकुमार को ध्यान धरै।
यह प्रान्त मारा जिह मीत दए बहुमान लए चित्त बर हरै ३७

अर्थ—किसी समय में शक्रेन्द्र ईशान इन्द्र दोनों मिल कर किसी एक ठिकाणे बैठ और आपने आपस में मित्र भार रखते और बहुत सपकारें वहीं पर कभी किसी कारण से परस्पर होने लगी और संग्राम होने लड़ने कि तैयार होगए संग्राम लड़ने लगे बल प्राक्रम लगने लगे शस्त्र चलाने लगे कठोर वचन सुनाने लगे पंच प्रकार की संग्रामी क्रीड़ा सजाने लगे परस्पर युद्ध करने लगे युद्ध करते ... सेना थक गए बहुत चुर २ शरीर होगये और दोनों ही कहते हैं देव

कि हमारे को कोन छुड़ावें फिर सन्तकुमार का ध्यान करने लगे के हमारे आके जुदे २ कर देव तब वह तीसरे देवलोक वाला देवता आवे और सेना को घमकाया फिर सेना जुदे २ भाग गये शर्म आके सन्तकुमार देव ने क्या तप किया इसने पूर्व न भ म बहुत लोगों को सुख दिया तब मन से सब जीवों ने आनन्द माना सुख पाया और इस जीवने वहा पर बहुत पुन्य उपार्जन किया हैं इस कारण इसका तप तेज मह्या नहीं जाता सब डरते हैं इसके सम्मुख ॥३७३॥

सुर उत्तर वैक्रय रूप धरी उत्तरे इत्तर इत आवत हैं ।
कारण किन कारण ते निज मूल शरीर लई फुन धावत हैं ॥
इकने गिए मरत्य अमरत्य लगै तन धारण शक्ति सुहावत हैं ॥
रचना सुर कल्प लगै धरणी उपरै नहिं लच्छि फुरावत हैं॥३७४

अर्थ —देवते आपन मुल शरीर से उत्तर वैक्रय करके रूप आपने स्थान से चलते है। और किसी दूसरे स्थान पर जावे या इहा पर आवे कभी किसी कारण से आने जावे तो मूल के शरीर से आवे कारण पड़े तो जैसे चमरेन्द्र सुधर्मा देवलोक मे गया वहा पर उपद्रव किया इतना मचाया उस समय शक्रेन्द्र ने देखा और वज्र उठाके चलाया वज्र आता चमरेन्द्र ने देख फिर भागा आगे चमरेन्द्र पीछे वज्र आते डरता हुआ श्री अरिहंत ज्ञात पुत्र वर्धमान जी के शरणे में चला गया और फिर इन्द्र ने पिछे विचार किया यह यहा पर कैसे आया हा ? हा ? हा ? भगवंत का शरणा लेकर आया हैं मेरा वज्र भगवन को आसातना देगा इस वास्ते में शीघ्र जाकर वज्र को पकडू ॥ फौरन पिछे चल दिया आया भगवत के पास आके वज्र पकड़ लिया वंदना

करके १२ आवरा क्षमा याचना करी इस कारण से मूल के शरीर ध
आया था ऐसे कारण से श्रोर भी जो देवता वैक्रय करें तो एक रूप से
अनेक प्रकार के रूप करे संख्याते असंख्यात रूप कर लेते हैं ऐसी
शक्ति कही है पर है १२ देवलोक तक और ऊपर के देव वैक्रय नहीं
करते हैं ॥३७४॥

तन भाग असंख्यम अंगुल को भव धारण आदि समस्त तणे
उतकृष्ट पद कर सात लगे बिच भेद असंख्य जिणद भणे ॥
सुर उत्तर वैक्रय कर लघु भिन्न संख्यम भाग जघन्य पणे ।
उतकिष्ट सुयोजन लाख लगे इस अन्तर भेद असंख्यतणे ३७

अर्थ—प्रथम भव धारण समय शरीर की औगहणा सर्व देव
देवतों की अंगुल के असंख्यात में भाग की होती (जब आके गर्भ ग
जन्म लेते हैं उस वक्त) फिर उसके बाद बढ़ती २ केइक की ७ हाथ
की हो जाती है। जघन्य तो अंगुल के असंख्यात में भाग की है औ
उत्कृष्टी सात हाथ प्रमाण की है। परन्तु भगवत ने तो अंतरे म
औगहणा के भेद जुदे २ करके संख्याते असंख्याते कह बता दिय
जिनन्द्र देव! आपने मूल शरीर से निकाल के उत्तर वैक्रय शरी
करे तो उसका प्रमाण यह है सूक्ष्म रूप में करे तो जघन्य अंगुल ।
असंख्यात में भाग का करे उत्कृष्टा करे तो लाख योजन का क
और इसके अन्तर में भेद बहुत असंख्याते हैं। केवल ज्ञानी जाण
हैं ॥३७५॥

षट मास रहे जब आयु तबे कुमलावत फूल की माला गले
सुर चीर मलीन लखे अपने बल हीन हुलास विनोद टले ॥

लखराल समय अति आरतही प्रिय मित्र वियोग दुखदाई ...
नाह। देवको जीवन होत तवै इम भाखत हैं मुनिराज सुदै ...

अर्थ —देवताओं कि आयुष छह मास शेष रहत हैं तब उनके गले में जो पुष्पा की माला होती तब वह कुमला जाती है और उनके वस्त्र मलीन अनेक वस्तु महेल विमान आन लगत है फिर उनकी पलटीए दसा फिर चिंता अधिक होती है असबाब छन जाता है और विपरीतता आगइ यह क्या होगया ? अवधिज्ञान में उपयोग लगाया तब जाना कि मेरा काल आया मैं किस गत में किस गत में उत्पन्न होवु गा ? इस प्रकार आरत के आर्त ध्यान में पड़ जाते हैं फिर स्त्री मित्र परिवार विमान भवन आदि को देख कर बड़ा दुखी होगया जिन देव न कहते हैं मुनिराजों को के इसका शरीर शोक चिन्ता परित्यागन कर देयो सत्य वचन कहो ! आर्त ध्यान न करो धर्म ध्यान मे मन लगाओ ॥२०६॥

लख काल धरे सुर आरत को हमारे ... भोग विलास टरै।
इतते चल गर्भ विपय पर कथुर वीर्य रक आहार करै ॥
बहुमास वसे तम घोर विपय दुःख सहा दुख गर्भ भरै।
जिसदेव जिनेश्वर होनत हैं इसमा कोई चिंता शोक धरै २०७

अर्थ —जब देवता को आनें का समय देखा तब चिंता हुइ बहुत अब क्या किया जाय ! अब मेरे आपन सुख का ... ध्यान आया और अतियत दुखी हुआ निसार। है हा ? मेरे ... समान काम भोग छूटेंगे यहा से मैं और गर्भ में जा पड़ूंगा सबसे पहिले पिता का वीर्य और माता का रक्त का आहार

यह तो महा अपवित्र वस्तु है हा ? हा पहुत दिना तक वस ...
लटकना पड़गा महान घोर अंधकार म महा गभ की दुर्गंध में देव
सोचकर महा दु खी होता है परन्तु भगवन्त ने ऐसा कहा है के ...
देवता उन पदो से चवकर नाथ पर देव होगा होव कर और चिन्ता
शोक संताप करता नहीं उसका चित्त सदा प्रसन्न रहता है जो ...
भोग म प्रसन्न है वह चिन्ता करते हैं ॥३७७॥

लहर जन्म भविष्यत् मानसरो यह थानें इस शुभम पूने।
हर्षे गु सुन्दर भाव धरें चित्तरे पुन धर्म करो गु फले॥
जल भू वन मे तिर्यंच विषय सुर भूरन आरत माहि रले।
निज रमें महा बलवन्त भए इम भारत है मुनिराज भले॥३...

अथ —नव देवता न औधिज्ञान मे उपयोग लगा कर दे...
आपना आगला भव जन्म तो उस वक्त कहा ? कहता है मैंने अप...
भव प्राप्त करने की बात जानी है कि मे मनुष्य योनि म आने दे...
से उत्तम कुल में दया धर्म वालें म निर्दोष जाति में कुल आदि
कलंकित है नहीं और कुल जाति हीन न हो फिर अपने मन मे ...
हर्षवत हुआ ऐसे स्थान पर जहा नव तप धर्म ध्यान पुण्य माल संय...
दि क्रिया करूंगा फिर स्वग या मुक्ति जाऊंगा और फिर म पृ...
पाणी वनस्पति वायु तेउ तिर्यंच मे नहीं जाऊंगा परन्तु जैसे ...
कर्म करता हैं फल पाता है वैसा ही शुभ कर्म महा बलवान हैं ...
को ४ चार गति में भ्रमण कराते हैं ऐसा भगवन्त ने कहा हैं ...
ज्ञानी मुनि ऐसा ही फरमाते है पाप से बचो ॥३७८॥

इक क्षेत्र मरारख आवत हैं जिह माहि भविष्यत जान लिया।
अपवित्र पदार्थं दूर करें शुभ पुग्गल सिंचत खेत्र किया ॥
ऋषि रूप धरि हित हेत कहू उपमात पिता भख नैन ठिया।
तुमरो सुत होवन योग ग्रहे तुमनो अटसावत मोहि हिया।३७६

अर्थ—एक २ देव अपने जन्म लेने वाले क्षेत्र को सोधने सवारणे के लिये आते हैं जहा पर में जाकर पैदा होगा हूं और सवारू अपन सुख के वास्ते अशुचि वस्तु को दूर करने के लिये और सुगंधीत शुभ पुद्गल अन्दर प्रवेश करन के लिये दयत आया करते हैं रूप परिवर्तन करके यहा आऊ गा मुझको सुख होवेगा ऐसा सोच कर सारा उपाय करते है और कोइ २ देवता धर्मा अभिलाषी मुक्ति के इच्छक काल अवसर जानकर आगला जन्म सुधारने के लिये देव साधु महात्मा का रूप भी धारण करके माता पिता के पास आया धर्म कथा सुनावे और उनको समझावे यह तुम्हारे ? पुत्र होवेगा परन्तु तुम मेरा कथन मानों तो पर वह साधु ऋषिया का धम लेवेगा तुम उसको रोकना मत ? आज्ञा देदेना बड़े महोत्सव के साथ दिक्षा होवे इस मेरी बात को तुम लोग मान लेवोगे तो तुम्हारी इच्छा सर्व प्रकार से पूर्ण होगी ऐसा कह आपने स्थान पर गया भृगु परोहित के जैसा यह जिनके वचन हैं ॥३७६॥

सुर काल करै तिया जीवत ही उपनै सुर होर सुभोग करै।
चव जात त्रिया विह होर भई मिल भोग करे चित्त शोरहरै ॥
विरहो उपजत जघन्य समो उत्कीष्ट पदे षट माम परै।
परिवार मिलाप नियोग इसे सुर सम्पलगै मुनि वाक खरै ३८०

अर्थ—एक देवता देवी का जोड़ा मिल जाता है किसी कारण से देवता की मृत्यु होगई हो और उसकी देवी पिछे है तो क्या वह सत् पालसक्ती है ? या दुसरे देवताओं को पति स्वीकार कर लेती हैं उत्तर, स्वर्ग लोक में विवाह सादीकी प्रथा नहीं है। वहां तो सिर्फ सुख भोगने की योनि है वहां पर सुहाग रंडेपा नहीं है जैसे इस देश से अन्य देश में जाकर व्यापार किया बहुत लाभ हुआ फिर अपने घर आकर आनंद मानते हैं। ऐसे ही मात्र लोक में धर्म किया और देव लोक में जाकर सुख भोगने है उनका कोई शारीरिक धर्म नहीं है खाना पिना भोग विलास करना विषयों में लीन रहेना यह ही उनका धर्म है और पुन्य पाप का प्रश्न नहीं है। उस देवी के लिये उसी स्थान पर और देवता पैदा होजाते हैं फिर उनके साथ वह भोग विषय करते हैं। मोह संबंध उनसे होजाता है अगर देवता से पूर्व देवी का मृत्यु होजावे तो उसके स्थान और देवी पैदा होजाती है वह देवी देवता किसी का सोगे नहीं करते हैं जैसे कोई मर जावे तो चिंता नहीं है देवी और देवता में अगर अंतर पड जावे तो सबस थोडा एक समय से कुछ अधिक अंतर पडे तो छे ६ मास का पडे उसके बाद जरूर २ देवी देवता पैदा होगें निश्चय ही होंगे स्त्री पति की तरह सर्व परिवार ऐसे ही संयम लेना पूर्व कथन हो चुका है ॥२८०॥

दुइ कल्प लगै जल भू वन मे थिति सत्य भई तिर्यंच नरै।
सुर अष्टम कल्प लगै नर औ तिर्यंच पचेन्द्रिय देह धरै ॥
उपरे नर योनि विषय उपजै न समूच्छ सूक्ष्म माहि परै।
जिनधर्म अराधिक धर्म लहै शिव स्वर्ग विषय निजरास करै२८१

अर्थ —भवणपति वाण व्यंतर ज्योतिषी और पहिले दूसरे देवलोक वाले देव गति से मरकर पृथ्वी पाणी वनास्पति में आकर उत्पन्न हो सकते हैं संख्याती स्थिति वाले तिर्यच मनुष्य में आवे भी आते हैं। और आठवें के ऊपर के ८ मे देवलोक तक के मर कर आवें तो वह सन्नी पचेंद्रिय तिर्यच मनुष्य मे पैदा हो सकते हैं। और एकेन्द्रायें असंनी तिर्यच मनुष्य म नहीं आते हैं। आठमें देवलोक से ऊपर के सारे देवलोक के देवता एक मनुष्य गति के बिना और कहीं नहीं जाकर उत्पन्न होते हैं और नहीं सूक्ष्म मे नहीं किसी प्रकार के आमोत्रम में पैदा होते हैं जो देव मनुष्य गति मे आवगे और जिन धर्म दया अहिंसा धर्म दान धर्म पुन्य धर्म इन सब को आराधेंगे पालेंगे फरसेंगे तन मन वचन से करगे वेंह मुक्ति वेंह स्वर्ग जावेंगे ऐसा यह जिनका कथन है ॥३८१॥

समदिष्ट आराधिक सयम के शुभ दया धृति सुर होइच्चुता।
नरलोक विषय भव माननरो बहुऋद्धि जहा धन धान्य मता॥
ग्रह खेत्र पशु नह दास सखा वपु सुन्दर भूषण चातुरता।
कुल ऊंच सुआयु अरोगपणा इहि पावत हैं मुनिनी कथिता ३८२

अर्थ —जो जीव किसी के अवगुण नहीं लेने वाला यह जीव सम्यक दृष्टि आराधक होवावें और वह जीव संयम साधु महाव्रत पाले (या) देशवृति श्रावक धर्म पाले, साधु तथा श्रावक धर्म को पाल कर जीव देव गति मे जाय और देवता के सुख भोगे आपकी आयु पुरे २ पुरी क्षय करे फिर देवलोक से काल करके इस मनुष्यलोक के ढाई द्वीप में आवे भर्त इरावर्त महा विदेह क्षेत्रादिक में

मनुष्य का जन्म पावें निर्मल जाति कुल में आर्य क्षेत्र १० बोलों की प्राप्ति हो रत्न हो सुखी भूमि वस्तु हो दक्षि भूमि बागादि हो चान सोनाहो पशु दासदासी हो मित्र होवे जाति शुद्ध होवे ऊच गोत्र होवे ऋद्धि धन धान्य होवे महल मदर होवे पशु हाथी घोड़ ऊट बैल गौ भैंसादिक बहुत होवे सुदर शरीर रूपवत बलवंत प्राक्रम चतुर होवे ७२ कला पुरुष की ६४ कला स्त्री की शिल्प कला का जाण कार होवे राजकुल उत्तमकुल मेठकुल इत्यादिक ऊच पद पावे। राज मंत्री सेनापति गाथापति आयु बड़ी निरोगता पावे ऐसे मुनि महात्मा कहते हैं जो धर्म करेगा यह जीव सुख पावेंगे ॥३८०॥

दस जात पताल सु भौनपति सत कोर बहत्तर लाख लिये।
सुर व्यंतर सौड़श जात दुधा तिरछे सु असंख्य पूरे हरिये॥
नभचद रवि ग्रह रिष उडु दस जात चराचर भेद लिखे।
वसु ऊर्ध्व द्वादस कल्प परे नवग्रैव जिये अहिमिंद सुखे॥३८१

अर्थ—अब सब देवतों कि संख्या यह है श्री भगवन ने अधो-लोक मे दस प्रकार क भुवन पति देवता हैं असुर कुमारादिका के भवन सात क्रोड़ बहत्तर लाख हैं देव। सोला प्रकार के वाण व्यन्तर देव हैं। जिनोंके दो भेद हैं आठ ८ प्रकार के पिशाचादि जाति के देव हैं आठ प्रकार के अन्न पक्षी आदि जाति के देवता हैं ८ उत्तम जाति देव उत्तर दिशा की तर्फ रहते हैं ८ ओच्छी जाति के दक्षिण दिशा की तर्फ रहते हैं और व्यंतर देवता तिर्छलोक में असंख्याते नगरा में रहते हैं। इस भूमि पर आकाश मे वासा हैं, दश प्रकार के ज्योतिषी देव रहते हैं। चद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र तारे चाच चलते फिरते हैं और

पास नहीं चलते फिरते हैं एक ही जगह पर सदा रहते हैं स्थिर इन १० जाति देवता असंख्याते हैं और असंख्याते द्वीप समुद्रों के ऊपर हैं, और इन्हों से भी ऊंचे उर्ध्वलोक असंख्याते योजन ऊपर पहिला दूसरा देवलोक है उनों से ऊपर ३-४ देवलोक उन्हा से ऊपर ५-६ ऐसे ऊपर से ऊपर गिणते जाणा सर्व से ऊपर ५ अनुत्र विमान हैं यहा तक देवलोक हैं आगे नहीं है ॥३८३॥

॥ अथ श्री सिद्ध भगवान की स्तुति-दुमल छन्द ॥

सुरलोक सभी जिह हेठ रहैं शिर स्वच्छ अनूप प्रभा धरणी ।
तिनके कछु ऊपर सिद्ध प्रभु महिमा तिनकी जीन जी वरणी ॥
नहि जन्म जरा मृत्यु रोग छुधा भय सोग उपाधि किया करणी ।
परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म सदा मुनिराज भए तिनकी सरणी ॥३८३॥

अथ —जो जितने प्रकार के देवता होते हैं वह सबके सब सिद्ध शिला से निचे हैं उन सब से ऊपर सिद्ध भगवान हैं क्योंकि ? सर्वार्थ सिद्ध विमान की ध्वजा से ऊरध उपरलोक साढे १२॥ लाहरा योजन से कुछ अधिक उसके ऊपर एक भूमि है । ईषी प्रभारा उसका नाम सदा श्वेत वर्ण है गो क्षीर से भी अति उज्जल निर्मल है पूर्ण मासी चन्द्रमा के आकार ४५ लाख योजन लम्बी चौड़ी मध्य भाग में ८ योजन की मोटी हैं और घटती २ आवे तो अन्त मे किनारे पर मखी के पंख जैसी पतली हैं जैसे उलटे छत्र के आकार हैं । और इसकी परधि १४२३०२४९ योजन से कुछ ज्यादा है इस भूमिका के ऊपर १ योजन के २४ में भाग ऊपर आकाश में सिद्ध भगवान विरा

जमात हैं यहा पर जो पूर्ण ब्रह्मज्ञानी हैं जिनों मे ऐसे ७ गुण हैं देखो कैसे २ गुण जरा नहीं मरन नही जन्म नहीं काल नहीं रोग नहीं सोग नहीं भूख नहीं भय नहीं प्यास नही उपाध नहीं क्रिया नहीं करणी नहीं परमेश्वर है ऐसे का शरणा मुनिराज ग्रहण करते हैं ॥३८४॥

सब जान रहे सब देख रहे दु ख सुख अखंड समाधि थई।
अविकार अर्चाहि अमूरत हैं नही गोत शुभाशुभ भाव लई॥
नहिं बधन आयु अनायु भए सब व्यापक राम मई।
वसु कर्म हणे गुण अष्ट दिपे भवसिंधु तरे लहि मोच गई ३८४

अर्थ —अब जीव सिद्ध पद प्राप्त करने के गुण प्रगट हो जाते हैं। जिसने ज्ञानावर्णी कर्म को नाश किया तो केवल ज्ञान के द्वारा सर्व लोक चराचर को जाणे ॥१॥ दर्शनावर्नी कर्म क्षय करे तो अनंत केवल दर्शन पावे जिसके द्वारा सब विश्व को देखें आवल कलवत् ॥२॥ वेदनी कर्म को नाश कर देवे तो वादा पिड़ा से रहित होवे फिर शारीरिक मानसिक वेदना न होवे ॥३॥ मोहनी कर्म क्षय करने से वीतराग देव पद पावें जिसमें राग द्वेष विषय कषाय आदि नही हैं ॥४॥ आयुष कर्म क्षय करके जीव अजर अमर पद प्राप्त करें कभी दुनिया में आकर जन्म नहीं लेना ॥५॥ नाम कर्म क्षय करे तो अमूर्ति हो ॥६॥ गौत्र कर्म क्षय करतो अगुरु अलघु गुण प्रगट होवे न हलका न भारी होवे ॥७॥ अंतराय कर्म क्षय करे तो अनंती शक्ति पैदा हो इसलिये जिसमे यह आठ होवे उसको सर्व व्यापक कह सके हैं क्योंकि जीव में और परमात्मा में अन्तर नहीं हैं जिन्होंने आठ कर्मो

को क्षय किया वह जीव ८ आठ गुण प्राप्त करते मुक्ति में विराजमान हो जाते हैं ५ गति गये ॥२८४॥

चित्त रूप चिदानन्द चेतन हैं अविकल्प निरंजन लोकपति ।
ध्रुव आदि अनंत अनादि वहै अविनाशी अखंड अनूप गति ॥
अशरीर अनिन्द्रिय प्राण नहि महिमा श्रुति वाक विषय वरती
प्रणमो परमेश्वर सिद्ध सदा चित्तमो वरती समता सुमति २८६

अर्थ —ईश्वर का रूप कोई नहीं है सत चित् आनन्द मय हैं। चेतन हैं जड़ नहीं हैं संकल्प विकल्प से रहित हैं कर्मों के मैल से रहित हैं। निरंजन निराकार हैं सर्वलोक के पत हैं निश्चल हैं पर्वत की तरह सत से आदि हैं परंतु आदि भी पाइ नहीं जाती ऐसे अनादि के भी अनादि अनंते जीव हैं तथा उन्हा का अनंत नहीं आवगा ऐसे अनंत हैं विनाश नहीं अविनाशी हैं खंडत नहीं अखंडत हैं। गति ऐसी पाइ है जिस पर कोइ भी उदाहरण प्रमाण ओपमा कोइ भी नहीं मिलती हैं अनुपमा है और निर्हां ५ शरीर में से कोई शरीर नहीं ५ इन्द्रीयों मे से कोई भी नहीं इन्द्री दश प्राणा में से कोई भी प्राण नहीं तीन योगों में से कोइ भी योग नहीं महिमा गुण किर्ति जो वह सिद्धातागम में गाइ है। इस वास्ते परमात्मा भगवत ईश्वर को वार वार नमस्कार करो उन्हों कि सेवा भक्ति से हमारे चित्त में समाधि भावना वढती रहेगी और वुद्धि भी वढगी ॥२८६॥

जगदीश्वर लोक अधार प्रभु जग मस्तक उत्तम उच्च वसैं ।
सर्व शिरोमणि लोक शिखा जिम मंदिर उपर कलु लसैं ॥
सर्वज्ञ लखै निरखे तिनको छद्मस्त सुध्यातन शान्ति रमैं ।
प्रणमो परमातम ज्योति मइ जिनके सिमर अघपुञ्ज नसैं॥२८७

अर्थ —जगत् के ईश्वर हैं जगत् के प्रभु आधार हैं जगत् के मस्तक के समान हैं जगत् में उत्तम हैं जगत् में सर्व के सबसे ऊँचे स्थान पर हैं। सारे लोक के मस्तक पर जिस प्रकार से मुकुट शोशुभिता हैं जैसे मैयूर के कलंगी शोभती हैं मस्तक पर जैसे भवन ऊँचे २ विमान घरों पर मंदिर पर ध्वजा सोभती हैं ऐसे ही सब जगत् के शिर पर सोभा पाते हैं सिद्ध परमात्मा वह सर्वज्ञ हैं। केवल ज्ञानी केवल दर्शी हैं सब देखे सब जाणे और जो इस मन जाग्र हैं वह मनें शांति रसमय होकर उत्तम ध्यान धरते हैं और प्रभु से प्राथना करते हैं ऐसे परमात्मा परमेश्वर ज्योतिमय भगवान को वंदना नमस्कार करो स्मरण करो स्मरण करन से पापों के जो समूह हैं वह मनें पाप क्षय होत हैं। यह गुरुदेवा के फर्माण है ॥३८७॥

॥ कमल बंध दुमल-छन्द युगम ॥

अनूप अरूजं अमित अतुल अखलक यश अरधंत पद ।
अज अव्यय थिर अनक पतिकै अछिद अनयं अभय सुखद ।
अलख अक्षुज तु चराचर लष अनूपम सरमणं जयद ।
प्रणमो अमर भजते अधिक प्रभु सिद्ध पय सब मगलद ॥३८८
परमेश्वर हो परमात्म हो, परमोतम हो परमोचक हो ।
परमा महिमा परमागम मे प्रवीन हृदय परतीत हो ॥
परवर्जित हो शिव सासत हो अजरामर हो तम सर्वेग हो ।
सुरनाग सुमानव भव्य नमै प्रणमो शिवदेव सुशांति लहो ३८९

अर्थ —परमात्मा पाप से वर्जित हैं कर्म रूपी रज से रहित हैं शत्रु मित्रजनों से रहित हैं उनके समान दूसरा नहीं है कोइ उनके कोई

कलंक नहीं हैं महा यशो कीर्ति वाले हैं महा ऊंचपद वाले हैं निन्दा का पद कभी धरता ही नहीं, जन्म कभी कहींपर नहीं लेना कभी भी इनकी पराय भी नहीं रखती है अन्य रहेंगे व्यसे रहित मना स्थिर रहेंगे रशाचित चलेंगे नहीं और कभा कपायेमान नहीं होंगे अकंपित रहेंगे भगवत अद्रव्य किसी के छंदे म नहीं यानी हुक्म म नहीं है किसी के स्व इच्छा से रहते हैं। और उनों को कोइ विनय करने वाला नहीं अनय है। भय से रहित है अभय हैं इच्छा के सुख की हमारे पास कोइ हेतु नहीं हैं अलक्ष भगवंत को कोइ देख नहीं सका है जैसे अनेक जीव चराचर योणि में हैं हम लोक उनको देख लेते हैं ऐसे भगवत नहीं दिखते हैं क्योंके भगवान अरूपी हैं इस वास्ते नहीं दिखते हैं और जो मुक्ति स्थान है वह तो अणोपमा हैं जिसकी कोई उपमा नहीं मिलती हैं वह बहुत रमनीक है उसको और कोइ पराजय नहीं कर सकता हैं इस मुक्ति का शरणा ग्रहण करे जो जीव कर्म शत्रुओं पर अधिकार करते हैं और इनको जिते तो वह जीव मुक्ति मे जावेंगे। ऐसा सिद्ध भगवान ईश्वर को वंदना पूजा करे जोकि जन्म मरण से रहित हैं। जो अमर है सर्व विषयों से रहित हैं गुणों के भंडार हैं और उनके गुण गाने मे सदा मंगल हैं जय २ कार हैं देने वाले हैं ॥२८८॥ हे भगवान् ? परमेश्वर हो परमात्मा हो ज्ञान दर्शन से परमोत्तम हो परम ऊंचे पद के धरता हो परम उच कोटी आपकी महिमा हैं आपका सिद्धान्त परम आगम्य है जिसको पुन्यात्मा जीव के हृदय में वाणी आपकी ऐसी रूचती जैसे भुख को भोजन और चतुर वाणी को ग्रहण करते हैं विश्वास निश्चय से आप शत्रु पक्ष से

रहित हैं सास्वते शिव हो उपद्र से रहित हो जरा बुढापे से रहित हो मरणे जंमने से दुर हो त्रिकाल ज्ञाना हो त्रिकाल दर्शी हो सुर देवलोक में रहने वाले नाग कुमार अधोलोक वाले मनुष्य मानलोक में रहने हैं जो और अनेक भव्य जीव साधु साध्वि श्रावक श्राविका सम्यक द्रष्ट जन भी आपको नमस्कार करते हैं हे भगवान आप शिव हैं आपके नाम से शांति प्राप्ति है नमस्कार करने से पापों का नाश होता है ॥३८६॥

॥ अथ सर्व मुक्ताचर छप्पय छन्द ॥

परम परम पद रमण करम रज वरज अमल रात ।
अज अमर अज अटल करण मन तन वच वरजत ।
अचल अलप वर अनघ अलख जग अगल छक ? मन ।
धरन अमर नर मरण समन गण गणधर वरनन ।
जग धरण समण सत घट सदन अघगण हर भर जल तरण
तस सरण परण सत भपटरण जयजय परम अमय करण ३६०

अर्थ—ईश्वर भगवान परसे परम हैं इनसे परे दुसरा कोई नहीं है और उन्हों से परे कोई भी पदवी नहीं है सारे जगत में देखलो ईश्वर परमात्मा ऐसे मुक्ति पद परे है उसमें रमण रहे हैं और कर्म रूपी रज से रहित हैं विषय कषाय रूपी मल से रहित हैं । महा श्रेष्ठ हैं जरा से रहित अजर हैं मरण से रहित अमर हैं जन्म ने से दूर हैं भय से रहित अटल हैं इन्द्रियां मन वचन काया रहित हैं निरूप हैं चलते नहीं अचल हैं नाशनी होते अजय हैं वर परधान श्रेष्ठ हैं । अघ पाप रहित अनघ हैं जिनों की यशो कीर्ति देखी नहीं जाती

गलित यश है आपके आगम शास्त्र कथने का गुण देवते भी गा नहीं सकते मनुष्य विचार किस ? गिणती में है। और कहत २ थक जाते हैं। आपका वाणी का कथन करने से देवता मनुष्य असुरगण साधु गण अशरणगण गणधर गण मुनि शिरोमणि गण ऐसे गणधरों ने कीर्तन किया जो तिन्हों का ध्यान धारके साधु महात्मा हृदय रूप धरके स्तव महिमा करे तो वह संसार समुद्र से तर जाते हैं जो ऐसे ईश्वर परमात्मा के शरण आ पड़ेगा वह सर्व भयों से दूर होगा वो ऐसा भगवान की सदा जये २ पार हो परम अभय मोक्ष गति में जो जाये वो २ भगवान के गुण गाते हैं गए आपने दूर्गों का नाश करते हैं ॥३६०॥

॥ कमल बंध सर्व लघुवर्णी सवैया बत्तीसा छंद ॥

सुमन सुपतिवर सुमति अमित धरसुधर सुकृत वरशुचि मननचतन
सुकवि निवधि विधि सुनमनरण रतिसुनिरच पदवर सुजसघनगन
परम हरप उर विरम हगवर वदन हरप धर परम भगत मन
शिरशिरथिर निधिसकल जगतपति जयजयजयकर शरणपरतजन

अर्थ —सुमन नाम के देवतों के स्वामी इन्द्र महाराज और असमान श्रेष्ट मति धारण हार हैं महा चतुर सर्व काम करने वाले हैं जिन्हों के पवित्र हैं मन वच काया और उत्तम महा कवि हैं अनेक तरह की कविता करण योग हैं भगवान की जो यश कीर्ति करता है वह वही पर उनकी प्रतीत वाला होता है अच्छे आदमी सुन्दर छन्द पद रच कर सुजस कर समूह में उत्कृष्ट प्रमोद हृदय में धारके महा प्रफुल्लत नेत्र प्रधान प्रमप्रमुदित आनन्दीत होते हैं मन

करते हैं। और परम भक्ति करते हैं यश गान रटते हैं फिर ज
रहित होते हैं मुक्ति के मुख्य के निवास बनते हैं और मनलोक
नायक होते है, जय हो २ जयकार सेवक तुमारे शरण म
हैं ॥३६१॥

॥ यमकालङ्कार सवैय नत्तीसा छद ॥

अमर अमरपति चतुर चतुरविध वरण वरणजम रुचर रुच
रचत रचतथुति थवत थवतचित अगम प्रभु अलख अलख
जसजस ससियर धवलधवलकर परमपरमद्युति शिवशिवगि
हरपहरपचित भगतभगतकर नमनभित लहिलहि द्रुव रिद्ध ॥

अर्थ —देव देवेन्द्र के इन्द्र महाचतुर चार प्रकार के श्रद्ध
मज के सुन्दर २ मिल के भगवान की स्तुति बचके होंते हैं अनत
चित भगवन प्रभु अगम है अगम है अलख है अलख शक्ति प
परम प्रकाश है कल्याण है मुक्ति सुख की खान है ऐसे भगवान
हृप २ चित करी भक्ति भक्ति करते सेवक नमस्कार बारम्बार क
लेते हैं रिद्धी तथा बुद्धि ॥३६२॥

॥ सर्वगुरू वर्ण सवैय एकतीसा छन्द ॥

वैमानी देवा देवेंदा तारा स्वामी तारा धृग
तिर्य लोक है जे देवा जेपताले भव्वा
सर्वेमाने वद पूजे तन्ते लोका धीश सिद्ध
अगोपगो छाहे नित्य आठी भाते मत्र
यारी ध्यावे शास्त्र वेता श्री सिद्ध ते वंदे शाखा
कल्पोचारी स्व्यापार यारी सोमा भारी

तं स्वामी को ररो नित्य या सेवे विश्रामो चित
पाव मेवा माता चित प्रमी श्रामा राखो है ॥३६३॥
मोदे कवी महानंदी ज्ञानी साधु ध्यावे थारो
संत सामें वासा पावे पोपे चित सुख्या ते।
थाको प्यारे वंद पूजे करि रीते शोभा गावे
जीव रूट पापां कूटे छूटे सारे दुखाते॥
दविंदी चक्रक्री सच्छी इंदव पुजत मित
रिद्ध सिद्ध बुद्ध किती पावे माच्या चाहीते।
त बद चे लोया धीश मवी किती विसानद
सम्यग्दृष्टी मेहा माया सञ्जा पाया चाहीते ॥३६४॥

अर्थ —उर्ध्वलोक के रहने वाले विमानी वासी देवते तथा देवतों के इन्द्र मिड्लोक म रहने वाले देवतथा देवतों के इन्द्र चन्द्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र तारागण आकाश में वाली निचे मिड्लोक में रहने वाले वाण व्यंतर देवते रहते हैं और पाताल लोक में रहने वाले भवनपति देवता तथा देवों के इन्द्र वहाँ में अनेक भव्य जीव हैं यह सर्व देवते श्री सिद्ध प्रभु भगवान को नमस्कार करके स्तुति करते हैं महा खुशी के साथ अङ्गोपाग को नमाकर विधि के साथ तन मन से सेवा करते हैं और यशो कीर्ति गुण गायन करते हैं। शास्त्रों के आणकार प्रवचन दया माता को दिया ने वाले सिद्धांत वेदों की महिमा करने वाले महा कविश्वर छन्द काव्यों के कथन करने वाले काव्य रचके अपार महा भगवंत के गुण गायन करते हैं आपने ईश्वर भगवान की नित्य सेवा शरणा लेते चित से ध्याने वंदे पूजे स्तुति पावे माता

पावे ॥३६३॥ जो जीव मुक्ति गमन का इच्छुक है। यह अज्ञानदगत हैं ज्ञानवंत हैं ऐसे मुनि ऋषि श्री सिद्ध परमात्मा का ध्यान करते हैं। और उसी पद को प्राप्त करते हैं। सदा ही पद पर विराजमान रहते है और आपने जीवात्मा को पोषण करते हैं उन्हों का चित्त समाधि रूपी साता में रक्त हैं आनन्द मय हैं ऐसे २ जीव पहल भव में वंदना पूजा स्तुति विधि पूर्वक करी हैं साथ कीर्ति गुण ग्राम गायन सेवा भक्ति से पूर्व कृत पापमय कर्मों के अंकुर जल मूल से उखाड़े फिर जन्म मरण रोग शोकादि दुखों से छूट कर देव ऋद्धि चक्रवर्ती ऋद्धि मिली इन्द्रत्वपना पूज्यपना गुरु पदवी मिली मिश्रहर समानिक पना अनेक तरह की ऋद्धि मिली हैं सम्यक दृष्टी दन शुद्ध उत्तम मुक्ति ४ प्रकार की सब सुख पावे ॥३६४॥

॥ दंतोष्ट अस्पर्श मत्त गयन्द-छन्द ॥

या जग-ठाकर के ठहरे हिय चाहि गई हटक अघ केरी।
आठ डरे अरु आठ जगे ढिग आर्ज नाथ की रीझ घणेरी।
जाय रही भठ के अघठाग इटाय कि आरति नाथ हि हेरी।
जागरही घट ठाहर ठौरकी औजय ठाकर के ढिग चेरी ३६५।

अर्थ—जो जीव मुक्ति में जाने वाला होता है उसके दिल में आती हैं कि मैं कर्मों का नाश करू ऐसे ही जो जगत् के स्वामी ठाकुर थे उनके चित्त में आइ और हृदय में ठहर गइ, घर कर गई और उसके मन की तरंगें ऐसे उठी की जैसे अग्नि विनाश पानी करे फिर उस चित्त की इच्छा थी अधिक इच्छा थी वह पाप की चाहना दूर होगई तब उसके ८ कर्म भयभीत होकर भाग जाते हैं और ८ गुण

सम्यक्त दृष्टि के प्रगट होने लगते विशेष करके। आगे और प्रकाश होने लगा अग्नि कारन तप संयम करके उसकी रीभ बढ़ात होई तब ज्ञान करके पहिचान भले बुरे की होई फिर पाप रूपी ठग आने उनको पराजय किया फिर मिथ्यात्व रूपी काठ की ढेरी को हटाया दूर फेंक दिया तब अंतःकरण में समदृष्टि जागी फिर ठिक शुभ शुद्ध भूमि हुई फिर वह और जगत के नाथ की मुक्ति चेरी है आपके सदा पास रहती है पुण्यवानों के॥२६४॥

॥-रसना-बंध अलंकार-मत्तगयंद-छन्द ॥

मेह शिषा रत केकि पपाइ का प्रेम हिये कवि वाक कहे हैं।
कोकि हिये अहि माहि वृष पिक माह कहू हिय प्रेम गहे हैं॥
कामकि काम हिय२ राम कु आग गहा खग देखा अहे हैं।
काहि कुंजोह महाविष माउ सुदोपटु की महिमा कि पहे है २६६

अर्थ:—मेघ में प्रेम होता किसका है वन का मोर का चातक का जैसे कविश्वर के वचन हैं। चकवे चकवी के हृदय में प्रेम होता है कोकिला वसंत ऋतु मे प्रीत रखती हैं। कामदेव की स्त्री को प्रेम कामदेव में ही होता है। चकोर पक्षी चन्द्रमा को देख के प्रेम करता है बालक का प्रेम माता में होता है ऐसे ही भगवान से प्रीत करो प्रेम करो धर्म से गुरु देवों से आगम से सत्य संग से जिनवाणी से जो अहिंसा धर्म प्रेम करोगे सुख पाओगे और पाप से ऐसे डरो जैसे अग्नि से सर्प डरते हैं मनुष्य तिर्यंच भी सत्य वचन हैं ॥२६६॥

एक स्थानी कण्ठ वर्ण दोहा।

गाहा गाहा गुही गहा अह आ अ इह अगाह।
अह अघहा अहका कहा, इह कहै खग गाह ॥२६७॥

अर्थ —एक का नाम गाथा है और एक का नाम अगाथा है अनेक जाति के छन्द करे तथा गद्य पाठ भी करे ऐसे पंडित जन ? कहते हैं यहा आत्मा अकथ है आगाध है अरू है यह आत्म के अघ (पाप) नाश करने वाला है दुखों का नाश करने वाला है। ऐसे कहने वाले पंडी इस आकाश को ग्रहण करे ॥३९७॥

सेहरा बन्ध द्रुति विलबत छन्द ।

परम ज्योति अनादि अनन्तजी परम नाण सुदसणवंतजी ।
परम शक्ति अनूप रिद्धनी परमशांति नमोप्रभु सिद्धजी ३९८

अर्थ —हे भगवत आप परम ज्योति स्वरूप हो अनादि हो आपकी आदि नहीं पाता कोइ भी आप अनन्त हो आपकी संख्या गिनती नहीं है आप अरूपी हैं आपका अन्त नहीं आता आप परम ज्ञानवत हो दर्शनवंत हो केवल ज्ञान दर्शन से आप संयुक्त हो आप परम शक्तिवंत हो आप ज्ञानदर्शनादि ऋद्धिवत हो आप परम शांति मुद्रा हो हे प्रभु आपको वार २ नमस्कार होवे ॥३९८॥

अथ श्री जिनेन्द्र देव स्तुति द्वादस स्वर अनुक्रम कथन दोहा ।

सार्व साधु सिर सीसमणि सुखद सुरगण सेव ।
सैना सोमत सोर्य दिय मत नमत स देव ॥३९९॥
कार्म काल किल कौन खय कुगति कूट के अन्त ।
क्रै सु कोट को मोख दे कंव रूप क सन्त ॥४००॥
इहि विध रचणा लोक की कही जिनेश्वर देव ।
प्रगट करे सब द्रव्य जग सो जिन जी को सेव ॥४०१॥

जिनके नाम सुगोत्र सुन उत्तम फल जिय पाय।
दरसण वदन कथा सुन ता फल कह्या न जाय ॥४०२॥

अर्थ —जो जीव भगवान् के दर्शन करने से वंदना से कथा सुनाने से बड़े ही पाप कर्मों का नाश होता जो भगवान् की स्तुति करते हैं वह उत्तम कुल म उत्तम जाति मे पैदा होते हैं इसका महा फल है और सर्व मुनिराजों के शिरोमणी होते है जैसे सप के सिर मणि है। उसी प्रकार मुनिजन के जप तप शील संयम ज्ञान ध्यान क्रिया कम शुद्ध शुभ करने वाले हैं वह मणी उनके मस्तक पर सोभु भित है इसलिये सर्व साधुओं क गुण गान सेवा करना ॥३६६-४०० ४०१-४०२॥

सबही दिस भौन विमान पुरे गिर कुड बने छवि छाजत हैं।
वर उरध मध्य पताल विषय जिहा भवनपति विराजत है॥
सुर वंदन पूजन सेवन ही नृत गीत वजत्र सु साजत हैं।
प्रणमो तिहुंलाल निरजन को महिमा पर आगम वाचत हैं॥४०३

अर्थ —भगवान ने कहा है कि सब दिशा मे मेरू पवत के चारों तर्फ देव हैं कहीं तो भवनों में विमानों में कहीं वाण व्यतर के नगरों मे कहीं पर्वतों में पवतों के ऊपर वनों में सुन्दर कूटों पर देवते अपनी सुन्दर छवि के साथ विराजमान रहते हैं और जिनों की शोभ ऊंचे लोक में मध्य तिर्छ लोक में निचे पताल लोक म होती हैं सर्व देवों की शोभा वह प्रधान हैं क्योंकि भगवान को देव वदना करने में सेवा भक्ति स्तुति करने मे चतुर है। और नाटक मे गीत गायन मे वजंत्र बजाने मे अति प्रसन्न होते हैं ऐसे त्रिलोकी के नाथ को बारम्बार

नमस्कार करते हैं। जोके तीन काल के ज्ञाता आगम निरंजन देव हैं उन्हीं की महिमा परम आगम्य सिद्धांत में गाई है। हम उन्हीं को बारम्बार करते हैं नमस्कार ॥४०३॥

समदृष्टि विशुद्ध सुबुद्ध बधै चित शांति मनेगुण वृन्द जगै।
परताप बधै महिमा पसारे रिपु भाग चले डर पाय लगै॥
निरजा बहु कर्म पुरातन की नव बंधत पुण्य सुमोष मगै।
जिन बंदन पूजन सेवनते फल होत मृषा मति नाहि ठगै॥४०४

अर्थ—जो भगवान की वंदना करते हैं पूजा भक्ति सेवा करते हैं उन्हीं का क्या फल है? उत्तर-उनका की अन्तःकरण से समकित निर्मल होती है और बुद्धि अधिक बढती है। चित में शीतलता पैदा होती है गुणों के समूह जागता है और जगत में परताप बहुता है और उसका देश विदेश में यशोकीर्ति फैलती है और शत्रु भी भय भीत होकर भाग जावें। कैर पगों में पड़ जावे और बहुत कर्मों की निर्जरा होती है पूर्वकृत दुष्कर्म भी क्षय होते हैं। नवीन कर्मों का संचय नहीं करता मुक्ति स्वर्ग मार्ग का द्वार खुल जाता। जो जिनेन्द्र देव की भक्ति करता है उस मन से उसकोई भी ठग नहीं सकता है, अगर कोई मिथ्यामति ठगना चाहे तो वह किसी के भी ठगाइ में नहीं आसक्ता परन्तु अन्य को भी सद् मार्ग पर लाता है॥४०४।

तन रोग हरै मन सोग हरै नव चूर हरै दुर कर्म हरै।
शिव धाम करै दिव भोग करै नरलोक विषय पद उच्च वरै॥
जग उत्तमता परिलोक तथा सुख संपति रान महत करै।
जिन भक्ति भली नरनारि सुनो भवसागर पार उतार धरै॥४०५

अर्थ—जो भगवान् की भक्ति स्तुति करता है उनके [illegible] रोग नहीं शोक नहीं [illegible] नहीं मन के [illegible] दूर [illegible] भूल को दूर करें अशुभ कर्म [illegible] और देवलोक की सम्पत्त सहस्र [illegible] वैसी समवशरण प्राप्त करें [illegible] सम्मान पावे सुख सम्पति [illegible] जिनेन्द्र देव की भक्ति ऐसी है [illegible] पहुंचावे भगवत पूजा स्तुति तीन प्रकार से [illegible] काया से मन को किसी कि [illegible] मन की भक्ति है। वचन से किसी को [illegible] वचन भक्ति है। काया से किसी को [illegible] काया भक्ति है योग विभक्ति कहा॥१०५॥

गुण मूल इगीस मरा [illegible] मावने।
समदृष्टि सुनत समायिक पोसा [illegible] दिनै रैन तरो॥
न वर जु आरम्भ कराय नहीं [illegible] सु मनै।
मुनिवेश स्वछंद [illegible] दर्शन रत्नत्रगुणे॥१०६॥

अर्थ—श्री भगवान की पूजा [illegible] इस प्रकार से श्रावक जन सेवा करने वाले होवें और [illegible] मित्र साथ सनाय जावें तो [illegible] ११ पडिमा [illegible] रूप सरधी साथ में परिवार है [illegible] सामायिक ३ पोषध दिन में ब्रह्मचर्य व्रत ४ दिन [illegible] ६ सचित्त का त्याग आरम्भ का त्याग ७ आरम्भ [illegible] जो पडिमा

लिये किया जावें वह लेवे नही ६ साधु वृतिवन्त सुखीवृ ी पाले १० श्रौर आपने ? कुल मे गौचरी करे ११ ऐसे मती सहेलिया के साथ लेकर भगवान की भक्त करे नगरकारादि स्तवन पढ़ें तन मन से भगवान का ध्यान किया करे ज्ञान म रमे ॥४०६॥

इम चेतन मित्र सखी युत होइ करॅ प्रभु भक्ति नमादि धुने।
तिहरो प्रभु द्वादस कल्प विषय सुर सपति दत पढोच तने ॥
गुण मूल सरा मग वीरा जहा सजनी दस दोय सरूप घने ।
मिलसेन करॅ तिह कल्प अरूप दिए शिरश इम ग्रथ भने ।४०७

अथ — इस भांति से चेतन राय आपने परिवार को साथ लेकर अपने ईश्वर परमात्म की भक्ति कर जसे काइ महाराजा की सेवा करे और सेवक करते है अगर सेवक पर कृपा की दृष्टि करॅ तो महा ऊ चा पद ददेते हैं श्री वर्द्धमान स्वामी जी ने श्रेणिक राजा को ऊ चा पद ददिया है इसी प्रकार से श्रावक सेवकों को १२ देव लोक तक पहुचा दिये जैसे महावीर स्वामी के माता पिता सिद्धार्थ राजा त्रिशला देवी माता ऐसे स्थान पर पहुचा दिये माता पिता और वहा पर महाऋद्धि भोगते है । उन्होंने भगवान की भक्ति अधिक की हैं इस वास्ते ऊचे गये ज्ञान में ध्यान मे तप जप म सत्य शील संतोष मे शास्त्र पढ़ने पढाने मे भगवान की भक्ति करने मे जो लगता है वह ऊच पद पाता हैं ॥४०७॥

वहु भात सुशुद्ध गहो चतुरो वहुभात सिद्धान्त लखो अमलो ।
तज चार कषाय गहो सरखे चतु धर्म चहु विध धार भलो ।।
चहु सघ विषय जस पाय लहो जिन पाद भजो अघपु ज दलो ।
शिरसाधन साध समाध गहो गतिचार मई भवछेद चलो ।४०८

अथ,—श्री जिनदेव ने कहा हैं। हे भव्यो ? जीवो तुम्हारे पास चार प्रकार का धन बहुत है। सोच के विचार के देखो प्रथम- मति ज्ञान के द्वारा आपके ४ बुद्धि हैं उत्पात बुद्धी १ विनयबुद्धी २ कमिया बुद्धी ३ प्रणामिया बुद्धि ४ ऐसी चार बुद्धी से काम लो आपणें हृदय में ग्रहण करो और प्रकार का सिद्धांत शास्त्र हैं एकतो चितान याद दुसरा विवादवाद तीसरा सुक्ष्मद्वार चोथा यथातथा भाव ऐसे चार प्रकार के सिद्धान्त को जानो पढो सुनो विचारो अमल में लो और चार प्रकार का मोटे पाप को छोड़ो क्रोधमान माय लोभ को यह ४ कषाय मोटा पाप हैं और जैन सिद्धान्त के ४ नाम हैं। (अङ्गवेद ११) (उपांगवेद १२) (मूलवेद ४) (छेद वेद ४) चार सरणे हैं अरिहंतों का सिद्धों का साधुओं का केवली परूपे धर्म का जो यह चार प्रकार के सरणे ग्रहण करते हैं यह जीव मोक्ष में जाते हैं सदा और चार हमें संसार से तारते हैं—ज्ञान शील तप भावना यह हमारा पवित्र धर्म है और भी पवित्र उत्तम धर्म हैं चार २ प्रकारे कहा हैं अभय दान सुपात्रदान पात्रदान लज्जा दान करुणादान ४ यह दान-ज्ञान दर्शन चारित्र तप यह धर्म का शरणा लेनेवाले चार संघ हैं जिनके नाम साधु साध्वि श्रावक श्राविका यह चार संघ के नाम हैं दुतिया नाम ब्राह्मण (१) क्षत्री (२) वैश्य (३) सुद्र (४) चार गति हैं नर्क तिर्यंच मनुष्य देवता। जो जीव ऐसे कामों में लागेंगे उनको तुमारा उद्धार होगा अगर धरम न करोगे तो यह संसार के दुःख का जाल कटना कठिन होजायेगा जन्मान्तरों से दुःख भोगने पड़ेंगे "अभय दान" सुयगडाग सूत्रमें फरमाया हैं कि "दाणाण सेट्ठं अभयप्पयाणं" अर्थ-सब दानों में अभय दान ही श्रेष्ठ है ॥४०८॥

सब सागर माहि बड़ो चरमो, गिर ऊन परो नर मेरू गिरि।
सब देव विमान विषय सरार्थ सिद्ध अनुत्तर ऋद्धि भरी॥
सुर राज महा बल अच्युत की लव सत्तमगा सुर आयु करी।
जिन शासनतुल्य नशासन हैं जिनदेव समान न धर्मधरी ४०६

अर्थ –सब असंख्यात द्वीप समुन्द्र हैं चुड़ी के आकार वाले एक से एक परे हैं द्वीप समुद्र सर्व से अंत का स्वयंभूरमण समुद्र नाम का समुद्र सर्व से बड़ा है उससे और कोई बड़ा नहीं है परन्तु सबसे ऊंचा है वह पर्वत इसी जम्बूद्वीप के मध्य में सुमेरू पर्वत लाख एक योजन ऊंचा है यह भी ऊंचा है सब पर्वतों में कहा है। और सर्व विमानों में सर्व से बड़ा सर्वार्थ सिद्ध अनुत्तर विमान है सर्व गुणों से भरपूर है इससे बड़ा और कोई नहीं है और कहा है। चौसठ इन्द्रों में से सर्व से प्रधान है एक अच्युत इन्द्र हैं इससे और इन्द्र बड़ा नहीं और जितने देव हैं सब उत्तम देवायु में सप्त लव वाले देव सर्वार्थ सिद्ध में उत्कृष्ट आयु वाले हैं बड़े और सर्वार्थ सिद्ध विमान में विराजमान हैं और विश्व में अनेक प्रकार के शासन हैं परन्तु प्रधान उत्तम निर्मल उज्जवल वर्द्धमान शासन और शासन नहीं हैं जगत् नाना प्रकार के प्रचलित हैं परन्तु जिनेश्वर देव के अहिंसा धर्म के समान अन्य धर्म नहीं हैं ॥४०६॥

नहीं कल्प समान तरोवर हो सुरराज मतंग समान करी।
नहीं औषध पारद सिद्ध समो जिम केशरि सिंह समान हरी॥
रवि तेज समोग्रह शिव नहीं जिनदेव समान न धर्म धरी।
इसकारण सम्यक्त्व सभी जिनदेव भजोविध भक्ति भरी ४१०

अर्थ—विदेव में कल्प वृक्ष के समान और वृक्ष नहीं है ऐरावत् [हा]थी के समान और हाथी नहीं है शुद्ध श्रद्धा के समान और औषधि [न]हीं जैसे केसरी सिंह है वैसा और नहीं सूर्य से अंधकार प्रकाश करने [वा]ला ऐसा नहीं है जिनईश्वर देव के अहिंसा धर्म से प्रधान धर्म नहीं श्री जिन अरिहंत देव के समान कोई धर्म धारण करने वाला नहीं [इस]लिये इस कारण से सब सम्यक दृष्टि जीव जिनेश्वर परमात्मा को [धा]रण करते हृदय में ध्यान धरते तन मन में भक्ति करते हैं ॥४१०॥

[दि]न रात्रि कहा मणिकाच कहां विष अमृत हिमर्क दयाल कहां।
[सिंह] स्याल कहा खर नाग कहा गुरु अंतर पंडित मूढ़ कहा ॥
[कहा] सुन्दर माल कुचील विषे धनवंत कहा नर दीन कहा।
[जि]न शासन मोहिमूपा मतमाहि अमावस्य पूनमरात्रि कहा ४११

अर्थ—दिन और रात्रि मे अन्तर बहुत है जैसे दिन के परमाणु [नि]र्मल शुद्ध है उज्ज्वल श्रेष्ठ है और रात्रि के प्रमाणु अशुभ निकृष्ट [हैं] दिन के प्रमाणु सम्यक दृष्टि तारने वाले रात्रि के प्रमाणु मिथ्या [दृ]ष्टि संसार में डोबने वाले हैं कहा उत्तम श्रेष्टिमणि और कहाँ [क]ाच का टुकड़ा मणि तो धनवान बनावे और कहां काच कंगाल [ब]नावे इसलिये मणि काच में बड़ा अन्तर है विष मे अमृत मे [अ]धिक अन्तर है। विष तो जहर संसार में जन्म मरण बढ़ाने वाला [है] और अमृत संसार से पार करने वाला है अमृत करने वाला सुख [दे]ने वाला है हिंसा का और दया का हिंसा तो जीव को संसार में [दु]ःख के गोते बार २ लगायगी और जन्म मरण करायगी पाषाण के [स]मान हृदय को करेगी। दया का नाम अहिंसा प्रेम है करने वाले

और संसार में सुख पायेगा दु खों से छूट जायेगा रोग सोग चि
मिटायेगी आनन्द प्राप्ति होगी ज म मरण मिटा मुक्ति या स्वर्ग
जायेगा सिह स्याल म बड़ा अंतर हैं गीदड़ कायर डरपोक पशु है
शेर एक मद बहादुर पशु हैं। गिदड़ से नहीं डरते सिंह से मय ड
हैं गधे मे और हाथी में कितना बड़ा अन्तर है गधा तो एक ग
पशु हैं और हाथी एक पशु राजा है। पंडित कहा मूर्ख कहा मू
पंडित से बड़ा अन्तर हैं पंडित तो एक चतुर आदमी को कहते
और मूर्ख एक पशु के समान को कहते हैं रूपवंत म भील अं
अन्तर हैं रूपवंत जैसे राजकुमार रूपवत कोई हो कहते हैं जैसे रा
कुमार हो और कुरूपा हो तो कहते हैं जैसे भील हो काला पशु
धनवान निरधन में बड़ा अन्तर है धन वाला तो सर्व को प्रिय लग
है। निरधनी को देख कर उसको कोई बात भी नहीं पूछते पर
दृणा कि दृष्टि से देखते हैं। रात्री रात्रि म भी अंतर है अमाव
की रात्रि काली है तो पूणमासी की रात्रि महाउज्वल निमल सु
देने वाली है पुन्यवाली है कहा दया धर्म ? कहा पाप मय
हिंस्यामृषावाद तो अमवास्य के जैसा है महाअंध घोरविघोर है प
मह। और दया धम तो पूर्णमासीवत महा प्रकाश करने वाली पु
निर्जरा मय हैं निम चादनी का प्रकाश अहिंसा धर्म ॥४११॥

जल बिन्दु कहा नर सिंधु कहा सरसास सुमेरु प्रमान ॥
नर रक कहा सुरवर कहा जग स्वान त्रिया सुर धेनु कहा
खग काग अशाचन हस कहा बिल कुन्जर आपरमच जहा
गणका कहु शीलसती चतुरो इम अंतरो धर्म अधर्म तहा४

अर्थ —जिनराज का कथन है कि विचार कर देखो दोनों का कितना अन्तर है कहा एक पानी की बूंद का और समुद्र रमण समुद्र पस खास का दाना कहा। और सुमेरू पर्वत कहा कुबेर महादेव कहा, जगत् में एक कुत्ती कहा और कहा कामधेनु गाय, एक अपवित्र पक्षी काग और महा उत्तम पवित्र राजहंस। तिल कुटे हुवे भुंगा कुसर कहा और उज्वल उत्तम मेवे मय चक्रवर्ती की खीर भोजन कहा। एक वैश्याकुशीलनी कहा और महाशीलवती सती कहा। जैसे इन वस्तुओं मे बहुत अन्तर है इसी प्रकार से धर्म अधम में भेद जान लेणा चाहिये श्री अरिहन्त देवजी का यह कथन है ॥४१२॥

विन शील न रूप सुहावत है न दया विन धर्म सिद्धान्त विषै।
नहि दान विना धनवंत जमी ज्ञान क्रिया नहीं मोक्ष पषै॥
विनजीव शरीर न काज किसो जिम अङ्क विना बहु सुन्य लिखे।
जिन देव भजे विन सिद्धनहीं भवजीव सुनो मिसरो हरिषे ४१३

अर्थ —बिनाशीलवान पुरुष के रूप शोभा नहीं देता है और ऐसे ही बिना दया दुनिया मे धर्म नही होता है ऐसा शास्त्रों में कहा है भगवंत ने बिना दान देने से धनवंत पुरुष दुनिया में शोभा नहीं पाता है। और नहीं यशवन्त भी कहावा है बिना ज्ञान के शुद्ध क्रिया नहीं होती है क्रिया के बिना मुक्ति नहीं है बिना जीव के कलेवर किसी काम का नहीं है जैसे अंक के बिना बिंदी शोभा नहीं देती चाहे वितनी हों। सर्व लिखना निष्फल है। गिणती में कुछ नहीं गिणेंगे, और ऐसे ही श्रीजिनदेवादि देव के स्मरण किये बिना कार्य की सिद्धी न होगी इस वास्ते हे भव्य जीवों सुनों खुशी से श्री परमात्मा का स्मरण करो जाप करो शुभ शुद्ध भावना भावों ॥४१३॥

गज यूथ न गर्जत सिंह जहा जिह सोर अहिमर न तहां।
खग संघन संत सिंचान धसे नृप तज भए दलचोर कहां॥
रए केशव गर्जत शत्रु भजे दुति कीट नहि जिम भानु महा।
अघ आध गए तप धार सजे न पलड रहे जिनदेव जहा ४१४

अर्थ —जहा पर शक्तिशाली सिंह होवे वहा पर हाथीयों का समूह होवे तो सिंह की जब गर्जन सुनी तो भय के मारे सर्व भाग जाते हैं। जिस स्थान पर मोर रहते हो वहा से भागते हैं। जिस युद्ध में वासुदेव महा प्राक्रमी गर्जता हैं तो वहा पर शत्रु ठहरते भी नहीं हैं भागते हैं। जब प्रचण्ड तेजस्वी सूर्य का प्रकाश होता है वहा पर जुगनु का प्रकाश किस गिणती मे है? जहा पर अनेक प्रकार के पक्षी गण बैठते हैं वहा पर एक सिचना नाम का महाबली बाज आजावे तो तब वहा पर से सब पक्षि गण भाग जाते हैं भयभीत हाकर जहा पर महा सुरवीर राजा का प्रताप होवे तो वहा पर चोरों का दल ठहर नहीं सके हैं और एम ह। जहा पर तप महा सूर्मा तप स्या में सज जावे तो वहा से पाप और पापों की सैना ऐसे भागती हैं जैसे घोड़े के सिर से सिंग भाग गये होते नहीं हैं और ऐसे ही। श्री जिनेन्द्रदेव का जहा पर समोसरण होता है वहा से पाप की तरह मिथ्यात पाखंड मत भाग जाता हैं रहता नहीं ॥४१४॥

नगरी नृप श्याम कथा युति चतुरंग चमूयुत सेनपति।
रजनी शशिचार मई शशे मो युतदेव सभा पुर हूत सति॥
दिन सोमत निम्मल खेर विमों कुलगान सुशील धरी सुवृति।
इम द्वादस अंग सुधर्ममना जिसमध्य जिनेश्वर मोखगति ४१५

अर्थ—श्री वीतराग देव [illegible] है [illegible]
दकर जैसे नगरा कीसी न्यारंत राजा की [illegible]
और चतुरंगी सैना होवे हाथी घोड़े [illegible]
सैना और सैनापति होवे तो राजा [illegible]
का हो चन्द्रमा तार नक्षत्र [illegible]
शोभा पाता है। ऐसे ही [illegible]
सब हो सूर्य की तो सूर्य [illegible]
जीव का होवे तो [illegible]
आप अपनी सभा में [illegible]
पाते हैं जैसे की [illegible] है।
ऐसे ही द्वादशांग [illegible]
भगवान जिनानन [illegible]
पाव सत्य है [illegible]

रवि [illegible] है।
शशि [illegible] है॥
पवि [illegible] है।
जिनराज [illegible]

अर्थ—[illegible]
और [illegible]
[illegible] हैं वैसे ही [illegible]
[illegible]
[illegible]

अर्थात्—पतिव्रता सती स्त्री अपने भरतार को सिमरण करती है। उसे प्रेम प्रीति करती हैं। जैसे बालक अपनी माता को चाहता है और उसके साथ मोह करती हैं ऐसी ही श्री जिनेन्द्रदेव के चरण कमलों म कविश्वर प्रेम करते हैं। हाथ जोड़े वंदना करे स्तुति करे सुन्दर छन्द कहे ह जसे यह सबको चाहते हैं ऐसे ही परमात्मा भक्त ॥४१६॥

॥ सर्व गुरू वर्ण अलङ्कार सवैया-तईसा ॥

एका मामी रूपा टारी रामी गंगाधारा हंसी हंसा लीते ही।
अक्कोसलो पारा कुंदूमोती मालासुक्को राशाभार चिन्हें जीतेही।
देसर फुन्की फैली सम्मादेवी मब्बा इहो साची सुधी मित्ताही।
सामीजूकी एमी कित्तीलोएसोहे इच्छापूरे सेवो भव्वोनित्ताही ४

अर्थ—पूर्णमासी रजनी पति चन्द्रमा रजत की चान्दी मंदर क लरा अटारी ऊंची हीरों की राशी हिमला दर गंगाजी के जल की धारा हंसी पक्षी माला,हंसा नदी की डार यह सब इनने श्वेत वर्ण हैं। शङ्ख रत्न श्वेत सेल श्वेत पाद श्वेत मचकुन्द के पुष्प श्वेत मुक्त मोती श्वेत फल की दाम माला श्वेत शुक मद कर तारा श्वेत हैं सब श्वेत वस्तुऐ हैं जितनी भी निमल उज्वल, भगवंत की यशो कीर्ति है जोकि तिनलोक में शोभा पाती हैं और सेवक की मन वंछा इच्छा पूर्णकरती हैं हे भव्य जीवो ? सेवो सारस्वती नित्य वाणी भगवान की वाणी शिक्षा ने ससार से सारे प्राणी सत्य हैं ॥४१७॥

॥ इन्द्र वज्र-छन्द ॥

दर्शाय देवो अरिहंत देवो साधु जितात्मा गुरू देव सेवो ।
धर्मंदया सत्यबोला सुज्ञान अयरत्न धारो समदृष्ट मान ४१८
देव सुर नाग यक्षा पिशाचा भूता महा राक्षस दुष्ट वाचा ।
भीमादराता धृतिन चल ता सम्यक् धारा चलते न झ ता ४१६
सिद्धौघेंघो कर्म कलाप कारी दुति मिलावे अपवर्ग नारी ।
विद्या मिलासे श्रुत देवता हैसम्यक् दृगी कांत सवता हैं ४२०
सम्यक्त धारी गुणवंत सारी आनन्द कारं सुख रोग टारा ।
धर्मानुरक्ता जिनरा भक्ता पावें प्रहरता निजमुक्त करता ४२१

अर्थ—देव (१) गुरू (२) धर्म (३) यह तीन मेरे रत्न हैं। इनको समदृष्टि धारण करता हूँ देव अरिहंत मेरे देवाधिदेव हैं। गुरू हैं मेरे पंचमहाव्रत के धारण करने वाले हैं। यति हैं जिन्होंने आत्मा आपनी और यह ३६ गुण के धारण करने वाले। गुरुदेव न्यायमय मेरा धर्म है सत्य बोलना ब्रह्मचर्य पालन करना दान देना यह [illegible] तीन रत्न हैं गुरुदेवों की सेवा करना शुद्ध श्रद्धान सम्यक् [illegible] करना ॥४१८॥ देव दुष्ट देवता असुरकुमार नाग कुमार [illegible] राक्षस दुष्ट बोलने वाले महा भीम रूप भयानक [illegible] नेम धर्म कर्तव्य से चलिते हैं लेकिन जो धर्म दृढ़ हैं [illegible] वत यह नहीं चलते हैं ॥४१६॥ सिद्धों के नाम [illegible] हैं [illegible] सर्व कर्मों का नाश करने वाली हैं यह दुति [illegible] स्त्री मिलाने वाला हैं। और विद्या के भंडार [illegible]

देवी को कविन्दर बार २ सेवा करते गुण गाते हैं ॥४२०॥ जो जी
सम्यक् धारक हैं वह बहुत ही गुणवान हैं आनन्द के मेन याने
जिन्हों के संशय भ्रम दूर हुआ और यह धर्म में अनुरक्त हैं जिनरा
के भक्त हैं पापों के प्रहारक हैं आपको मुक्ति वर्त्ता है ॥४२१॥

दोहा सोरठा- द्वादशमासी हेमवय द्वादश मासी दान ।
द्वादश निध सब दान लब्ध द्वादस गुण नगर ४
द्वादस गुण अधिक सोभत द्वादस परिषत ।
द्वादस कथित सिद्धांत स्तोत्रे द्वादस वन्द नग४
द्वादस प्र मत पाप द्वादस वाणी हेम चय ।
द्वादस कलप जाय मापी श्री जिनदेव जी ॥४२
निभ्रश द्वादस मांत पुनि प्रतिमा द्वादस वहै ।
श्रीजिनवर चित्त शांति द्वादसमास सदा नमा ४
आहक द्वादस वपे पाप उदय गर्भे रहै ।
सर्व नवम को करम गुरुयुत द्वादस पद का ॥४

अर्थ—श्री तिर्थंकर स्वो ने प्रथम (२ आग की पाटी
करी थी और जब महवास मे थे सो संयम लेने १२ मास पूर्व दा
दिया हैं देदेते हैं और देवेंगे। "श्री तीर्थंकरों का दान" सुधर्मा दे
लोक के स्वामी श्री शक्रेन्द्र का उच कंपित हुआ तब उन्होंने अवधि
ज्ञान से इसका कारण जाना कि श्री तीर्थंकर भगवान को (अप
दीक्षा ग्रहण करने का समय निकट आया हुआ देखकर) वार्षिक द
देने की इच्छा हुई है। तथा मुझे उनके भंडारों को द्रव्यादि
भरना चाहिए। इस प्रकार निश्चय कर उन्होंने उत्तर दिशाधिप

भण्डारी (भण्डारी) वैश्रमण (कुबेर) देवों को बुलाकर आज्ञा दी कि प्रजा की चोरी डाका आदि से बिलकुल कष्ट न देना तथा कोई ऐसा काम न किया जाय जिससे किसी का हृदय दुःख पावे बल्कि ग्राम नगर आगर पुर पत्तन द्रोणमुख (बन्दरगाह) आश्रम सन्निवेश पल्ली पर्वत गुफा द्वीप ग्राम त्रिक चौक चौवट राज पथ घर हाट श्मशान नदी तालाब बावड़ी भूमि और खुले स्थान आदि में जो द्रव्य हो पैर जिनका कोई मालिक न हो ऐसा द्रव्य का संग्रहकर श्री तीर्थंकर भगवान के भण्डार को भरो। शक्रेन्द्र महाराज की ऐसी आज्ञा को वैश्रमण देव ने सविनय स्वीकार कर अपने स्थान को आये तथा त्रियक देवों को बुलाकर उनको शक्रेन्द्र महाराज की आज्ञा सुनाई उक्त आज्ञा को स्वीकार कर वे त्रियक देव मनुष्य लोक में आये। यहां उन्होंने कोई ऐसा कार्य नहीं किया शक्रेन्द्र जी की आज्ञा के विरुद्ध हो बल्कि वे निर्दिष्ट किये हुये स्थानों का द्रव्य ग्रहण करके श्री तीर्थंकर भगवान् के भण्डारों को भरने का कार्य करते रहे जो द्रव्य श्री तीर्थंकर जी के भण्डारों में भरा गया था वह सोने की मुहरें (सोनैया) के रूप में था तथा उस पर श्री तीर्थंकर जी और उनके माता पिता का नाम खुदे हुए थे।

तत्पश्चात् श्रीशक्रेन्द्रजी ने धाणु व्यन्तर देवको बुलाकर आज्ञा दी कि जिस क्षेत्र में श्री तीर्थंकर भगवान का जन्म है उस क्षेत्र के वैताढ्य पर्वत पर निवास करने वाले विद्याधरों की श्रेणी श्रेणी में उद्घोषणा करा कि—श्री तीर्थंकर भगवान [illegible] [illegible] में प्रथम पहर दिन तक वार्षिक दान देते हैं [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

इच्छा होने वे लोग वहां पहुंच जावें। श्री वाण व्यंतर देव उक्त आज्ञा को स्वीकार कर मनुष्य लोक में आये और निर्दिष्ट किये स्थानों में उक्त प्रकार से घोषणा की पुनः शक्रेन्द्र जी ने ज्योतिष देवको बुलाया और निम्न प्रकार से कहा "श्रीतीर्थंकर भगवान के हाथ से दान ग्रहण करने वाले वे लोग जो कि दूर पर रहते हैं उनको भगवान् के नगर में पहुंचावो और मार्ग में उन्हीं कांटे आदिका कष्ट न होने पावे तथा कामों को भी हानि न पहुंचे" ज्योतिषी देव श्री शक्रेन्द्र महाराज की आज्ञानुसार दान ग्रहणार्थी मनुष्यों को श्री तीर्थंकर भगवान के नगर में पहुंचा देते हैं।

जब तीर्थंकर भगवान् दान देते हैं तब चार इन्द्र सेवा में खड़े रहते हैं प्रथम श्री शक्रेन्द्रजी तीर्थंकर भगवान के हाथ को सहारा देते हैं। जिससे दान देते समय भगवान को श्रम प्राप्त न हो सके। २ दूसरे देवलोक के श्री ईशानेंद्र भाग्यानुसार न्यूनाधिक (कम ज्यादा) करते हैं। अर्थात दान ग्रहणार्थी के भाग्य में द्रव्य कम हो और तीर्थंकर जी के हाथ में अधिक द्रव्य हो तो उसे निकाल लेते हैं। उसी प्रकार दान ग्रहण करने वाले के भाग्य में अधिक द्रव्य हो और श्री भगवान के हाथ में दान का द्रव्य कुछ न्यून हो तो उसे पूर्ण करते हैं। तीसरे दक्षिण दिशा के निवासी भुवनपति देव श्री चमरेन्द्र हाथ में छड़ी ग्रहण कर दान स्थान पर खड़े रहते हैं और वहां शांति के साथ व्यवस्था करते हैं। चौथे धनेन्द्रजी महाराज भंडार से द्रव्य निकालते हैं तथा लाकर देते हैं। उक्त प्रकार से श्री तीर्थंकर भगवान् प्रातःकाल से सवा प्रहर दिन तक सदैव (१ ८०००००) एक करोड़

आठ लाख मुहरों का दान देते हैं। जिसके वजन का प्रमाण इस प्रकार है ॥

४ मधुफल गने का १ सरसों का दाना ५ सरसों के दाने जितना वजन १ उड़द के दाने का २ दो उड़द के दाने जितना वजन १ रत्ती का ५ रत्ती का १ मासा १६ मासे की १ मुहरया सौनैया ३० सौनैया का १ सेर ४० सेर का १ मण का शकट (गाडा) ऐसे २२५ शकट (गाडे) की सुवर्ण मोहर का नित्यदान करते हैं। ऐसा बारह मास के हर ३८८८० ०००० (तीन अर्ब अठासी करोड़ अस्सी लाख) मुहरों का दान देते है। जिसके वजन का प्रमाण उक्त प्रकार ही बत्तीस लाख चालिस हजार (३२,४००००) मण होता है। जिससे इक्यासी हजार (८१००० गाडे भर जाते हैं जब श्री तीर्थंकर भगवान् दान देना आरंभ करते है तब उनके माता पिता ३ दान शालायें (भोजन वस्त्र भूषण) स्थापन करते हैं। और नगर में उद्घोषणा कराई जाती है कि भोजन वस्त्र और भूषण की जिस किसी को चाहना हो वो वे ले जावें यदि तीनों ही वस्तु की चाहना हो तो तीनों ही लेना सकता है। इस प्रकार वर्षीदान के १२ महिने पूर्ण होने के बाद श्री शक्रेन्द्रजी ज्योति देवता को बुलाकर कहते हैं कि दान ग्रहणार्थ आये हुए मनुष्यों में जो दूरस्थल के रहने वाले हैं उनको आपने २ स्थान पर पहुचादो कि मार्ग में उन्हें कांटा कंकर इत्यादि से किसी प्रकार का कष्ट न हो और कांटे इत्यादि की हानी भी न होने पावे इस प्रकार श्री शक्रेन्द्र की आज्ञा ज्योतिषी देव सविनय स्वीकार करके दूर स्थल के मनुष्यों को सुख से अपने २ स्थानों को पहुंचा देते हैं। इसी दान के देने

श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामीजी से श्रीगौतम स्वामीजी ने सविनय वदना करके प्रश्न किया कि अहो परम पुज्य भगवान ? श्री तीर्थंकर भगवान वर्षी दान में जो द्रव्य देते हैं वह द्रव्य भव्य जीवों के हाथ लगता हैं या अभव्य जीवों के ? भगवान ने फरमाया कि अहो आयु ष्यवत चिरजीवी गौतम ? तीथ करों के दान में दिये द्रव्य को भव्य जीव ही ग्रहण कर सकते हैं न कि अभव्य । तथा अगर कदाचित् अभव्य के हाथ मे आभी जावे तो वह उसके पास रहता हैं नहीं गौतम स्वामी ने फिर २ प्रश्न किया कि अहो भगवन ? तीर्थ कर जी के हाथ से प्राप्त हुये द्रव्य से भव्य जीवों को क्या लाभ होता हैं ? भगवान ने फरमाया कि हैं गौतम ? भव्य जीवों को प्राप्त हुवा वह दान कभी क्षीण नहीं होता और उस द्रव्य का व्यय शुभ कार्यो म होता हैं तथा जिसके घर मे वह द्रव्य रहता हैं उसके घर में १६ प्रकार के बड़े रोग नहीं आते १८ प्रकार के कुष्ट (कोढ) नहीं होत ८४ प्रकार के वादी (वात) के रोग नहीं होते बल्कि पुरानी व्याधिया भी उसके यहां से नष्ट होजाती है। ऐव अपने प्रियजनों का और इच्छित पदार्थो का वियोग नहीं होता।

प्रतिरोज देते थे पीछे संजम लिया फिर १२ प्रकार का तप किया और उसे कर्मो की निजरा हुइ उस तप के प्रभाव से गुण स्थान छोड १३ में गुण स्थान प्राप्त होने के बाद केवल ज्ञान पाया १४ गुण ठाणे आयोगी होके फिर अजर अमर पद पायेंगे ॥४२२॥ भगवत की १२ प्रकार की परिषदा शोभा पाती, भवनपति देवता १ देवी २ वाण व्य तर देवता ३ देवी ४ ज्योतषी देवता ५ देवी ६ मनुष्य नर ७ नारी ८

तिर्यंच ६ तिर्यंचनी १० विमानी देवता ११ देवी १२ ॥ यह १२ परिषदा भगवंत की होती हैं। और अनन्तगुण अरिहंतों के देखो जो प्रगट होते हैं अनन्त ज्ञान अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र, अनन्ता तप, ४ बलवीर्य पराक्रम, अनंती स्यायक सम्यक पालनेवाले चौतीस अतिशय, पैंतीस वाणी वज्र ऋषभ नाराच महायणा समचौरस संठाण चौसठ इन्द्रों के पूजनी का एक होना आठ गुण के धरणे वाले हैं यह १२ गुण अरिहंता के हैं १२ देवलोक कल्प आवर १२ अनु पाल के १२ वारा कल्प तक १-२-३-४-५-६-७ ८ ६-१०-११-१२ यह कल्प देवलोक और अरिहंत देव के १२ आग द्वादर्श वाणी आरंग एव दिष्टि १० तिसे शास्त्रों को पढ़ पढ़ावे सुने सुनावे ॥४२३॥ श्री तीर्थंकर देव की १२ प्रकार की वाणी हैं और १२ व्रत श्रावक के पाने १२ में कल्प तक जा सका हैं ऐसा श्री प्रभुजी ने कहा हैं जो निर्दोष धर्म करता हैं। वही जाता हैं ॥४२४॥ पापी आव उत्कृष्टा १२ वर्ष तक माता के गर्भ में रहता हैं (और बृहस्पति गृह का एक वर्ष सारे नक्षत्रों को भोग लेता है तो उसका एक युग हैं १२ वर्ष का क्योंकि नक्षत्रों का स्पर्श देरी का काम है ॥४२५॥ साधुओं की तप करने की १२ पडिमा हैं देखो अंत गढ सूत्र में कर्मों की निर्जरा १२ प्रकार से होती है श्री भगवान को मैं १२ मास ही निस दिन नित्य उठ तन मन शांति चित्त से बारम्बार नमस्कार करता हूँ ॥४२६॥

॥श्री जिनवाणी महिमा वर्णन सर्व लघु वर्ण दोहा॥

परम अनघ अविचल अर्थ शिवनिध शिव मग रचन।
अगम अलप गुण अतुल मय नय २ जिनवर वचन ॥४२७॥

अर्थ — भगवान के निरय वर्ण सेय भगवान कैसे ध परम ज्योति अनुपम पाप रहित थे अखिचन हैं चलत नही स्थिर है अक्षय गुणों के निधि है निधान हैं मुक्ति मार्ग के दर्शान वाले हैं आगम है अजस्र है जिनों के गुणो को कोइ भी देख नही सकता हैं ऐसे भगवान के वचन हैं और उन्हों की सदा जय होवे जिन्हों को म बार २ वन्दन करता हूँ ॥४७७॥

॥ सर्व गुरू वर्णं दोहा ॥

थारी सोभा लोक में फूली फैली बेल।
वन्दौ वाणी माय जू भावों भाता मेल ॥४७८॥

अर्थ —श्री वाणी दयीनी को मैं वनती करता हु कि हे माता ? तुम्हारी कीर्ति संसार म जैसे फैल रही हैं जसे लता फैलती फूलती है ऐसे ही आपकी दुनिया मे शोभा कीर्ति फैलती है हे ? देवी श्रुत वाणी माता मैं तुमको बारम्बार वंदना करता हूँ सासति साता मुझे मिले कृपा होवे आपकी ॥४७९॥

सब गुरू दार्घ वर्णं प्राकृत रूप शब्दालङ्कार सवैया तेइसामा ॥२२॥

आमोदासे पुन्ना सिद्धा सुद्धा नन्दा महा घणा उग्गा वाणी हैं।
लोया २ दमी भाखी जीवा भीवा सब्बे भावा भव्वा महाआखी है
देवी देवा जक्खा नागा आगाहो गधव्वा मवन्ती आनदी है।
सा सघंडा वाणीदेवी जावेवी मोहग्गा दाई सामावा हंरगीहै ४२६

अर्थ —श्री अरिहन्त देव तीर्थंकर देवकी वाणी कैसी हैं आमोदा

अति ही प्रसन्न सुशी हर्ष के प्रदान करने वाली है, संपूर्ण पुन्य के देन वाला है सीधा सर्व कार्य सिद्ध करने वाली है। सुधा निर्दोष बुद्धा के देने वाली, नंदा आनन्द वृद्धी की दाता है भद्रा कल्याण करने वाली है धन धान्य की दाता है, रम्मा प्रधान सब से बड़ी है ऐसी वाणी है लोकालोक को प्रकाश करने वाली दर्शाने वाली, ऐसी भाषा है जीवा जीव को बताने सर्व जीवों के मार्गों बताने वाली है वाणी जो मनुष्य और मनुष्यों उन्हों को भगवान की वाणी पर श्रद्धा अति है और यह कहा २ पर है। देवी देवता जैसे यक्ष नागदेव आदि पताल के लोक में वसन वाले है। गंधर्व आदि सर्व भव्य है मंगलमय है। आनन्द के पाने वाले हैं और यह आराधक होने वाले हैं, सबी श्रद्धा के पाने वाले है जीव २ ने वाणी की सेवा करली वह जीव अक्षय सुख पावेंगे और मैं सदा ऐसी वाणी को बार २ वंदना नमस्कार करता हूँ क्योंकि यह वाणी इसकी सेवा से अचल सुख मिलता है सत्य है ॥४८६॥

खंती दंता कूली सच्ची तुट्ठी गुत्ती मुत्ती मती लोग सोक्खे करी है अज्जो नगे सच्चे मुत्ते गाहा सीया छदा रूजा सालकारी मही है आसा भाई कम्मवाई मग्गधाई धम्म दाई रूची किरिया पढ़ा है सच्चा रम्म पुन्ली फल्ली वाणी देवी साहू मामी देसे २ नऊहैं४८७

अर्थ—भगवान की वाणी खंती क्षिमा के देने वाली है। दंती इन्द्रियों के दमन करने वाली है। मुत्ती कुन्लता के रहित सरलता के देने वाली है। कुली अभिमान के वर्जने वाली तुट्ठी लोभ को वर्जने वाली संतोष रखने वाली गुत्ती तीन योगों को गोप के रखने वाली

मुक्ति कर्म यत्न से छुड़ाने वाली संती सातिरस के देने वाली लोगों को तोलने के लिये यह एक बटा हूँ जिसे शुभाशुभ पदार्थ जाचले छोटे बड़ों को जाँच कर लेवे। कंडी यह एक तराजु हैं ? आत्मा का ध्यान करो यह कहा २ पर फिर कर यह जीव आत्मा आइ है कर्म आपने आत्मा को किस २ स्थान पर घुमाते हैं खटा खोटे २ मार्ग में कर्मों ने घुमाया मुझे धर्म के मार्ग मे लाने वाली है वाणी भगवान की वाणी सची है निश्चय ही है और अखंडित हैं वाणी का कभी नाश नही होगा अग११ उपंगे १२ को सूत्रों में और शास्त्रों मे गाथा में गिताओं में छन्द रूपी अलंकारों में संयुक्त सारे। अक्षरों में वाणी का मंडन किया है, जैसे सर्व वनराय फूलों मे और सब प्रकार के फलो मे ऐसी वाणी देवी सोभा पावे भगवती देवी वाणी को साधु मुनि महात्मा देश २ में सुनाते फिरते हैं जैसे लोग उपाहार बाँट करते है ऐसे ही मुनि महाराज हैं ॥४२ ॥

छेहा रूपी सखानठी गोखणी माखणी विजा राग रोगा वणी वसा मचा अका रूवी दीहा २ पजा २ ठामे २ मही है।

शगाई सव्व के दव्वे भूप मव्व हाणे माव तिष्ठगाथी सोवागी ते चिन्ही तेलिमी वाणातिलाए विक्कले सती साह चित्त धारी

प्रर्थ —लिखना रूप आकार वाली अक्षर मइ जिसमे सख्यात वर्णी हावे जैसे एक दो तीन चार पाँच ऐसे सख्यामें गिनती गुणाकार करणी दुगणी तीगणी चौगुणी इत्यादि गुणाकार करणी फिर २ इसके मागे करणे जैसे बीशं त्रियाशं चतुराशं यावत् संख्यात असंख्यात विधा अनेक विधा एक वर्णी अनेक वर्णी हैं वर्णे वर्णे रूपी मय

ा रूपी अक्षा रूप जैसे १-२-३-४-५-६ ७-८-६-० [illegible] विधि से
ो दीघ धरा मइ अर्णांणां दीर्घ वर्णामंदं पगापद वच पयगागद पाठ
स्थान २ में मानली कहे मती है। एक की आदि से लेकर सर्व
; वर्तमान है एक से लेकर सो तक चलो, सो से लेकर हजार
चलो, हजार से लेकर लाख तक चलो, लाख से लेकर करोड़
चलो, करोड़ से लेकर अर्बों तक चलो, अब से लेकर खर्बों तक
त संख्याते तक द्रव्य मे वर्त्तनी ऐसा पर्याय हुवा है होगा भूतं
तेव काल की रचना, भव्य वर्त्त मान काल की रचना। होवे भावे
वैष्यत् काल की रचणा ऐसी वाणी पदार्थ भाषी भी शीर्यांगा से
ारी है भगवान की वाणी तीन शब्दों में है जैसे 'द्रव्य' गव उपादेय
एने योग त्यागनेयोग आदरनेयोग तीन लिंग है स्त्रीलिंग शब्द
[illegible] शब्द लिंग नपुसकलिंग शब्द ऐसी वाणी तिन लोक में प्रमाण
ऊचे लोक में मध्यलोक में अधोलोक में यह वाणी है। और तीनों
ल सदा साती होवी है इस प्रकार के सरस्वती वाणी देवी
यत्त में धारी है छोड़ना नहीं सदा यह मोक्ष प्रदान करने वाली
; ॥४३१॥

ो सद नाना मद्दा नाना सद पमे अद्दे [illegible] अ[illegible] है
ऊवे सोई मामा रूवी सपन्ना बन्ने साली धन्ने [illegible] सिता है
ादमी आलोपलोय पारिसे घम्मे [illegible] एए पुन्ने पाइ है
मिच्छा निदा[illegible] वाणी काणो वाणी [illegible] सुदा [illegible]

अर्थ —एक शब्द के अनेकार्थ है और अनेकार्थों का एक [illegible]
जैसे नाम माला कोश [illegible] विशेष [illegible]

रूप है सर्व श्रुत भाषा रूपी संपत्ता होवे होवे इन्द्र के कानों में मचा करे और सर्व जी मित्र है। श्रादर्शी दर्पण के समान लोकालोक श्रादर्शी श्रालोप लोक में देखने वाले संसार में चारित्र धर्म के लिये में कसोटी है जसे कंचन की परीक्षा की जाती है कसोटी के द्वारा यह जिन वाणी जिस जीवात्मा का पूर्ण पुण्योदय हो उसको मिलता है। मिथ्यात रूप निद्रा आदि भी जो है दूर करती है। वाणी मानों थाल बजाने वाली जैसी काशी से उत्पन्न होने वाली की टंकार का स्वर जैसे मिथ्या है निद्रा, भगवान की वाणी रूप टंकार से भाग जाती है। सुधा जप्रता समता रूपी प्राप्त होइ है ऐसी जिन वाणी संसार से पार उतारने वाली है ॥४३७॥

नाना रामे फल लीमा धन्मे धामे केऊ मोह मोखे मग्गे दंडी है
दाने सीले इच्छा रोके भावे शुद्धेस्‌र रस्ले याना चोखी मडी है
इच्छा पूरे विसा वेल्ना देश धेनु जिआ देवी दानू जेवा चढी है
मोखा राही विश्वाबीस धमो मानी वाणी देवा नदी मेहा खडी है

अर्थ—नाना प्रकार के रामे श्राराम बाग मे ज्ञान रूपी जल की धारा बहती धम रूप मंदिर पर ध्वजा शोभती है क्योंकि यह एक मोक्ष मार्ग म जाने के लिये सिधी दण्डी रस्ता है। और जो संसार के विषयों की आशा करते हैं उस इच्छा को रोकके शुद्ध भावों से जो दानशील तप करेगा और जो ऐसे पूर्णा को सेवेगा वह निर्दोष दान शील तप आदिक जल पावेगा वह मोक्ष रूपी अमर फल खावेगा और वह संसार से लुप्त भाव रखेगा ऐसी भाषा यह सची है कही है। श्री भगवत ने कहा है कि जैसे चित्रा नामक एक बेल लता होती

है। और चिंता मणि रत्न हैं एक कामधेनु गौ है एक विद्या देवी है
जो पुरुष इसको प्राप्त करने की इच्छा करता है वह कभी दुखों का
सामना नहीं करता है ऐसे ही जो मनुष्य संसार से अपनी इच्छा को
रोकेगा वही जीव मोक्ष में विराजेगा, क्योंकि मोक्ष का आराधक
जब होगा तब जिन वाणी को सच दिल से गुण गायगा, वाणी का
शुद्धी शाली होगा और तिर्थाधीसके संघ की सेवा करेगा फिर वह
सर्व पापों को सहन कर नाश करेगा ॥८३॥

गाथे रूरे रुक्खे मानो बोलोवास तिटी दक्खा चित्त मोहती
समत भावं मिने २ कारी नूल खपगी स बोहंती ॥
भाई पुष्फे सपुन्नी रूवे गई रूरे रस्से चगेरी सी सोहती।
म्मे जाहजे निजामे साहू गिन्ही दूरा दमी खेम कारी टोहंती ॥

अर्थ—चार मघरूपी आनराम मानों बाग हैं और उसमे बोल
ती हैं मानों जैसे बसंत ऋतु उपनी हुइ आम्र की मंजरि की प्यारी
कोकिला कोयलवत् और चतुरा को चित्त को मोहने वाली हैं सम-
कित भाव और मिथ्यात भाव इन दोनु को जुदा कर देती हैं।
निश्चय में जैसे छाज दो उसको बत आपणा ऐसे ही सुबोद्ध देवी है
जीवों का ज्ञान नेत्र के प्रदान करने वाली है। गुण देकर और पूज
रूप भाई हों कि संपूर्ण चंगेरी जैसे शोभा पाती है भरी हुइ धर्म रूप
पोत जहाज तारक रूप मध्या साधु मुनि महात्मा ने महण करी
जिस प्रकार से दुर दर्शक यंत्र द्वारा सब वस्तुओं का ज्ञान हो जाता
कल्याण करने वाली हैमजेजी है संसार समुद्र को ऐसी श्रुत देवी
भगवती है जिन वाणी सत्य वचन है ॥८४॥

तिन्हा शाहीहर्ता सोमामिच्छा मोगी जाईदवी फेंकी जाई गु जी है
भव्यामानी चित्त आनी मोस दारे देवा वासे ताला खोली कु जी है
ससारे निराधे नावा मगल्ली कप्पाणी मेरी साहु कप्पे पुंजी है
जैया शाही वाणी देवी त लद्धो मोकिट्ठी सिधी सावी सात भु जी है

अर्थ —जीव के साथ तीन प्रकार की व्याधि हैं सोमा अमृत हैं मिथ्यात सर्प सुता हैं और जाइ पुत्री मानों गु जित हैं, ३ व्याधि मिथ्यात सर्प सुता और पुत्री यह ३ व्याधि जीव के साथ हैं सोमा अमृत का नाश करती हैं जब गु जित हैं, भव्य जीव ऐसा मानते हैं और ऐसा चित्त म धरते हैं और कहते हैं कि मुक्ति के द्वार की स्वर्ग के मन्दिर की एक ताला खोलने की ताली चाबी (कु जी) हैं संसार समुद्र में यह एक नविका हैं जिन वाणी मंगलीक कल्याण कारी हैं, और साधु कल्प के लिये आचार वृत्ति की पु जी हैं, जैसे दुकान वाला पू जी लाके दुकान करता है वह नफा पाता हैं जिसने भगवन की वाणी आराधन किया है आराधन करते हैं उसको मिलती हैं जो उत्कृष्टि सिद्ध गति प्राप्त करते हैं वह अक्षय सुखों को भोगते हैं ॥४३४॥

कोह माण लही मारी मान नाग सिंह गज्जी माया जाल छेदी है
लोह भूत मवाराही मोह सतु तिक्खी सत्री साहू धरे फकी है।
खाटे फीके तीक्खे तुंबे निद्दाछिद्दा दोसे वज्जी निपूली निपकी है
सामस जोगं पज्जसी पारखी पोसती सधी निक्खो निरसकी हैं॥

अर्थ —क्रोध रूपी स्वान (कुत्ते) को मारने के लिये लाठा भारी हैं, मान रूपी गज हाथी के लिये सिंह जबर ताकत वाला है। माया

…शत्रु का काटने के वाले छुरि हैं, लोभ रूपी भूत के लिये मंत्रों
…प्रकाशन है मार रूपी शत्रु को तीक्ष्ण शक्ति बर्छी है, साधु सूत्र्मे
…त्र रूपी गुन गुनी धमाल क्रम रूपी शत्रुओं का नाश किया और
…न भेद ढाल ढाले पीछे तीखे कांटे निरालम्ब पर स्थिर रूप ऐसे
… रहित है धूर्त रहित पंक दोष रहित पापकारी योग रहित, मन
…न और काया के अशुभ योग को वर्जे के शुद्ध तिनो योगों को
…ने वाली वाली है पोषण करती है। निकम्मी धर्म के बिना और
… देख लियी है जिससे कोई गंदा या दोष भर्म नहीं है सत्य
…न है ॥१०१॥

… धारं वाली धारा पावंड मेह पाधारा वेगा बची भारी है।
…श्रा घटाली पाविद्वीत हुवा जो हिमावन्ती मुद्रा सुहावारी है
… धार मिच्छ खं ताढ़ली भूवाली हुवा वास धीरा धारी है
…शीयाले सखे सोहेराका राई सोभा घणा मन्त्री सुखमाकारी है

अर्थ —काम रूपी अग्नि को पाती रूपी जल की धारा पाखंड
रूपी मेघ वालों के लिये वायु वेग है महा शीतल जमती है हिंसा
रूपी चंडाली को हटानी निषेध करती है। दया रूपी गर्मी गौरव
सुख सिष्टाचारी है। कुग्राचार भील सुरक्षा सिपाही शासन हारी है।
भूपाली कि सेना बीर है धारण धरी है, चतुर्विध संघ रूपी चौदनी
चन्दा द्रुकम पद चली पुराणसी की चांदनी निर्मल है और शोभा को
देने वाली है। हे भव्य जीवों ? गुण गुण की कान्ती करो पर वाली

अट्ट रूद्द कोठ दाह धम्म सुक्कागार्स मह निव्वाण सदाई है।
कम्मोजाल दाहे वोई सदेह पक पासासी सूने वदे गाई है।
अनाने कुवे सपत्ती कादवी रज्ज भारीमी नाणा धामा साला
लोग दोहे दक्सा मोहे एसी वाणी देवी मोह दक्से कटे माला

अर्थ —आर्त ध्यान को हटाने वाली जिन वाणी है और ध
ध्यान शुक्ल ध्यान का आवास रूपी महेल मन्दिर के बनाने वाली
जिन वाणी और निर्वाण मोक्ष के देने वाली है। धर्म रूपी
घर को विनाश करने वाली जिन वाणी है, और-संदेह ससय
कर्दम किचड को नाश करने वाली वषा रूप जैसी जिन वाणी है
सूत्रों वेदों में जिन वाणी की महिमा गाइ है। और वह अज्ञान
कूप मे पड़े हुवे जीवो को निकालने वाली जिन वाणी रूप लेजु है
ज्ञान रूपी आराम म मेदान म सुन्दर साला है। एक बैठक है और
लोक पट् द्रव्य मय उसको देखते है, यह वाणी चतुरों के चित्त
मोगध करने वाली है। ऐसी भगवती वाणी देवी सोभापाती है। औ
चतुर विचक्षण जीवो के कंठ मे विराजती माला है सत्य है वाण
॥४३८॥

संसारे कतारे घोरे वामंते जीवाणी काढे मोखे दावी देवी है
जंम्मर धुर्दत काल रोग सोगदुक्खं हती माइ देवी सेनी है॥
चित्तारूपी उन्हाहती पुन्वा वाऊ सापा दाईमोद मोद मेह वाम
सुम्मुम्य धारिक्ष जोगं देवी वाणी मोसे मासी नाण सूर भासंती

अर्थ —संसार एक महा भयकर घोर अन्वी है भोलें जीवों को
दुःखो पहुचावे और जिन वाणी उन्हों जीवों को यहा से निकाल, क

मोक्ष महा नगर के मार्ग पर लगा देती है। मानों सुरव दायनी देवी है एक वाणी जीव के साथ जन्म का दुःख बुढापे का दुःख रोग सोग का दुःख मरन का दुःख सतापादिक चिन्ता रूपी महा तपत गर्मी आदि का महा दुखों से हटाने वाली ऐसी वाणी देवी हैं कि जैसे पूर्व की पवन चलती है जब, तब पूर्व दिशा की गर्मी का सर्वनाश करती है, तैसे ही जिस भावों से जीव ने पाप कर्म किये हुये हैं तो वह सर्व पापों का नाश करने वाली जिन वाणी है शीतलता और खुशी के मेघ जैसी वर्षा करने वाली हैं वाणी सत्पुरुष धरणयोग्य हैं, और पूर्व दिशा में देवो देवों का वास हैं आनन्द मानते हैं, और वहां पर ज्ञान रूपी सूर्य के समान प्रकाश करती है या ज्ञान रूपी सूर्य प्रगट करने वाली उत्तम ऐसी श्रुती देवी जिन वाणी हैं सुर नाना प्रकार के वाणी सेव हैं ॥४३६॥

लच्छी देवी सालकारी सातुट्ठे दारिद्र चूरे राई वाणी माई जू।
सब्ब दुक्ख खोसें पूर सुक्ख सुहगा सपूरे साची साता दाईजू॥
लच्छीदेवी पच्छी अच्छी वाल झोरी ह सिंधू की पेटीमोला दब्बाकी
पवबाणी देवीपूरी ऋद्धि सिद्धि वुद्धि किसी सुक्ख दब्बा सब्बा की

अर्थ—श्री लक्ष्मी देवी वाणी भूषण के धारणे वाली जैसे आराधी होई संतुष्ट पाने वाली और संतुष्टा दालिद्र को चुरने वाली होई हैं ऐसी महा वाणी देवी सर्व दुखों को दूर करने वाली और सच्चे सुखों के देने वाली या शोभाग्य के पाने को पूरणे वाली और सची सासती साता देती हैं तथा लक्ष्मी देवी की अच्छी पच्छी पीटारी हैं भूषणों की अथवा राजा के भूषणों की सधुकड़ी हैं और शाहुकार

के अभरणों के पटी हैं ऐसे ही मुक्ता फल हिरों के जवाहर की ऊत
द्रव्य जहवार रात्ती के ऐसी वाणी देवी पूर्ण भरी होइ है ऋद्धि
सिद्धि से बुद्धि से लक्ष्मी से गुणों से सर्व उत्तम पदार्थों से ऐसे
सारे गुण श्री जिनवाणी की महिमा हैं ॥४७॥

वादी हत्थी जु हैं भीमं गज्ज ती भज्ज ती सिंहीशादे नाद पूरती
केई मुद्दा सिक्खा पुण्णा केई मट्टा नट्टा वादे मिच्छा गब्भ चु
सव्वे सुत्ते सत्थे वदे सव्वं लोग गया रुयी हेयदेयाकारी है
मग्गघोई धम्मंदाई कल्लाण निव्वाण साई सिध्यायी सोवाई

अर्थ —श्री अरिहंत देवों का यह कहनो है कि जो वादी जि
हत्ती होता है और वह भी बिजली की तरह गर्जती है, तथा सि
सिंघनी की तरह मेघ की तरह गर्जना करती शब्द पुरती है अथ
मिथ्यावादी अपने दिल में ऐसा समजे कि यह शिक्षा मानवी
नियमधारी होंवे केइक वाद ते नष्ट केइक निरोत्तर होते हैं के
भ्रष्ट होय कर इकवाद करणे से असमर्थ होते हैं, ऐसी वाणी देवी
जो विवाद करने वाले हैं उनका मिथ्यात रूप मान मद अहंकार
को चुर कर देने वाली है। श्री जिन वाणी सर्व सूत्रों को शास्त्रों
भेदों को और सर्व लोक को जाणती देखती है। जैसे यह तीन श
जिनवाणी को बताय हैं। भगवत ने गाय (१) रूप। अशुभ पदार्थ
त्याग (१) हय (२) रुप शुभ पदार्थों को जाणे (२) स्वर्गादिरूप स्वग
सुख जाणे, निर्वाण मुक्ति के सुख की दाता है तीर्थ, चार हैं, सा
साध्वि, श्रावक श्राविका इनके अधिनायक श्री तीर्थंकर देव ने क
है आपने मुखारविंद से उच्चारण किया है यह वाणी सत्य है ॥४४

जवो जू की शोभा दीपे उजालो चद्रमा गगा हीरामोती ओलडी
हिमो हेमाया चांदीगोदूदि धारा फेणाना कु दमाला पोतोसी ॥
सूंही २ मारी सेती सिष्टी २ सारी जीती ऊची २ सेती ही ।
ऐसी एजो रुरीरोने मन्जो जीवो भावो चित जोवाहो सो देती हैं

अर्थ—श्री जिनवाणी देवी कैसी हैं सरस्वती माता हैं, दुनियाँ में जिनकी कीर्ति अति उज्वल धवल वर्ण जैसे चन्द्रमा की किरण गंगा का जल हीरे का ढेर, मोती की कांति हसनी के पर की छवि, हिम श्वेत की छवि रजत शुद्ध किरण गोदुग्ध की धारा पाणी का फैण का आभा मुचकुन्द के पुष्प की माला पोत की परोइ होइवत ऐसी हैं सबसे श्वेत से श्वेत हैं। सर्व पदार्थ श्वेत से श्वेत हैं। सब पदार्थ मिष्ट से मिष्ट हैं सब पदार्थ शुभ से शुभ हैं और सबको विजय किया हैं सर्व ऊंची से ऊंची है, भागवत का कथन है। हे भव्य भावो ? वंदन करो पूजा स्तुति भक्ति करो शुद्ध भावों से साथ शुभ भावनों के साथ कीर्ति गावों और आपने भावों से या चाहो सो पावो भगवत वाक्य सत्य है॥२४९॥

निर्सं ही निदोषी चाबगा सम्मादिट्ठी मेहा विज्ञानाग देवीदेवाओ
राग सोग भोत टारो शनाण दोस सदावो टडी देवा सेवो ओ॥
दोपाणी जारीहू नदो उट्टा हैं चित्ते आमने इन्छा पूरी मात्र जा।
यारी किरती रूनाणेती इ दाई सोसार पत्ते साधी मापा हाई॥

अर्थ—निर्सं की निरसंक्या जिनवाणी निर्दोष दिव वाणी अरहंत पडिया जिन वाणी सम्यक के देने वाली महा ज्ञान ज्ञानी विज्ञ हैं भरपुर आदि अनेक द्रव्य की जाणकार जिन वाणी है। इस वाणी को

देवी देवता भी मानते हैं तन मन वचन से श्रद्धे हैं यह जिन
रोग सोग भय को टालने वाली हैं, अज्ञानता के दोष को दूर
वाली है और देवी देवता भी जिन वाणी की सेवा करते हैं औ
हाथ जोड़कर वंदना करता हूँ अथात्-वन्दना करने लिये,
क्योंकि मेरे चित्त कि अभिलाषा आप पूर्ण करेंगी मेरे चित्त में
आनन्द देंगी मेरी इच्छा पूर्ण करेंगी और आप की तथा जिन
शोभा कीर्ति दुनिया में अपरपार महिमा है। अथवा इन्द्र
कभी नहीं पासके आपकी महिमा को, क्योंकि जिन वाणी स
सभी साता देने वाली हैं मोक्ष भी प्राप्त होती है ॥४४३॥

॥ ज्ञान महात्म्य पुरुषार्थ वर्णण दोहा ॥

जहा जीव निज शक्ति सो प्राक्रम कर बल लाय।
सो पुरुषार्थ चतुर विध सरबज्ञ देव बताय ॥४४४

अर्थ—जहां पर आपना आत्माराम है यहाँ पर आपए
प्राक्रम लगावे फिर उसको पुरुषार्थ कहते हैं। सो वह चार प्र
किया जाता है उत्तम उत्तम जीव को करना यह भगवान क
है ॥४४४॥

चौ०—धर्म अर्थ अरु काम कहिजे, चाथे मोक्ष नाम कहि
समदिष्टी वरते समय में, मिथ्याती मिथ्यात दशामें

अर्थ —प्रथम धर्म के लिये पुरुषार्थ कर, दुनिया अर्थ
पुरुषार्थ करें, तृतिया काम के लिये पुरुषाथ करें, चतुर्थ मुक्ति
भी पुरुषाथ करें यह चार नाम हैं। पुरुषार्थ को जो सम्यक
जीव हैं। वह तो सदा सिद्धे चलते हैं। और वह सदा उत्त

पावना को साधते हैं, और मिथ्या मार्गी मिथ्या दृष्टि सदा [illegible]
ही ही चलते हैं यह दूसरे को कलंकित करते हैं।

॥ मत्तय गयन्द छन्द ॥

मूर्ख धर्म कहे कुल रीत कुं दया दिक सुष्ट बताय।
हेम अनादि अजान कहैं धन ज्ञान महाधन धीरद [illegible]
कामी कहे रति काम कलोल कुं पंडित काम [illegible]
मोक्ष गिने द्विज की गति को सठ सव भरम कु [illegible]

अर्थ — अब यहां पर चार प्रकार पुरुषार्थ [illegible]
करते हैं कि जो अज्ञानी जीव हैं वह अपने [illegible]
धर्म समझते हैं जैसे होम यज्ञ कराते [illegible]
उदाहरण स्नानादिक केहमत हैं और जो धर्म [illegible]
अहिंसा धर्म तप नियम व्रत जप संयम [illegible]
कहते हैं करते हैं इसका नाम धर्म पुरुषार्थ है। [illegible]
सोना चांदी आदि पदार्थों को [illegible]
उद्दम करते हैं वह लोग इसको अर्थ पुरुषार्थ [illegible]
मान हैं जीव वह ज्ञान रूप महा धन [illegible]
पुरुषार्थ, साधे इसका नाम अर्थ पुरुषार्थ [illegible]
ज्ञानी जन ज्ञान को धन कहता है [illegible]
अज्ञानी जन काम भोग [illegible] को पुरुषार्थ
हैं पुद्गलिक विषय विकारों में [illegible]
काम पुरुषार्थ है, अज्ञानी [illegible] और

लोक अपना सुभ काम करना शुद्ध ध्यान धरना तथा १२ भावना भावे १२ तप करें इत्यादिक नेक काम करने को काम पुरुषार्थ कहते है (अण जाण) अज्ञानी लोग कहते हैं स्वर्ग को देवलोक को मजदेव लोकादिक को मोक्ष मानते कहते हैं इसलिये इसको मोक्ष पुरुषार्थ कहत है और जो साधु महात्मा हैं वह सब कर्मों के बंधन काटे अटल निर्वाण पद वरे उसको मोक्ष पुरुषार्थ कहते हैं सत्य वचन है ॥४४६॥

धर्म क्षमादि दसाग दयामय, साधन धर्म महा पुरुषार्थ ।
सच सिद्धांत पढ़े गहि अर्थ अटूट अनूपम अर्थ प०ार्थ ॥
द्वादश भाव महा तप की चिह काम न काम सुनाम यथार्थं ।
धर्म निवार अबंध अडोल लिए निज मोक्ष महा पमार्थ ॥४४७

अथ —अब यहा पर फिर पुरुषार्थ का खुलासा और करते है क्योंकि भगवन ने, १० दश प्रकार का धम पुरुषार्थ बतलाया है। धर्म दया क्षिमा में १ कोमलता म शरलता म ३ संतोष में ४ तपस्य इच्छाया में ५ ब्रह्मचर्य शील पालने म ६ सत्य बचन निर्दोष बोलने म ७ सयम १७ प्रकार की विधि से पालने मे ८ निर्ग्रंथ मुनि पदधारत में ९ निर पाप शुद्ध आत्म भावना में १० इत्यादिक इन बोलो मे बल प्राक्रम फोड़णा उसको समको सम्यक्ती धम पुरुषार्थ कहते है सच्चे शास्त्र सिद्धान्त सर्वज्ञ देव के उक्त पढ़ने अर्थ धारण करे अनुपम अटूट धन यह महश्य करण इसका नाम अर्थ पुरुषार्थ कहा है। १२ भावना भावे १२ प्रकार का तप करे चार प्रकार की विनय भावना भावे सूत्र विनय तप विनय शुभ योग विनय आचार विनय इत्याशुभ कामना करे ऐसी कामना वाले को काम पुरुषार्थ कहते हैं और आठ

जो इन करें बंधन से रहित होवे संसार के जन्म मरण का
करें अचल सिद्ध पद पावे तीन लोक के मस्तक पर तिलक मुकुट
केतु के समान हैं यह उनके ओपमा योग्य परमपद पावन
पुरुषार्थ कहते हैं ॥४४॥

पुरुषार्थ चार ज्ञान निज बल सो करै।
री मनार मूमें निपल हुये धर्म बल ॥४४७॥

अर्थ —जो यह पहले भी चार पुरुषार्थ लिखे हैं इनको [illegible]
आपने बल से प्राक्रम करता है मुक्ति हेतु के लिये और जो [illegible]
ह समार में अपने काज अकाज को नहिं जाणते हुवे [illegible]
हैं परिग्रह धन के लिये पाप क्रिया कर्म करता है [illegible]
म फोड़ता है वह जीव ससार मे परिभ्रमता है ॥[illegible]

[illegible]—वरते विषय कषाय में पाप पुन्य में हरि।
सो विवहारी जीव हैं बधन सहित [illegible]॥
जो वैरागी समगति विषय कषाय [illegible]।
सो शिव गामी शिव भयो यही मत [illegible] ॥[illegible]॥

अर्थ —जो जीव [illegible] पुद्गल के [illegible]
[illegible] पाँच विषयों म चार कषायों म वरतन [illegible] प्रथम
[illegible] मे फंस कर कहते हैं पुन करते हैं पाप [illegible] पाप और
[illegible] यह तीनों द्वारों से पाप [illegible] मन वचन
काया तीनों योगों से लीन रहते हैं [illegible] नहीं है
[illegible] क्या चीज है इस वास्ते संसारी जीव [illegible]
अधीन हैं विवहारी जीव सत्य है ॥[illegible] ने [illegible]

और वैराग्य दिसा में आये वह समदृष्टि के साथ विषय कषाय [illegible]
दूर करके शुद्ध चित्त होजाये यह जीव और यह जीव शुभ पुरुष
साथ लिये सो यह नीर जीवन मुक्ति रूप है तथा विदेह में हुवे
हुवे उनको में वंदना करता हूं मन वचन काया से ३ योग ३ काल
यं) वारम्वार नमस्कार हो ॥५५०॥

—नव रस वर्णन दोहे—

जबै जीव इक रूप हुवें पावें रस परिणाम ।
सो नव रस वर्णत सुधि सिंगारा दिन इत्याद ॥५५१॥
नव रस रचणा जगत् में भांत भांत की होई ।
नव रस रचणा ग्यान रमै कहै समकती सोई ॥५५२॥

अर्थ—जिस समय चैतन्य एक रूप में परणमता है तो [illegible]
परिणाम बरतते हैं उसका मन सरधिये सहमने सहलेता सह [illegible]
साह ऐसे परिणाम बरते तो उसको रस कहते हैं सो सून नव [illegible]
का नाम कहते हैं । शृङ्गार १ वीर रस २ करुणा रस ३ हास्य रस
रुद्र रस ५ विभत्स रस ६ भय रस ७ अद्भुत रस ८ शांत रस ९
नव रस के नाम कहे हैं श्री परात्मा ने ॥५५१॥ जगत रूप [illegible]
में अनेक प्रकार नव रस की रचना है जैसे स्नान मंजन [illegible]
चन्दनादि लेपन करना तथा सुन्दर वस्त्र धारण करना शरीर पर भू[illegible]
सजाणा वाहन असवारी पर चढ़ना इत्यादिक विभूषकरी सुन्द[illegible]
करे उसका नाम शृङ्गार रस कहा है । संसार के कार्य में [illegible]
करणा राज काज युद्धादि में पुरुषार्थ करना भूमि कृषि का क[illegible]
विवहार धन उपाजन करणा इत्यादिक अनेक कार्य करना उस[illegible]

नाम वीर रस कहो हैं । २ दीन दुःखी को देखकर अपने हृदय में दया लावै और भोजन वस्त्र पात्र सैन स्थान औषधी इत्यादिक देवें और वैयावृत्यादि करणी इसका नाम करुणा रस है ॥३ आपने मन को जो वस्तु अच्छी लागे उसका नाम मनोगम मन को गमने वाले जैसे शब्द रूप तीन हैं वर्ण पाँच हैं गंध दो हैं रस पांच हैं स्पर्श ८ हैं यह तेइस बोल जिसे बहुत अच्छे लागें शुभ शुद्ध होवें मनोहर होवें अति ही प्रमोद को देने वाले होवें और वह अच्छा लागे मन में बहुत खुशी माने उसका नाम हास्य रस कहा है भगवंत ने ४ महा क्रोध कषाय चंड महारुद्र भाव चढे महा प्रचंड चंडाल होवे इसका नाम रुद्र रस कहा है वीरने ठिक है ५॥ जो २ पदार्थ आपने मन को दुःख देवें और अच्छे ना लाग जैसे शब्द वर्ण रस स्पर्श ऐसे २ आपने मन को घृणा देने वाले अशुभ शुद्ध पदार्थ होवें तो इसका नाम विभत्स रस कहा है ।६। महा भय के देने वाले भयंकर रूप शब्द आदि होवें जाणने से देखने से सुणने से भयभीत होणा रोणा पीटणा विलाप करना भागणा दोडणा दुःख मानना इसका नाम भय रस हैं ॥७ अण देख्या देखे अण सुणया सुणे अण खाया खावे ऐसे अनेक प्रकार के पुद्गल हैं, और बहोत प्रकार की वस्तु हैं उनको देखकर अचर्य माने तथा होणा इसका नाम भगवंत ने अद्भुत रस कहा है ८ किसी शुभ काम में आपने चित्त विरती कोटि काणा ठहरावना स्थिर करना अडोल होणा चलायमान न होना इसका नाम शांत रस है ।६ यह नव रस इस जगत् रूप दुनिया में जीव आकर आपने २ रसों का लाभ लेकर सम दृष्टि जीव संसार से पार होजाते हैं और जो २ जीव

रसों में फस जाते हैं वह संसार में रमते हैं ॥४४२॥

छप्पय छन्द॥–प्रथम शृङ्गार रस वर्णन॥

घटणा तप औषध मिलाय उपसम रस मज्जन ।
शील चीर मति गंध ध्यान लेपन सो सज्जन ॥
मुकट जिनेश्वर आण प्रभु वच कुंडल काने ।
दया हार उर कंठ स्तवन कर छाप सुहाने ॥
सम दमसत संतोष गुण भूषण नाना भांत ।
पहिर चढे मन हय सजे रस सिंगार शुभ कांत ॥४४३॥

अर्थ—नाना प्रकार की तप रूपी औषधी मिला कर घटणा व अणणा और लेप करना आपने शरीर पर वटणे में मिलायेंगि औषध कौन २ सी है। सुनों औषधी के नाम उपसम रिला जल के साथ स्नान करे ब्रह्मचर्य शील रूपी वस्त्र पहिन सुमिति रूपी गंध अत्र लगावें धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान रूप लेपन लगावे कुंकुम चन्दर केशर कस्तुरी जैसे टिका लगावे ऐसे मैंजावट करें और श्री जिनेश्वर देव की आज्ञा रूपी मस्तक पर मुकट धारण करें भगवत के वचन रूप कानों में कुंडल धारण करें हृदय छाती पर दया रूपी हार सजावें भगवान के स्तवन गुण नाम रूप आपने गले मे कंठी कंठ में धारण कर लेवे, आपने हाथों में दान रूप अंगूठी मुद्रीका मुद्रिया अगुलियों पहिने समता दमता सत्यता संतोष इत्यादिक अनेक गुण रूपी आभरण भूषण पहिने के मन रूपी घोड़े को सजाकर सिंगार के असवार होये इसका नाम धर्म रूप सिंगार रस कहा हैं ॥४४३॥

॥ दुजा वीर रस छप्पय छन्द ॥

अघकुल फोड उखाड़ भूमि घट शुद्ध सवारी
धर्म बीज यह बोय खेत फल लहे अपारी ॥
तप संयम विवहार यह त उद्दाम से कीनो
कर्म अरि सो भिडे राज घन शुभ पद लीनो ॥
धर्म अर्थ पुरुषार्थी पायो जस जग सर
सोभत सुन्दर वीर रस कर वैरी चक चूर ॥४४४॥

अर्थ—अरिहन्त देव ने कहा है कि पाप रूपी झाड़ों को जड़ से उखाड़ डालो मारे अन्तकरण से नाश करदो और फिर आपनी परिणा रूपी भूमि शुभ करणी सुधारणी साफ सुन्दर बनानी करनी फिर उस शुद्ध भूमि में दान शील तप भावना संतोष क्षमा अनेक भाँत से इस शरीर रूपी खेत में धर्म बीज निपजाना फिर उस खेत में यह धर्म बीज बीजा हुआ जन्म लेगा और स्वर्गादिक सुख पुण्य मिले, मुक्ति का सुख फल मिले और उसका अपार फल लेवे जैसे चतुर कृषि के समान तप संयम रूप विवहार करते हैं ऐसे ही बड़े प्रारम्भ के साथ लाभ लेवे ज्ञान लब्धि सिध्यादिका लाभ होवे जैसे विचक्षण वणिक ऐसे ही आठ कर्म शत्रु का नाश कर और उसके साथ परान रावर जुद्ध या रीपु वैरी को क्षय करके फिर शाश्वता राज मुक्ति पुरी कर लेवे महाशुरवीर रॉजावत होवे धर्म अर्थ पुरुषार्थ साधक योही जगत् में जस पाये जिसने नेक काम किया ऐसे ही महा सुन्दर वीर रस रूप हैं सर्व वैरी कर्म रूप चकचूर करे हैं जिसने इसका नाम वीर रस हैं ऐसे वीर रस की रचना में मुनि जन खेलें खेलते हैं ॥४४४॥

॥ तीसरा करूणा रस–छप्पय छन्द ॥

जगत जतु दुःख देख दया चितवे शुभ भावे
कर्म पिंजरे बध जालते तुरत छुडावे
तृष्णा चुदा हरत तोष पकवान खवावे
बधन शाला कु गति ताहि को त्रास मिटावे
अन्ध कूप अज्ञान थी काडे सत सुख देत
करूणा रस रूपी दिव्यतरदो शिव सुख हेत ॥४५५

अर्थ —ससारिक जीवों के जन्म मरणादि दुःख देखकर चित्त में दया आवे और शुभ भावों के साथ धर्म उपदेश देवें विषय विकारों को दूर हटावें तथा धर्म में जीवों लगावें और भव्य जीवों को कर्म रूप पिंजर से तथा बधीखाने छुड़ा बधी रूप जालको काट उपदेश रूपी शस्त्र से जीव को आजाद कर देवें तृष्णा रूपी भूप को दूर कर संतोष रूपी उत्तम पदार्थ पकवान देवें जिससे अन्तरात्मा पहुँच महा निपती होवे फिर कुगति रूपी बधी खाने से छूट कर अभय निर्भय होजावे जहाँ जावे वहा अभि तक गया नही अज्ञान महाध कुप से निकाल कर महा उत्तम सुखा ज्ञानमय स्वर्ग अपवर्ग कर देवें गुरू देव ऐसे महा उत्तम से उत्तम करूणा रस मे रम जावें मुनिदेव गुरूजी इसका नाम भगवंत ने करूणा रस कहा है ॥४५५॥

॥ चोथा हास्य रस छप्पय छन्द ॥

जिनवर गणधर साधु सती दरसण अति हरिषे ।
वदन पूजन भगति प्रेम सुन वच गुनया रिखे ॥

विकासित मुख दग कमल रोम राई उल सते ।
चित में अति आनन्द पाय शुभ राभ करते ॥
हास महा रस रूप सन मोमत नान गंभीर ।
समता मननी मग रम पावे भव जल तीर ॥४५६॥

अर्थ —जिन ती श्वर देव गणधर देव साधु गुरुदेव महात्मा महा सतीया जो सन्नारान आर्या जी ऐसे २ महा उत्तमात्मका दर्शन देरत हाँ अयत प्रमोद उत्तम साहयज देने वाले उनको नमस्कार पूजा भक्ति गुण ग्राम सेवा करन से वचन गुण के सतकार करन से सन्मान देन से श्रद्धा शुद्ध आवे आपने औगुण दूर होवे और गुण प्रगट होवे चित्त प्रसन्न होवे विकासित वन्दन नयन कमल सम होवे अति प्रमोद पहे उलसत रोम राइ होय और सर्व कार्य शुभ होवे,दानादिक में महा हास्य रस होवे ऐसे महा उत्तम पुरुषार्थ ज्ञान से गंभीर मोभा पाते हैं और वह सम्यग्दिष्ट मडली के साथ रमते हैं तथा ससार समुन्द्र के किनारे पर बैठे हैं मुक्ति पुरी को पावेंगे इनका नाम श्री ईश्वर परमात्मा भगवत ने कहा है । यह हास्य रस है ॥४५६॥

॥ पाचम रूद्र रस छप्पय-छन्द ॥

आतम धनु तप बाण खडग तीचण वर ज्ञान ।
बरछी रिरत विवेक सबर सिर पर सुम्यान ॥
,क्षायक चक्र ग्रहण धार सग्राम मचायो ।
मोह सैन पति भूर साथ भूझे बल लाया ॥
रूद्र महा रस,रूप धर मोहादिक अरि चूर ।
चिदानन्द प्रभ श्री लही वसे मुक्ति पुर सूर ॥४५७॥

अर्थ —रुद्र रस के धारन धारा मुनि महात्मा कैसा होवे सुनो बल प्राक्रम पुरुषार्थ रूप धनुष्यधारी जोड़े तप रूप नाना प्रकार के तीर चलावें प्रधान तीक्षण ज्ञान रूपी तेज तलवार चलावें शुद्ध वीरतो रूप शक्ति बर्छी के धारन वाला होय विवेक विचार रूपी हाथ में कुठार फरसा होय शुभ धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान रूप हाथ में आगे दाम होय, क्षायक भाव रूप धावन हाथ में सुदर्शन चक्र धारे ऐसे ७ हथ यार धारके सर्व कर्म शत्रुओं को क्षय करे ऐसे महा सूरमें मुनिपुंगी म दान करते हैं इसका नाम रुद्र रस है भगवंत ने और इसको मुनि राज धारते हैं ॥४५७॥

छठा विभत्स रस छप्पयछन्द

रक्ति बिंदु उत्पत्ति अशुचि पूरण नहीं थिर तन ।
दुव्यशन घर अघ मूल कुगति दायक चपल घन ॥
विषय भोग बहु रोग कष्ट दायक जग माही ।
दारा सुत परिवार खेद कारी सग नाही ॥
सर्व द्रव्य नाशी खासी सब थी भए उदास ।
रस विभत्सी रुप मे रमे त्याग भव आस ॥४५८॥

अर्थ —भगवन ने कहा है कि माता का रुद्र रक्त और पिता का वीर्य यह दोना मिल जाये तो जीव तथा शरीर की उत्पत्ति होवे और वृधी पावे शरीर इस विधि का है जिसमें विष्टा मूत्र हाड चाम लहु मास खखार रुक नाक कि मैल पित्त कफादिक अशुचि शरीर में पुरण भरि हैं यह देही अस्थिर है थिर नहीं है और ये सात कुव्या सनों का घर हैं पाप की जड़ हैं नर्क तिर्यंच कुगति का रास्ता है यह

कुगति के देने वाला है यह धन पाचा इन्द्रिया चे विषय २३ विकार दोसो चालीस को चढा ने वाला है क्योंकि जीव जो जीव विषय भोग विकारों में फंस गया उसकी गति खोटी है ब्रह्मदत्त चक्रवर्तीवत् इस वाले ऐसा सोने के स्त्री पुत्र आ० आदि सब परिवार दुःख देने वाले हैं। महत विदुषन ना कोइ मेरे साथ आया ना कोई जावे पुन्य पाप साथ में आते जाते हैं इसलिये यह सारे पदार्थ नाश रूप हैं और सर्व से उदास रहे ममत्व भाव का त्यागी होवे यह विभत्स रस है ॥४४८॥

॥ सातमा भय रस छप्पय छन्द ॥

अटवी इहि संसार घोर तिह कर्म महा वन।
विष रस में फल फूल पत्र माला दुःख कारण ॥
काल जरा रोगा है सिंह अहि सूकर वा प।
कुगति खान अति विषम मर्ने ही दुःख को कारण ॥
इहि विध लखा संसार की भय महा भय भीत।
भय रस रूपी समगति तारा ऐसी रीत ॥४४६॥

अर्थ —यह संसार रूप एक महा भयकर अटवी है और कर्म रूप एक महा उद्यान वन है उस वन के वृक्षों को विष रस मइ फल फूल लगाने हैं पत्र साखा मूल सारे दुःखदाइ है लगते हैं काल रूप सिंह के समान नाग रूप सर्प के समान आदि कलेस सूर हाथी रीछ बादर के समान है और जोइ मनमे रोग भाग है अर्थात् इस संसार में सब दुःख का कारण है देख और संसार की के महा भयग त होव और संसार में मोहवश ना करे

रहे इसका नाम भय रस है ॥४५६॥

॥ आठमा अद्भुत रस छप्पय छन्द ॥

अद्भुत वाणी सुणी अर्थ अद्भुत मैं जानें ।
अद्भुत प्रभु को रूप शक्ति बल गुण दरसानें ॥
अद्भुत मुनिवर लब्धि धर्म शीलादि दिपंत ।
तप सञ्जम फल देव ऋद्धि वैक्रय धरंत ॥
अद्भुत आतम राम बल लख राजत गुण धाम
ज्ञानी ज्ञान विलास इम अद्भुत रस अभिराम ॥४६०॥

अर्थ —किसी भव्य जीव प्राणि ने भगवत का समोसरण दिखा तो क्या कहता है। अहो आश्चर्य भगवन की वाणी सुणी अहो आश्चय कैसा अर्थ जाने समझे अहो अति आश्चर्य भगवत का रूप छवि कैसी मनकारी देखो अहो आश्चर्य शक्ति लब्धि बल प्राक्रम गुण देख अति आश्चय आया अहो? अतिश्चर्य अद्भुत साधु महात्मा की लब्धि वैक्रिय आहारीक लब्धि जंगा चारण तेजु लेश्या शीतल लेश्या सभिन्न श्रोत लब्धि इत्यादिक शक्ति आश्चर्य देखी और क्षमादिक दश विध यति धर्म देखा आश्चर्य आचारादिक श्रुति सोमे अहो अति आश्चय तप जप सयम करणी का फल देव गति म पाया वैक्रय रचना रची और अनत बल चेतनराय जीव का जीना जो विराजमान हैं ऐसे गुणा के भडार ऐसे ज्ञानी के ज्ञान विलास में अद्भुत रस है इसका नाम भगवत ने अद्भुत रस कहा है ॥ ४६० ॥

॥ नवमां शान्ति रस-छप्पय छन्द ॥

विषय कषाय मिटाय शुद्ध चेतन अविकारी ।
अलख शाश्वत अनंत ज्ञान नान के सव भंडारी ॥
वंध जाल को तोड़ शुद्ध सवर निजरा ही
मन पायो विश्राम अनुपम शिव माहीं ॥
कर्म घात की घात हण चहु की कर उस खीन
सत भव सति करण सत रहे मर लीन ॥५६१॥

अर्थ —पाँच इन्द्रीयों के विषय तेइस विकार [illegible] कषाय इनको दूर कर फिर आत्मा कर्म मैल से रहित [illegible] है और चेतन निर्विकार होजाये अलख अरहंत [illegible] ज्ञान के भण्डारी होनावें बंध जाल रूप को तोड़ [illegible] है ऐसे ही सर्व ने सवर किये मन शुद्ध हुवे और सर्व [illegible] करी कर्म दूर किये जिनों का मन अचल [illegible] हुवा चार घन घातीये कर्म क्षय किये और [illegible] होई रसी की तरह ऐसे जिसने आठ कर्म [illegible] शान्ति होइ औरों को भी शान्ति करते हैं। इस [illegible] लीन होये इसका नाम शान्ति रस [illegible]॥

सग्रह नव रस का [illegible] छन्द

गाथा पति सिंगार वीर वैराग्य [illegible]
करुणा सति करण हास [illegible] ॥
कोटपाल रस रुद्र विभत्स [illegible]

भय अरि दलने भयो चित्र रस मत्री ॥
सांताराय के उपवसे सब रस मो रस शांत
ज्ञानराय को मित्र अति वसे साथ शुभ भांत ॥४६२॥

अर्थ —भगवत ने कहा है के शांत रस सब रसों में राजा के समान रसे हैं और सब रस शांत रस की सेवा करत हैं सिंगार रस मोदी (भंडारी) के समान अनेक पदार्थ धारी हैं जैसे पसु सिरोमणि सैनापति हैं ऐसे बीर रस शोभा पाता है और करुणा रस राज पुरोहित के समान अनेक मंत्र विचारंत होवे, उपद्रव्य का नाश करे, शांत करणे वाला होवे यह हास्य रस ऐसा प्यारा मशा है सजन विधि भाव के विलास करणे मनको मोहने वाला है) रुद्र र स कोट वाल के समान पदवी के धरता और दुष्ट को दमने में प्रभाका पालने में तत्पर हैं विभत्सरस वभ दुष्ट कुसंगत विकारों को हटावन वाला है जैसे चौकीदार पहरा देके सवाधान करे भय रूप सुरमा है शत्रु वैरी का नाश करने के लिये महाबली योद्धा हैं अद्भुत चित्र रस मंत्री के समान हैं। आश्चर्य करिराज धनेराज करणे रस पक्ष पोषणे संत रस राजा को परम प्यारे हैं ऐसे साथी साथ संत रस रूप हैं ॥४६२

दो०-ज्ञान विषय चेतन बसे चिदानन्द में ज्ञान
नहीं वियोग पावे कावें यत तत निज परमान ॥४६३॥

अर्थ —भगवान ने कहा है जो ज्ञान हैं सो आत्मा हैं जो आत्मा हैं सो ज्ञान हैं इसलिये यहा पर चिदानद आत्मराम मय ज्ञान हैं और ज्ञान मय आतमराम हैं और सदा के लिये दोनु का सम्बंधी मेल हैं जैसे सूर्य से रोशनी दुर नही रोशनी से सुर्य दुर नहीं हैं और

भाव भी दूर हुवा ना होगा कभी ऐसे ही चैतन का और ज्ञान का ना कभी वियोग हुवा और न कभी ही वियोग होवेगा इस वास्ते वियोग निछोड़ा कभी होगा नहीं ॥४६३॥

मत्तगयन्द छन्द सवैय तेईसा

सत्र कुमत्त ममन्त असत्त कु जो गुण द्रव्य कु सो गुण जाने
संशय नाश प्रकाशक लोक कु साधक मोक्ष कु चेतन माने ॥
जाण अजीव कुमित्र करे अरु पुन्य लखे सब आश्रव माने
संवर पाप ने निजरा पुन बंध कु बोध रमे शिव माने ॥४६४

अर्थ—भगवान ज्ञान जड़ और चेतन का है जड़ के जरिये चेतन ने दुःख पाया चैतन के जरिये जड़ को दुःख नहीं है क्योंकि दुःख सुख तो चेतन जीव को है और किसी को नहीं होता है इस लिये सत पदार्थ को सत्ता ही जाणो और असत्त को असत्त मानो जैसे कोइ कहे के मैंने घोड़े के सिंग देखे तो यह बात असत्त है जैसा जैसा जिस २ पदार्थ में गुण औगुण है उनको वैसा ही जाणे माने अगर कोई कहे के अग्नि चन्दन जैसी शीतल है तो क्या आप उसको मान लेंगे कदापि नहीं मान ऐसे ही आपने सर्व संशय दूर कर नाश कर देवें फिर आपके अन्दर लोकालोक का प्रकाश होवे और मुक्ति साधन को चेतन जीव साधन करता है और कोइ नहीं है क्योंकि चेतन को जानता है चेतन जड़ को भी जानता है जड़ चेतन को नहीं जाणता है चेतन सर्व को जुदा २ पुन्य २ पाप २ जीव अजीव आश्रव संवर बंध निर्जरा मोक्ष निर्वाण को जाणता है उसका नाम सत्त सत्ता ज्ञान है सत्य है ॥४६४॥

सर्वज्ञ व्यापक ज्ञायक रूप, अलोक वय श्रुति वेद पुराने
निरय अनादि अनन्त अखड अनुपम शाक्त विज्ञानन्द जाने
उर्ध मध्य पताल विष गुण ग्राम करैं बहु लोक सियाने
आतमराम कृपाल मई प्रभु ज्ञान स्वरूप जिनन्द बखाने ॥४

अर्थ—सर्व लोकालोक म भगवान का ज्ञान व्याप रहा और सारे सर्व पदार्थों के ज्ञाता हैं क्योंकि अनेक सिद्धांतों शास्त्रों मे वेदों म पुराणों मे कहा है कि भगवान् अखण्ड अकालपुरुष है, अनादि अनन्त हैं, अजय अनोपमा हैं, अद्य अ हैं कभी अन्त नहीं आयगा। इश्वर परमात्मा भगवान का अरूपी है जिन्हों का कोई रूप नहीं है और जिन्हा की ऊचे लो वाले देवी देवता मध्य तिर्छे लोक वाले नर नारि वाण व्यन्तर दे देवता पताल लोकवाले भवनपति देवी देवता भगवान की मन से वन्दना सेवा भक्ति स्तुति गुणग्राम करते हैं। और अ पापा का नाश करते हैं। ऐसे भगवान ज्ञानमय आतमराम हैं जिनेन्द्रदेव की वाणी है ॥४६४॥

॥ छप्पय छन्द ॥

सम दम सत सतोषशील संवर विवेक तप।
दसण चरण सुध्यान धीर संवेग परम जप ॥
दानादिक बहु सुर सग जाके श्रुति सोहे।
सखी क्षमा करूणादिक रूपवन्ती मन मोहे ॥
जिह अटूट भण्डार धन अमित अनन्त अगाध।
समता नगरी राजथिर नमो ज्ञान शिर साध ॥४६६॥

अर्थ—सम दम सत संतोष ब्रह्मचर्य संवर तप विवेक दर्शन चारित्र ध्यान धीरज सवेग परमातम जप दान आदिक बहुत सूरमें जिन्हों के संग हैं और यह शोभा को प्राप्त होते हैं जिन्हों की राणी क्षमा दयादि अति रूपवती सुन्दर मनको मोहने वाली और जिन्हों का भंडार आनंद अटूट है तथा चोर भय से रहित है अमित्र हैं त्रास रहित हैं अगाध हैं असाधन हैं जिन्हों की समता राजधानी है उस नगरी का राजा राज स्थिर है ऐसे मुक्ति के साधक ज्ञान महाराज को मैं नमस्कार करता हूं क्योंकि ज्ञान सदा सुख के देने वाला है ।।४६६।।

रिस मद छल सठ लोभ सोग सताप परम भय ।
आरत रूद्र प्रमादि काम चित भाव विषम नय ।।
दुष्टाचार विकार सु जिह साथ घणेरे ।
घरणी हिंसा कुमति आदि नर पाप भतेरे ।।
बध रूप मिथ्यात पति है गलीय अज्ञान ।
ताके भय भजन अर्थ सेवो श्री पति नान ।।४६७।।

अर्थ—श्री वीतराग देव ने कहा है के, यह इतने बोल जीव आत्मा को दुःख देते हैं क्रोधमान माया कपट मुर्खत्व लोभ शोक क्लेश भाव संशय भय चिंता ध्यान हिंस ध्यान आलस काम विकार विपरीतनय जुवा चोरी इत्यादि खोटे आचार नाना प्रकार के विचार विकार ऐसे सूरमें जिसके साथ बहोत हैं और राणी जिसकी हिंसा होरे कुमति दुर्मता हो जिसकी पाप रूप घने जोधे साथ मे हैं कर्मों का बंधन रूप मिथ्यात पुर का राजा है और अज्ञान रूप जिसका गलि में है जो जीवों को दुःख देता है सो इस भय दुःख को दूर

कराने के लिये हे भव्य ! जीवों तुम भगवत का भजन करो और श्री ज्ञान का शरणा सेवो यार महाराज ॥४६७॥

समगति अनुव्रत महाव्रत छद्मस्थ पुरो के ।
देवे सुख बहु भांत लोक परलोक सुरों के ॥
परमानन्द अनूप पुरे केवला स जोगी ।
शांत अजोगी देव जीव ताहि होत अजोगी ॥
कर्म चूर समोर सब बंधन तोड़ सुछन्द ।
सिद्ध भए शिव के मजे जयो ज्ञान आनन्द ॥४६८॥

अर्थ—सम दृष्टि दो प्रकार के हैं एक तो चतुर्थ गुण ठाणे स्थान वाला दूसरा पांच में गुण स्थान वाला चौथे गुण ठाणे वाला अव्रति सम्यक् दृष्टि है और ५ में गुण ठाणे वाला देश व्रति सम्यक् दृष्टि है इसका नाम श्रमणोपासक श्रावक धर्मी है और ६ में गुण स्थान से लेकर १२ में गुण स्थान तक सर्व महाव्रति छद्मस्थ समदृष्टि साधु महात्मा महा मुनि है और जो २ इन गुण स्थानों में होते हैं वह सबको यह महा सुख समाधि देता है और परलोक के महा सुख देव गति के भी देता है। और १३ में गुण स्थान परमानंद केवल ज्ञान रूप सयोगी गुण स्थान महा सुख देता है और यह सर्व देव देवें इन्द्रों के पूज्यनिय है फिर उससे ऊपर जब १४ चौदवें गुण स्थान जाता है तो उसका नाम अयोगी गुण स्थान है यह स्थान निर्विंदन पने कर्म कलंक रहित महा शांति सुख के दाता हैं इसलिये ज्ञान महा शूरवीर है कर्मों को चूर चूरा कर संसार में जो जन्म मरण करे कर्मों की छोड़ बंधन सब तोड़ कर जीव को स्वाधीन अजाद करता है

ऐसे ज्ञान को निरखत के मो लिद करत हुवे है ऐसे हल महाराज की जय हो ॥४८॥

करणी नाम समेत ऊ म क दल होंगे।
ज्ञान बिना दु ख देत च म नाम हैं ॥
अंक बिना उदु सुन्न काम कौ ...
ज्ञान बिना करतूत राम ...
धाम मित्र हैं जीर को ...
वन्दे विवकर जोर के हर ...॥

अथ—तथा तब ... ज्ञान सहित ज्ञान के साथ मुक्ति स्वग के सुख ... देती हैं और ज्ञान रहित करणी करें तो ... दूसरा बधा लेते हैं। क्योंकि जैसे बिना ... काम नहीं आवेगी और गिणने वाला का ... ज्ञान के बिना करणी निष्फल है ऐसे ... का कहना है ऐसे ही ज्ञान में देखा है। ... देने वाला पर ... महाराज बड़ा सुखदाई हैं ... ज्ञानराय जी को मैं दोनों हाथ जोड़ कर नमस्कार करता हूं ... एक चित्त सु होकर ॥ ८२६ ॥

दोहा—रवि शशि मणि ... आदि जग दर्व
ज्ञान प्रकाश समान ... गुण सर्व ॥४७॥
हैं शिव धाम बसा ... सुख देत।
धर्म कहा सुखदत ... मानत है ॥

अर्थ—चन्द्रमा सूर्य मणि रत्न दीपक बिजली पावक आदि प्रकाशवत संसार मे और द्रव्य अनेक हैं लेकिन ज्ञान जैसा और का वस्तु इसे ज्यादा प्रकाश करने वाला नहीं है। ज्ञान का प्रकाश तीन लोक में हैं। इसलिये मेरी नमस्कार होवे जोके सकल गुणवत ज्ञान राय को जो शिव मार्ग के देने वाला है ॥४७०॥ ज्ञान कला के बराबर और कोई कला नहीं है इस वास्ते यह आछी कला हैं शिवपुरी मुक्ति के लाभ रूप शिवगति के देने वाला हैं ज्ञान कला जैन मार्ग जैसी और कला कहीं नहीं है जगत में कुकला कम वाला अज्ञान कल बहोत हैं ऐसा श्री जिनदेव ने भाषा किया हैं कहते सत्य हैं ॥४७१॥

चक्र बंध दुमल छन्द अलंकार

सुख लाख कला कुकला कुटला चपला सबला बहु लाल चल
रिझला गरला अघ लाख मिला दुख लाख फला कुफला बहुल
शिव लाभ कला सुकला विमला सुखलाभ बहुला अटिला।
विचला इमला थिर लाभ कला तज लालच लाख खला दुक
मुनिलाल भला पुत लाभ खला सरला सम लालच लाहि खला
थिर लाभ कला मन लाई रला सुखरास विलास मिला अचला
सुकला धवला सबला कमला अमला गरला मथला अतुला
अघला खदला सुख लाख फला चितला इमला शिव लाभ कला

अर्थ—श्री वीतराग देव ने कहा है कि जगत् में लाखों कला फुला है सो कुकला हैं और कुटलता चपलता कपटता घणे ला चलाई बहोत घणे लाल चलाई है मोघ लागरली पाप लाख मिल लाख दुःख फली हैं खोटे फल घणे सहित हैं और ज्ञान कला शि

रत्न कथा है सोमती है निर्मल है जिसमे घने सुख का लाभ है, और फल है हे जीव ? ऐसी चित्त लगावो छोडो लालच तार भूमि खोटी कथा है इसका अथ सोच के करना ॥४७३॥ साधु महापुरुष मुनिलाल काहुनशासन है धर्मात्म है सरल कपट रहित है आत्म कल्याण करै लोभ लालच से रहित है तथा मुक्ति पाने के लिये ज्ञान मिलने वास्ते सेवा भक्ति करने के लिये खाना पीना पहरना करते हैं क्योंकि जपर्म धरम आपने चित्तको लगा मनको लदेश रल मिला मन दुनसातव भला हुवा सविलास मिला दिगम्बर श्रेष्ठ फला उज्वल चलनेत शुद्धि बल श्री देवीरव संपूर्ण सिद्धान्त का लाभ लेना है देही शरीर रूपी भूमि शुद्ध करती अतुल है लाखों पापों को दलना है और फिर लाखा सुखों को देने वाली यह देही रूप भूमिका है हे जीव आपने चित्त को लगावो और शिव मुक्ति का लाभ वडा औरस का नाम है शिव लाभ कहा ॥४७४॥

नरका नायिका वध "दोहरा"

सदा ज्ञानवन मोरमो धरम धाम शुभ बाग ।
सावधन रूप मगविधर होवे प्रभु के हाथ ॥४७५॥
बधन जाय जीव मिल अप पुन्य आश्रय होई ।
संवर निजरा ते मुक्ति अप त्रिक नरपत्य सोई ॥४७६॥
पाप रूवम को दुःखर फन पुन्य रकल फल सुकरव
दोऊ बधन जगत में दूरें बधन मुकाय ॥४७७॥

अर्थ—हे जीव आप ज्ञान रूपी बाग में सैर करो सदा और धर्म रूप मंदिर मकान में सदा वास कर आत्मा आनन्द सेवा से करो

और प्रमाद को छोड समाधान होगो होजागो फिर आप भगवान की सेवा भक्ति कर सेवक सचे बन जाओ तुम हो जीव ॥४७४॥ जीव अजीव दोना का जब मेल होवत बंधन पड़ता जाता हैं और पाप पुन्य से आश्रव होता हैं आश्रव के दो नाम हैं एक आश्रव मे पाप आता है जैसे हमको दुःख होता है और दुनियाँ में जन्म मरण करने पड़ते हैं जिसका नाम अशुभ हैं दूसरो आश्रव से पुन्य आता है जिससे हमको दुनिया में सुख मिले आनन्द मान धन दौलत परिवार बढ़े और दुनिया मे सोभा होवे इसका नाम हैं दुनियां में सुभ सुख देने वाला हैं और सवर निर्जरा दोनु ने मिल हमको मुक्ति में पहुँचा देवेंगे कब देवेंगे जब नव तत्व पदार्थ के निश्चय सम्यग ज्ञान कार सी... निक के होजावेगो और आगे देखो क्या कहा हैं सत्य कहा हैं ॥४७...

॥पाप फल भुजंग प्रयात छन्द॥

घणे ही न माता पिता नारि पूतो धन धाम वासो सुथिरो विभू...
महारो पीडे घणे अंग हीने झिसे,पाप कीने तिसे दुःख लीने ।४७...

अर्थ —ऐसे २ जीव संसार में बहुत हैं जोके माता पिता से हीन हैं नर नारी,हीन पुत्र पुत्री हीन धन धान्य से हीन घर बार हीन वास पड़ोस से हीन वस्त्र पात्रादि से हीन विभूत परीग्रह आदि से हीन और बड़े २ रोगों से पीडत हैं अंधे हैं कुब्ज हैं पंगुले हैं टूंडे हैं गंजे हैं गूंगे हैं इत्यादिक अनेक अङ्ग हीन हैं बहोत घने जीव दुःखी हैं जिसने पाप किये हैं उसने दुःख लिये हैं इस प्रकार से जीव पापों का फल भोगते हैं और संसार में जन्म मरण करते फिरते ॥४७७॥

पुन्योदय आपके यह फल नव प्रकार से पु'य पाप ४२ प्रकार मे अव भोगे मिले फल ॥४८०॥

नव पुन्यनाम नाराच छन्द

सु भक्ति नीर थानक सुमैन चीर दिजिया ।
मनो सुवैन देह सो तथा प्रणाम कीजिया ॥
भरति पु य नौ विधे सुनो सुबुद्धिवत्तजी ।
करति जीव जो रही हवति पुन्यरति जी ॥४८१॥

अथ —स्वदृष्टि भोजन बहुत भाति के खाने याने दवें सुन्दर शीतल जल रसवंत आदि पीने के लिये देव ठिकाना कोइ रहने फ लिये देवे सिजादिक देवे पहरने के वास्ते वस्त्रादिक देवें मन से किसी का बुरा ना चिते वचन से शुभ शब्द बोले काया से दु'खी जनों की सेवा करें जिसे दुसरे की आत्मा सुख साता आराममाने और गुरुदेव माता पिता ज्येष्ट पुरुषों को नमस्कार करना चाहिये सो जीव पुन्य बांध यह नव प्रकार का पुन्य जीव बाँधे सो सुखपावे ॥४८१॥

॥ कडका छन्द ॥

जीव सो नित्य सोनित्य चेतन सदा कर्म सजोग गति जोनिधारी
पाप छोहे मई पुन्य हाटक घड़ी दुविध बेड़ी महा मोह मारी
छोड़ बेड़ी छूटे मोह की फन्दते मुक्ति पुरराज थिर छहि मनतो
सचिदानद परमात्मा देवजा नमो कर जोर हरजस करतो॥४८२

अर्थ—जीवात्मा सदा तीन काल जीव जीता है सो चैतन्य जीव है सदा रहता है और आठ कर्मों के साथ चार गति रूप संसार में तीन प्रकार कियोपि यह जीव भोगता फिरा है जैसे पाप रूप लो

रहा है और पुन रा स्वर्ग है यह दो वेड़िया महा मोह कर्म है इन
न्यों के जाल में यह भ्रम मरण किया है इन दो वेड़ियों में जीव
बंधा हुआ है जब इस जीव की मोह निंद खुलगी तो यह जीव
ज्ञान धारा संभालेगा वर आपनी सम्यक दृष्टि छेड़ी से मिथ्यात
का बड़ा का तोड़ के बंधन से छुट मुनि महाव्रत पुरी पहुँच ज्ञाना-
दिक मित्र गर्णों को साथ लेकर मोहादिक जो आत्म शत्रु थे उन्हों
को हनकर वैकुठपुरी का राज लिया फिर मुक्ति का सास्वता अनंता
राज पाया ऐसे श्री सत् चित् आनन्दमय ज्ञान दर्शनमय परमात्मा
इनको मैं युग हस्त कमल जोड़कर हरजसराय वंदना करता हैं
फिर परमात्मा को वारम्वार वंदन ॥४८२॥

श्री जिनवाणी सारस्वती अमित अनादि अनंत ।
कहा कहे कवि अलप मति खग वन नभ जिनंत ॥४८३॥
जहां वाणी देवप्रति जो भाषी पराम ।
जहां वाणी सेव यति सोभा की है धाम ॥४८४॥

अर्थ—श्री जिनेन्द्र देव की वाणी सारस्वति है संदेव सम है
अमित है अनादि अनंत है कवि की बुद्धि अल्प है कहा तक वर्णन
करें जैसे पक्षी आकाश में उड़े परन्तु आकाश का अन्त नहीं आवे
इसी प्रकार से श्री भगवंत के गुणों का और वाणी का अन्त नहीं है
अन्त नहीं पावे ऐसे हैं भगवान की वाणी गुण ॥४८३॥ श्री वीतराग
देव की वाणी की जहा २ जाते हैं तहा २ भगवन की वाणी का
प्रकाश होता है भगवान की ज्ञान रूपी वाणी को वार वार धवो
—— —— सिते मिलती है और यह गुणों कि खान

हैं इसकी शोभा बढाओ यश गाओ ॥४८४॥

यमक अलकार दोहा

जिह जिह वाणी सरद ही तिहतिह समगति पाय ।
फर फर करणी कर्म खय शिव शिर पहुचे जाय ॥४८५॥

अर्थ —जिस २ भव्य जीव ने भगवान की वाणी पर श्रद्धा करली है और प्रतीत आई है उस २ जीवने सम्यक् प्राप्त करी है, उन्हीं का अंतःकरण भी शुद्ध हुआ सजम लिया तप किया करणी कर सकल कर्म क्षय किये उपद्रव रहित कल्याण रूपहोये मुक्ति निर्वाण पद में जा विराजे ॥४८५॥

॥ चक्र वध दोहा ॥

सुन सुन जिन धुन ज्ञान गुन दिन दिन तन मन लीन ।
सुन सुन गुन गण आन मन धन धन जन अन दीन ॥४८६॥

अर्थ —हे भव्य जीवो ! आप श्री जिनेश्वर देव की वाणी की ध्वनी सुनों सुनके भगवंत के ज्ञान का गुण जानो गुण जाणके दिन प्रति दिन आपने मन में तन मन से लीन रहो और गुणों के गुण को चुन २ के ग्रहण करते रहो आपने मन हृदय में धरते रहो धन है धन है ऐसे उत्तम जीवों को दीन पने से रहित रहो और यहाँ महा सतोष रूप धन से पूर्ण हैं ऐसे २ जीव संसार से तर जाते हैं ॥४८६॥

सरू बन्ध सवैया

सुन जिन-रूचर अमृत मय भव जन मुदित-हरण दु ख दोष
सुख को धाम महा शोभामय सयम सुद्ध धार सन्तोष

गुर पद पाय सिद्ध कौशिक की भोगे भोग अतुल मन पोख
सुम शम धर्म कर्म मल दूर करि अविचल अमल परम पदमोष

अर्थ—सुनके अरिहंत देव के वचन भव्य जीव अति ही हर्षवंत रहते हैं यानी खुशी में भोप हुवे रहते हैं दुःख और दोषों का सर्व नाश करते हैं क्योंकि महा सुख का घर उपमावंत महा मुनि साधु इति संतोष रूप धारते हैं फिर उत्तम देव पद पाते हैं पद प्राप्त करके उत्तम भोग भोगते हैं और आपने मन मे अतुल मुख मान शरीर को पोषना करते हैं। फिर उसके बाद मानव भव लेते हैं और संसार में आ-न ले महा धन अपर भी ऋद्धि का सुख भोग भोग के पिछे संयम लेव तप कर कर्म क्षय करें और अविचल स्थान मुक्ति में जावे उत्कृष्टो पद पाय सिद्ध गति में सिद्ध होवें जो २ ऐसी करणी करेगा वह जीव तरेगा ॥४८७॥

श्री वसे यथालंकार दोहा

समगति मैं शुभ-भाति बसे सेवो सदा सुपान
शासन मैं महिमा बधै पावो ऊंचा स्थान ॥४८८॥

अर्थ—सब गुणो की खान मूल सम्यक्त्व होती है जिसमे सारे गुण सम्यक्त्वी के रहते हों समते हो हे भव्य चतुर जीवो ? तुम सदा नित्य इसकी सेवा करो जिससे जिन शासन की यशो कीर्ति होवे और परभव में ऊंच गति मे जावे उत्तम पदवी पावें ॥४८८॥

अष्टकोण-पदाकार वसंत तिलका छन्द

देवाधि देव जिनदेव नमामि तुभ्यन्तु
तुम्यानमन्ति मुनयश्च नरेन्द्र भव्यों

भव्यां सरीर गगन रचयत पूज्य मू
पूज्या विलोक हरषान्ति सुभक्ति देवा ॥४८६॥

अर्थ —हे भगवान देवाधि देव अहम ? तुमको वन्दना नमस्कार करते हैं और मुनिश्वर साधु महात्मा तथा उत्तम भव्य जीव भूपति आदि घणे अच्छे भले देवते नाग कुमरादि के समूह यह तुमारी पूजा भक्ति करते रचते हैं और आपकी सेवा पूजा भक्ति स्तुती गुण ग्राम करने को देखके अति प्रमोद पाते हैं देवी देवता ऐसे यह सब मिल करके वन्दना करते हैं ॥४८६॥

वृत्त अथ मालनी छन्द॥

जलज सरस जोवी पक्ष सोभा प्रभु की
जलज सरस सेती दन्तभा नाथ जूकी
जलभ सरस साई को मलाई करो की
जलज सरस गषो स्वास लेते स्वरो की ॥४६०॥

अथ —श्री देवाधिदेव की महिमा जैसे जल में चन्द्रमा सरस पूर्णमासी का साफ निर्मल शोभा देता हैं ऐसे ही भगवंत की वाणी की भी निर्मल सोभा हैं भगवंत के मुख से जो निकलती हैं और जैसे मुक्ता फल सरस जल सहित शोभा पाता है और जैसे शरद ऋतु के रत्नों का ढेर माति देवे सजल सहित हावे तथा जैसे सजल सरस कमल उत्तम सुगन्धी देवे ऐसे ही उत्तम से उत्तम श्री भगवन के स्वासो स्वास आते हैं सुगन्धमई जब स्वर से बोलत-स्वास लेते हैं जो भगवंत के गुण लेगा सो तरेगा ॥४६०॥

सर्व लघु वर्ण सरोवर वध, शकर छन्द

नरक पशु गति गमन भय हर दुरत दल पर हरन ।
नर हाथ कर भगति चित्त धर प्रचच जिनवर चरन ।।
नर चतुर सुर असुर उड गण गहित जिन पद सरन ।
नर सफल कर जन्म मल जिन धर्म सम शुभ करन ।।४६१।।

अर्थ —श्री वीतराग देव नरक गति के और तिर्यंच गति के इन गतियों म जाने वालों का भय दूर कर देते हैं जैसे श्रीकृष्ण महाराज श्रेणिक राजा के भय दूर किये थे वैसे ही सब के भय दूर करने वाले हैं और सर्व पापों के दल पीसकर नाश करने वाले हैं इसलिये हे मानव ? मानस चित्त प्रसन्नता के साथ भगवन की भक्ति स्तुति गुण ग्राम करो और जिनेश्वर देव के चरण कमलों में मानव देवगण देवते दानव ज्योतिषी चन्द्रमादिक भगवंत के चरणों का शरणा लेते हैं हे नर मनुष्यों ? जन्म सफल कर भगवान का भजन कर जिन धर्म कर यह सर्व दोषों का नाश करने वाला है धर्म ।।४६१।।

मथानी वध कोट वध प्रश्नोत्तर इन्द्र वज्रू छन्द

को कर्म चूरे जिन धर्म नीको को कष्ट काटे जप नाथ जीको
को देव पूजो मुनिराज टीको को नित्य वामो गति पचमी को

अर्थ —श्री गुरुदेव के साथ चेले के प्रश्नोत्तर हैं ? चेले का प्रश्न है भगवन् कर्म कैसे नाश करते हैं ? तथा चूर करते हैं ? गुरु का उत्तर-हे शिष्य जिनेश्वर देव का अहिंसा धर्म करने से (ठीक है) शिष्य का प्रश्न है भगवान जीव के ऊपर कोई कष्ट दुख व्याधि

आजावे तो क्या करे–गुरू का उत्तर–हे शिष्य ? भगवान् के नाम का
जाप कर जैसे अखंड जाप हो लोगस का मंगलाचार का नवकार का
तथा १०८ अणापूर्वि नित्य का जाप हमेशा एक वक्त प्रात काल ४१
२१ ६१ तथा ७१ दिन अणापूर्वि की एक माला रोज पढो समय प
यह जाप करो गुरुजी सच है ? शिष्य का प्रश्न हे भगवान ? कौनसे
देव,पूजा सेवा भक्ति करनी चाहिए जिसे कल्याण हो ? गुरुदेव का
उत्तर–हे वत्स ! जो पांच याम के पालने वाले, पापाश्रवरूप
को टालने वाले मुनि महात्मा के,दरशन करो वाणी सुनो ऐसे गु
देवों को देवों को पूजो सेवा भक्ति करो मत् है महाराज । शिष्य का
प्रश्न–हे दयालुवो, इन से लाभ क्या होगा ? कृपा कर गुरुदेव
उत्तर मिला, हे आर्य ! जो कोइ जीव निर्बंध कार्य करेगा, वह जी
पांचमी गति में जावेगा जिसको मुक्ति कहते हैं, जो कोइ भी
नहीं करेगा । वह जीव सदा के लिये अजर अमर पद पावेगा मुक्ति
में जय गुरू देवों की । ॥४१७॥

॥ सारङ्गीछन्द सर्व गुरु वर्ण छगणकणा बन्ध ॥

नेमाराधी,देवा वाले मोखे जावे माधूजी ।
नेमा राधी,नीके जावे वाकी सिष्या,साधू जी ॥
धीरा माने,साची वाणी भाखी ज्ञान साधू जी ।
धीरा,माने पूरे पुन्ने होवे धम्मा साधू जी ॥४६३॥

अर्थ—पांच यम पाले ५ महाव्रत पाले नेम सुन्दर शुभ चार
पाले साधु के तो देवलोक २६ तक जावे और, पाँचमी, पदवी प
अगर उत्कृष्टा संयम आराधे पाले तो वीत राग, हो, केवल ज्ञान

वे और क्रम क्षमा मोक्ष मे जावे। अगर अनुव्रति श्रावक होवे तो और आपने नेम का आराधक होवे सो १२ में देवलोक तक मरके जा सकता है। कौन जा सकता है। जो आपके गुरु देव मुनि महात्मा साधु की शिक्षा के आराधक हों (क्योंकि जो साधु की शिक्षा नहीं माने वह विराधिक होंगे) और वह पंडित कहाते हैं तथा आराधिक को पंडित मानते हैं। क्योंकि साधु की सची वाणी कही वह अगाध ज्ञान के धनी हैं, और उन्हीं को तीर्थंकर देवजी ने भी पंडित माने हैं। जो पूर्ण पुण्यवन्त होने से होता है और धर्म का लाभ पाता है। यह वाणी सची है ॥४८३॥

॥ चौकी बन्ध-शङ्कर छन्द ॥

वासुदेव हारो ना फणी से ऊजिने,
ममार सोमार श्री जिनराज जीतश चित्त प्रमोद अपार।
वैरुपठकरण तव तणो प्रभु दमी नो मत,देव।
सावो सुराङ्क त्रिलोक माबी नमो श्री जिनदेव ॥४८४॥

अर्थ—श्री जिनेश्वर देव ने कहा है कि जिसने कामदेव को वश में किया है वही शूरवीर योद्धा है। अगर नहीं तो कामदेव सर्व दुनिया को अपने वश में रखता है, जैसे देवते, दानव नागादिक मानुष्य पशु पक्षी जलचरादिक तिरत श्री ससार,म और कितनेक जीव कामदेव के वस हारे हैं ऐसा कामदेव बड़ा सुरमा है ऐसे,जालम कामदेव को जीतना बड़ा मुशकिल है, परन्तु श्री जिनेश्वर देव ने जीता है, और अति हर्षवन्त होते हुए जिन्हों का अपार चित्त है, विराड़ और श्री भगवत देवजी ने तप सजम किया,तथा इन्द्रीयाँ वस

र्म दमन करी और सत्य पदार्थ हैं उनको आत्मा सेवन करती हैं जो सत्य हैं पदार्थ–इस लिये श्री जिनेश्वर देव का सुवचन हैं जोकि तीन लोक के नाथ हैं उन्हों को मेरा नमस्कार होवे यह मेरे देव हैं ॥४८४॥

॥ माटक-छन्द-चौपड बन्ध ॥

सो साधु जिनके सदैव समता दवेश भापे जिमो ।
सोतारू भव सिंधु घोर तरणे शामे जहाज जिमो ॥
सो ज्ञानी गुण सिंधु रत्न भरियो ताके सगारमा क्रमो ।
सो वन्दो शिव हेत पाप हरण गाव यशो पारसो ॥४८५॥

अर्थ —साधु महापुरुष वह है जिन्हों के चित्त में सदा समता है और उन्हीं का यश देवेन्द्र भी कथते हैं, और वह संसार समुन्द्र महाघोर को तरते हैं और शोभा पाते हैं। जैसे समुन्द्र में जहाज शोभता है वैसे ही मुनि गुणवन्त ज्ञानी हैं। गुणरूप रत्नकरी पूर्ण भरे हुये हैं, और जिन्हों ने अपनी आत्मा सदा वश में करी है। उन्हीं साधुओं को मैं वन्दना करता हूँ वह मोक्ष के प्राप्त करने वाले हैं जैसे यश पारसरूप लोहे को कंचन करे ॥४८५॥

॥ गतागन्त मत्तगयन्द छन्दसाथिया बन्ध ॥

तामस क्रोमद लोभ प्रहार रहा भ्रम छोदम थी ममता ।
ता मरयाद सधी मन दास, सदा नम घोस दया रमता ॥
ताम गही गरमा व्रत सेत, तसतत मारग ही गमता ।
तामव नेह करो लख सोई, इमो खल रोक हुने तपता ॥४८६

अर्थ —तामस क्रोध मद अहंकार और लोभ ये चार कषायों का नाश करके पापों को अति २ श्रेष्ठि इन्द्रिया का दमन और ममता

[illegible] तव धर्म की मर्यादा मानी जाती है और अपने मनको वश में रखते हैं और हाथ सदा आराम मद [illegible] विनय सहित सब बुद्धि [illegible] हाथ दया के साथ रमता रहे ऐसा मार्ग की महिमा बढ़ावे [illegible] सदा शांति है तथा जिस मार्ग में शान्ति हो उसको [illegible] मुक्ति का पथ गमन करता है हे जीव ? तुम ऐसे हो मन [illegible] [illegible] देखलेओ सो वह मन महा दुष्ट पापों का [illegible] है एसा मन आवें पापों को आने देता नहीं [illegible] [illegible] थाम। है ॥४८६॥

एक सकार-वर्ण-दोहा

सुख्य रासी सीम सो ससि माहे सो मंथ।
सस सो मस सेम सो मासोसास सुसीस ॥[illegible]॥

अर्थ—सुखुपावत शिष्य होवे आरा[illegible] है। राशी चन्द्रमावत शीतल सिष्य होते हैं [illegible] शिष्य होवे, निमल चित्त होवे शिष्य मोटी [illegible] है गुरु की की सुशिक्षा माने सो शिष्य [illegible] गुरु का गुणगान करे सदा निर्मल रहे सो शिष्य है ॥४८७॥

आदि अन्त एक [illegible] छन्द

बिगर पय कानि कि छीट पर्या [illegible] बिगरे
बिगरे तर पु ज कपाय बड़े [illegible] के बिगरे
बिगरे हित मित्र जहाँ छल है [illegible] स्वामित है [illegible]
बिगरे कुल जात कलंक लगे [illegible] करी

अर्थ —श्री जिनदेव जी ने कहा है कि जैसे दुध मे पानी की एक छींट बुद पड़ने से दुध का नाश होजाता है अगर चांदी सोने में खोटी धातु पड जावे तो नाश करे जैसे पारा जुधात है अगर जप तप समा संतोष कर सु अ ढेर लगा दिया और फिर उसमे कषाय करे क्रोध चढे तो सारे जप तप का नाश करे बिगड़ जाता है ऊंच उत्तम कुल में दाग लग जावे तो बिगड़ जाता है राज मन्त्री सैना सेनापति शेठ महाजन आदि उत्तम पदवी वाले खोटी संगत से बिगड़ जाते हैं बिगड़ जाता है, क्या आपस का धर्म क्योंकि जब आपस म छल फरेब कपट विश्वास घात मित्र द्रो निन्दा चुगली झूठादिक बोले ईर्षा द्वेष करे तो सभा धम आपने दिल से धर्म बिगड़ जाता हैं और राज कुल अनीति करने से बिगड़ जाता हैं और राज भण्डार भी सर्व नाश कर देते हैं ॥४६८॥

आदि अन्त एक स्वर दुमल छन्द

सुधरे शठ पंडित संगति ते अविनीत कला करते सुधर ।
सुधरे मिल पारस लोह सही अरू ताम्र रसायण ते सुधर
सुधरे विष औषध वैदन ते मन्यागर त वरूरा सुधरे
सुधरे ठग हिंसक साधु धकी भव कोड़ अघा तपते सुधर

अर्थ—अरिहंत देवजी ने फरमाया है कि बड़े से बड़े भी बिगड़ जाते हैं वह भी अच्छी संगत से सुधर जाते हैं जैसे प्रभवा चौर जम्बू कुमार से सुधर चिलायति चौर श्री महावीर प्रभु से सुधरा ऐसे ही मुर्ख जीव मुनी महात्मा पंडितो कि संगती से सुधर जाते हैं और यह जीव चतुर बन जाते हैं तथा जो अनिती जो २ अनितीव जीव नर

लोगी पंशु तुरग हस्ति बैन पत्री आदिक कलावान उसताद से सुधर
जात हैं लोह मे पारस मिलके सुधरे तो वसका कचन सोना बनजाता हैं
कला ताम्बा मिन के रमायण जुटी बने और निसका रूपा सोना होवे,
बनाया मिदा विषि को औषधी सयोग से सुधर २ वैद सिद्धांपरी
हार और गोशीर्ष चन्दन की सुगन्ध के मेल से निबादि अनेक जाति
के वृक्ष चन्दन जैसे हावें और महा महाहिंसक ठग चोर लुटेरे धाड़वी
चंडाल पापी जीवों को भी साधु महात्मा के मिले से उपदेश से धर्मी
जीव होजाते हैं अनेक करोड़ जन्मों के संचित पाप कर्मों को इकट्ठे
किये हुवे थे यह सर्व गुरू की कृपा से तप से जप से सयम से पापों
का सर्वनाश कर शुद्ध हुन स्वग मुक्ति पाव ॥४६६॥

काम धेनु कवित्त रचणा दोहा

चौपई दोहे सोरठे और अड़िल्ल कवित ।
एक सवैये को प्रगटे कामधेनु सुखमित ॥५००॥

अर्थ —कामधेनु छन्द का स्वरूप इस प्रकार से है। चौपई-
दोहा सोरठा और अड़िल्ल छन्द कवित और सवैया ये कामधेनु
छन्द होते मित्रों ॥५००॥

मत्त गयन्द छन्द

श्री जिनचन्द मुनिंद कुचन्दन देत मनुष्य हित य हित धारण
भक्ति करी अरु चंद कु लडन ध्यान मनुष्य समीव निवारण ॥
मेट महा भ्रम मोह कुनाटक ज्ञान कुराग कुम्प निवारण
ज्यों मिल पारस लोह सुद्दोटर वान कुवाम सुभूपण काय

अर्थ —श्री जिनेश्वर देव और मुनिया वे द्र श्री अरिहंतों को इन्द्र भी और देवगण आदिक भी अपना हित जान कर वन्दना नमस्कार करते हैं भक्ति करके अपने पूर्व जन्मों के अध को नाश करते है ध्यान धनुष्य को धारण करते हैं भयभीत निवारण करते हैं इसके द्वारा और मोह महा भ्रम निरन्दन करते हैं ज्ञान रूपी नाटक शाला मे मदान्द मोह निद्रोह करता हैं उसको दूर करने लिय ध्यान रूपी धनुष्य टंकार शब्द होते ही शुरूपी विचार आदि दत्य भाग जाते हैं जैसे पारस के छूते ही लोहा स्वर्ण बन जाता हैं। उसी प्रकार अज्ञान रूपी आवरण उसको नष्ट करता है। यनी लोहा किसी समय उसकी तुच्छ मूल्या का हैं परन्तु पारश के स्पश मात्र से ही उसका मूल्य बढ जाता हैं राजे महाराजे आदि के चक्रवर्ती के अभूषण बन जाते हैं ॥५०१॥

चौ०-श्री जिनदेव मुनिंद कु वंदन भक्ति करी अघह द दुखखडन
मेट महाभ्रम मोह कु नाटक ज्यों मिल पारश लोहसु हाटक
देव मनुष्य हिये हित धारण ध्यान धनुष्य सभीव निवारण
ज्ञान कुरास कुरूप विशारद बाण कुलाण सुभूषण कारण

अर्थ —श्री मुनिन्द्र को वदन करने से पाप कम क्षय हो जाते हैं हृदय पटपन्न से मोह अधकार मिट जाता हैं जैसे पारस के प्रसंग से लोहा भी सोने का रूप धारण कर लेता हैं और बाजार में बिकता है ।।५०२।। देवता और मनुष्य अपने हित के लिये वन्दना करते हैं शुक्ल ध्यान धर्म ध्यान रूपी धनुष्य धारण करके अंतरंग शत्रुओं का पराजय करते हैं ज्ञानरूपी उद्यान मे कुरूप विशारद अर्थात (पशु)

हृदय पद्म से भगा देते हैं ज्ञान रूपी बाण के द्वारा शुक्ल ध्यान रूपी धनुष्य को चिल्ले पर चढ़ा कर मन टंकार शब्द करने से अहंकार मोह आदिक पशु भाग जाते हैं ॥५०२॥

दो०—श्री जिनचन्द मुनिंद को वदन देव मनुष्य ।
भक्ति करी अघ वृंद को खंडन ध्यान धनुष्य ॥५०४॥
मेट महाभ्रम मोह को नाटक ज्ञान को रास ।
ज्यों मिल पारस लोह सु हाटक शान सुवास ॥५०५॥

अर्थ—श्री जिनेश्वर तीर्थंकर देव को मुनिजनों देव और मनुष्य भी भक्ति करते हैं उस भक्ति मन के द्वारा अपने पाप कर्म किये हुये कर्मों का खंडन करते हैं। ध्यान रूपी धनुष्य को [illegible] करते हैं ॥५०४॥ मिटाते हैं महा भ्रम अपने हृदय में मोह [illegible] ज्ञान रूपी नाटक दिखाते हैं उसको जैसे किसी को पारस [illegible] जाय तो उसके द्वारा अपनी दारिद्रता को दूर करते हैं [illegible] में लीन रहते हैं ॥५०५॥

सोरठा—श्री जिनचंद मुनिंद वदन देव मनुष्य हैं ।
भक्ति करी अघ वृंद खंडण ध्यान [illegible] ॥५०६॥
मेट महा भ्रम मोह नाटक ज्ञान [illegible] ।
ज्यों मिल पारस लोह हाटक [illegible] ॥५०७॥

अर्थ—श्री अरिहंत देवजी को [illegible] वन्दन करते हैं जिनके हृदय में भक्ति [illegible] उसके द्वारा अपने पाप कर्म पूर्व [illegible] ध्यान रूपी धनुष्य का ही सहारा है [illegible]

ज्ञान रूपी नाटक को देखते हैं। मोह नारूपी नाटक को छोड़ दिया है जिस प्रकार से पारस मटी के प्राप्त होने से अपने इहलोक के सुखिय सुखों को प्राप्त करते हैं ॥१०७॥

अडिल छन्द

श्री जिनचन्द मुनिंद कु वदन देव मनु ।
भक्ति करी अपन्द कू खडग ध्याण धनु ॥
मेट महाभ्रम मोह कू नाटक ज्ञान को ।
ज्यों मिल पारस लोह सु हाम्य बान को ॥१०८॥

अर्थ—श्री जिन चन्द्रमा के समान शीतल निर्मल और समुद्र के समान उज्ज्वल मुनियों के पति हैं अरिहंत दयनी तथा देवता और मनुष्य भक्ति वस होकर वन्दना करते हैं। भक्ति के द्वारा अनादि काल का भ्रमण को निवारण करते हैं। ध्यान धनुष्य के धारण करने वाले हैं मिटाया है क्या ? मोह रूपी बादल आकाश जिस प्रकार से स्वच्छ दृष्टि गत होता है जब कि आकाश मे बादलों का अभाव होता है। दूर हो जाती हैं इसी प्रकार आत्मा के ऊपर मोह रूप बादल छाया हुवा हैं। ज्ञान रूपी वायु के संघर्ष से मोह रूपी बादल आत्मा से शीघ्र भीघ्र हो जाते हैं जैसे दुकानों में लोहा पड़ा रहता हैं। जंगाल लग जाया करता है उसकी कीमत कम होती जाती हैं इसी प्रकार आत्मा संसार चक्र मे चक्र काटते हुए दुखित हो जाता हैं। अनेक प्रकार से न करने योग कार्यों में लीन हो जाता हैं। परन्तु जिनेश्वर देव रूपी ज्ञानी का एक शब्द भी उसकी आत्मा को स्पर्श कर

। पारस की वटी का काम देता है। भवान्तर बंधन से मुक्त होता
॥८-८॥

वेच.—श्री जिनचन्द मुनिंद सु वन्न देव मनुष्य हिय हितकार
भक्ति करी भव पुष्प कू सहस ध्यान धनुष्य समीत निवार
रटे महा अरू मोह भूपाटक ज्ञान सुराम सुरूप विचार।
ज्यों मिल पारस लोह सुहाटक जानहु खास सु भूषणकार

अर्थ—श्री जिन चन्द्रमा के समान शीतल कान्ति वाले मुनि
जा के आधार और देवताओं को मनुष्यों को भी वन्दनीय हैं करते
ो हैं भक्ति भाव पूर्वक। अग्नि के द्वारा पापों के पुञ्ज का विध्वंस
करते हैं ध्यान रूपी धनुष्य सर्जन कर अपने पास रखते हैं, जैसे
सैनिक समर भूमि में जाते हैं वहां पर निरभयता पूर्वक संग्राम करता
है संग्राम में विजय माला प्राप्त करके प्रमोदित होता है इसी प्रकार
रत्न भूषण रूपी युद्ध भूमि में आत्मा विजय श्री को प्राप्त करती है
ध्यान धनुष्य के द्वारा इस युद्ध का विजयी बनता है मोह की सेना
को पराजय कर देता है। आत्मा के शत्रु काम क्रोध मद लोभ आदि
इन सेनापतियों का पराजय होजाने से मोह नृप की शक्ति क्षीण हो
जाती है पारसवटी के समान केवल ज्ञान केवल दर्शन आदि के
पुञ्जों में लीन हो जाते हैं। विश्व का भूषण हो जाता है ॥४०६॥

सोरठा—समकित पाई जीव थोड़क शिव पुर जा वसै।
मिथ्यावत सजीव जन्म मरण महि भव भ्रमै ॥४१०॥

अर्थ—श्री वीतराग देव ने फरमाया है कि जिस २ जीव ने
सिद्धी समकित से पाई है वह जीव या तो इसी भव में या इसके

तीसरे भव लेके (या) अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तन कर अवश्य ही यह जीव शिव पुर का पद लेवेगा मुक्ति महल म जा विराजेंगे और सम्यक्त्व के बिना जो जीव मिथ्यात्व भ्रम मे पड़े हुए हैं । और उसमे संयुक्त हैं सो वह जीव ससार रूप समुद्र मे जन्म मरण बहुत करेंगे अगर उत्कृष्टा पणे जावे तो अधिक से अधिक नव नवग्रीवेग तक जावे २१ तक २१ देवलोक से आगे नहीं जैसे अभव्य जीव जाने "(में तक आगे नहीं इसलिये भव्य प्राणियों सम्यक् दृष्टि बनो ॥५१०॥

सम्यक्त्व पर छप्पय छन्द

इक ध्यावे निज तोड तीन धर चार पछारे ।
पच जीव षट पाले सात म चित्त नहिं डार ॥
आठ मथे नव साज धार दस इक दश माने ।
बारह रथ तेरह हटाय चौदह चित्त ज ने ॥
पनदस विधि प्रभु उरें सोलह हर सतर धरें
होई अठार रहित हीं अजर अमर पदवी वरें ॥५११॥

अर्थ —एक निराकार आत्माराम को ध्यावें दो को तोडे दोयो राग द्वेष तीन को अपने चित्त मे जमालो ज्ञान दर्शन चारित्र चार आलमों को दूर करदो क्रोध मान माय और लोभ को पछाड़ के परे मारो और पचों इन्द्रियों को जीतो छै काया के जीवों की रक्षा करो सात प्रकार के भय से निर्भय होओ यह लोक भय परलोक भय मरण भय क्षुधा भय चौर भय अदान भय अकसमात भय अजीविका भय यह सात तथा सप्त कुव्यसन त्यागन करो आठ कर्मों को तथा आठ मदों को मथन करो नाश करो दुर करो नव बाड़ शील की शुद्ध पालो

दोष टालो इस प्रकार का यति धर्म पालो ग्यारा अंगों पर श्रद्धा पूर्ण रखो सभी है। आशातना टालो विनय भक्ति करो दिल से। बारह प्रकार की भावना भावो जैसे भरत चक्रवर्ती ने भाइ। १३ प्रकार की क्रिया दूर टारें। १४ प्रकार के गुण स्थानों का ध्यान करो कि मैं किस ? गुण स्थान मे हूं ? ऐसा विचार करो और १५ प्रकार के सिद्ध भगवान देखो कौन ? हुये हैं। सोलह प्रकार के कषायों को दूर कर जो चार की चौकड़ी हैं उनका नाश करो जड़ से और १७ प्रकार का सयम पालो निर अतिचार दोष से रहित होकर के। तथा अठार १८ प्रकार के पापोंको सर्वथा दूर हटावो तब तुम अजर अमर पद पावोगे ॥४११॥

अज्ञान कृत ससार जन्म मृत लिंग जोग त्रय।
गति सज्ञा न कषाय देह इन्द्रिय न वरण मय ॥
लेश्या,मजा सठाण समुदघाता भय नाही।
कर्म भक्त नहीं प्राण चिन्ह मूरत नही वाही ॥
चिन्ह अलख अमित अविचल अगम परम जोति परनेश।
सर्वलोक सिर मुकट हो रमो सदा सर वेश ॥४१२॥

अर्थ —श्री वीतराग देव ने कहा है कि जहाँ अजर अमर पद पाय उसका नाम मुक्ति है और जहाँ पर ससार का कोई कार्य नहीं है वहा जाके जन्म मरण दोनों नहीं हैं और तीन लिंगों में से कोइ लिंग नहीं ३ योग नहीं तीन अवस्था नहीं चार गति मे से कोई गति नहीं चार संज्ञा नहीं क्रोधादिक सारे कषाय नहीं या शरीर नहीं पाच इन्द्रिय नहीं पाच इन्द्रियों के विषय २३ नहीं चार ध्यान मे से को

ध्यान नहीं हैं। छं लेश्या में से कोइ लेश्या नहीं है। दस प्राणों में से कोई प्राण नहीं हैं। लक्षण स्वरूप मूर्त्ति नहीं अलख है अमित हैं अविचल सदा थिर हैं अगम हैं परम ज्योतिवंत हैं परम परमेश्वर हैं परम ईश्वर हैं सब जगत् के ईश हैं सर्व विश्व के सिर ऊपर मुकुटवंत है ऐसे मुक्त मे श्री सिद्ध भगवान् सदा रमे रहते हैं सर्व के स्वामि सर्वज्ञ हैं ॥४१२॥

सिद्ध —णमोत्थुते सिद्ध बुद्धणीरय, समण, समाहिय समत्त समजोगी मरलगत्तण णि-भय णिराग दोस निम्मल निस्संग णिल्लेव माण मूरण, गुण रयण, सीलसागर मणंत मप्पमेय, भविय धम्मवर चाउरंत चक्कवट्टी ॥ —आगम—

अर्थ —दोनों हाथ जोड़कर मस्तक से अंजली करके ऐसा कहते सिद्ध बुद्ध कर्म रज रहित श्रमण तपस्वी समाधियुत, सम्यक्त्व युक्त वाले समयोगी शल्य के विनाशक निर्भय राग द्वेष रहित ममत्व रहित संग रहित कर्म मल रहित शल्य विदारक मानमर्दक गुण रत्न कर शील के समुद्र अनन्त ज्ञान मय अप्रमेय अनन्तगुणी भव्य और धर्म चातुरंत आप चक्रवर्ती हैं नमस्कार होवे ॥

जैसा कर्म हो वैसा कम पर मत्तगयन्द-छन्द

पात करीर लहे न फवे अब रुत्त वसंत सुधा घन होई ।
जात कु अंध लखे नहि रूप धनंतर से जब औषध होई ॥
पावक गर्भ पाखान जले रहि काल घणे बिन आगन सोई ।
त्यों न लहैं सम भेट मिथ्यात अभव्य सुणे जिन आगम जोई

अर्थ—कैयर नाम का वृक्ष है उसको करीर भी कहते हैं

केईयों कहता है कि कैयर के पते नहीं होते ? मैं कहता हूं हा होते हैं यथार्थ —सत्य है असार नहीं पत लगते हैं परन्तु जब बसन्त आता है तब करीर के पत्र लगते है मगर होते है सूक्ष्म बैरी केलैस बैसर जैसे जिरे के पते होते नने २ है। लोग कहते हैं कि बसंत ऋतु म सब बनराइ पनै दती है लेकिन कैयर के पत्र नही लगते यह कहना लोगा का ठीक नहीं है। और जन्माध को धनन्त वह क्या कर सकता है। कोइ किसी किसम का रूप नहीं दिया सकता है कोइ गुटी काम नहि आति इसलिये धनतर वैद्य को कोइ दोष न ी और चमक प रर म अग्नि होती है वह पथर अगर सो वर्ष तक पाणी में रखे तो भी अग्नि दूर नहीं होती तो क्या, यह पाणी का दोष है ? ऐसे ही अभव्य के अन्दर भी मिथ्यात्व सदा रहिती है और सम्यक् दृष्टि से यह जीव दूर रहते हैं तो क्या ? यह सम्यक् दृष्टि का दोष है नहीं कर्म कर्म का फल है ॥४१३॥

दोहा—आदि मन्त नहीं लोक कों वांमे जाव अनंत ।
बिना सिद्ध भव भेद बहु पच से तेसठतंत ॥४१४॥

अर्थ —आदि भी नहीं है और अन्त भी नहीं इसलोक का इस मैं जीव अनन्ते हैं। बिना सिद्ध भगवन के गति मुक्ति के बिना सब बीव ससार में भ्रमण करते हैं पाच सो तेरसठ भेद है ससारी जीव के ॥४१४॥

छापय छन्द

इकमी इक नर भेद नडिन्नवे सुर के जानो ।
नरकी पाणी अगनि वायु ने दो विध ठाणो ॥

अथ वनस्पति भेद तीन विकलिंद्रिय मिलपति ।
दस तिर्यंच सग नरक मय दोमैं इक त्रिशत ॥
इस विधि गिणत परजापते इमो अपजापति जैं ।
इक सौ इक समुञ्चम मनुज पचर्म सुले राठ सव्वे ॥५१५॥

अथ —तीन भेद वनस्पति के तीन विकलेन्द्रिय के तीन
तिर्यंच के दस भेद मिलाये भेद नरक के सात भेद सबों के जीव
उत्कृष्टे ५६२ भेद हैं ॥

गाथा —नेरियतिविप नर देवा चउग्म अडयाल
तिनीसयतिग्न व अठाणु सय मग पणमम मेया ये त
अर्थ —नरक के १४ भेद १—घम्मा २ वशा ३ शीला ४ अंज
५ रिठ्ठा ६ मघा ७ मघवा इन सातों का पर्याप्त और सातों का अ
पर्याप्त एव १४ भेद चौदह तिर्यंच के ४८ भेद—एकेंद्रिय के २२ भे
पृथ्वीकाय के ४ भेद सूक्ष्म बादर का पर्याप्त और अपर्याप्त तेउक
के चार भेद सूक्ष्म बादर का पर्याप्त और अपर्याप्त । वनस्पति क
के ६ भेद सूक्ष्म प्रत्येक साधारण इन तीनों का पर्याप्त और अपर्या
प्त । विकलेन्द्रिय के ६ भेद द्विन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय इन तीनों
पर्याप्त और अपर्याप्त । तियच पचेन्द्रिय के २० भेद पाच सनी औ
पाच असनी । इन दसों का पर्याप्त और अपर्याप्त एवं २० सर्व मि
कर तिर्यंच ४८ भेद हुए । तीन सौ तीन प्रकार के मनुष्य पन्द्रह क
भूमि के मनुष्य तीस अकर्म भूमि के मनुष्य छप्पन अन्तर- द्वीपों
मनुष्य यह सब एक सो एक हुए इन एकसौ ऐक का पर्याप्त और
अपर्याप्त दोसौ दो हुए । एकसौ एक क्षेत्रों के सम्मूर्छिम मनु

मर्यादा। कुल तीनसौ तीन हुए। १९८ प्रकार के देवता यह सर्व पाचसो तेरसठ होते हैं ॥५१५॥

अडिल्ल छन्द—कर्मभूमि नर जोनि पाच दस जानिये।
तीस अकर्मी भूमि जुगलिय मानिये ॥
छप्पन अन्तर दीप जुग लीए हैं सही।
इक सौ इक नरभेद सिद्धान्ते इम कही ॥५१६

अर्थ—कर्मभूमि मनुष्य पन्दरह प्रकार के, तीस अकर्मी भूमि युगलिये मनुष्य छप्पन अन्तर द्वीपों के रहने वाले युगलिये मनुष्य एक सो एक मनुष्यों के भेद हुए। जिनागम में कथन है ५१६

भवनपति दस पनरापरमा हामिया,
सोलस व्यन्तर दसो त्रिय भकनामिया।
दसो जो दसी देव तीन हैं किलमुखी,
नव लोकातक देवलोक छव्वी सुखी ॥५१७॥

अर्थ—दस भवनपति देव, पन्दरह परमा धर्मी देव, सोलह प्रकार व्यन्तर देव, दश प्रकार के तिर्यक जम्भक देव, दस प्रकार के ज्योतिषीदेव, तीन प्रकार के किल्विषी देव, नव प्रकार के लोकांतिक देव, १२ प्रकार के कल्प देवलोक हैं। नव ९ ग्रैवेयक देव लोकदेव देव, पाच अनुत्तर विमानों के देव, सर्व देव सुखों में लीन रहते हैं ॥५१७॥

सुखम बादर भूजल पावक वायके,
इम थिर थये प्रतीय अनन्ती काय के।

विगला विति चउरींद्रीय जलचर थल गया,
खेचर भुज पर उर परसंत्रि असन्निया ॥५१८॥

अर्थ—सूक्ष्म बादर अग्नि पृथ्वी, जल, हवा ये यह दो २ भेद हैं। वनस्पति का तीसरा भेद अनन्त काया विकलेंद्रिय, बेन्द्रीय तेन्द्रीय, चोरिंद्रीय, जलचर थलचर खेचर भुजपुर उरपुर सन्नि असंनी ॥५१८॥

घम्मा वसा सेला अ जणा नाम है,
रिठा मघा माघवई दु:ख को धाम है।
रतन सकर वालू हिपक धूम पहा,
तमा तम तमा नरक गोत साते कहा ॥५१६॥

अर्थ—घम्मा वशा शीला अर्नना नाम हैं नर्कों के, रिठा, मघा माघवई यह दुःखों के स्थान हैं। यह सातों नर्कों के नाम हैं, और सात इन्हीं के गोत्र इस प्रकार से हैं। रत्नप्रभा, शक्करप्रभा, बालू प्रभा पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा तमतमप्रभा यह नर्कों के सात गोत्र हैं ॥५१६॥

इक सौ इक नर भेद तहा ते उपजिया,
विष्टादिक दस चार विषय समुछिया।
परजा पूरी तीन स्परश चतुर्थिया,
उर उपजे नर तिरियच विषय विन युगलिया ॥५२०

अर्थ—इन्हीं के १०१ क्षेत्रों के सम्मूर्च्छिम मनुष्य एक सौ एक तीन पर्याप्त पूर्ण, परन्तु चौथी पर्याप्त स्पर्श अधूरी है। विष्टादिक में उत्पन्न होते हैं दस चार स्थानों में मनुष्य

मंगुर्डम मनुष्य एक सौ एक तिर्यंच और मनुष्य उत्पन्न होते हैं। जन्म मरण करते, आते हैं। संसार में तिर्यन्च युगलिया और युगलिया बिना विषय मनुष्य वासना नहीं करते ॥५२०॥

दोहा—दया सिंधु चित शांति रम, शिवपुर वासे वंत ।
त्रिभुवनपति सुरपूज्य प्रभु, नमो देव अरिहन्त ॥५२१
सर्वज्ञान दर्शनकरी, जिह पायो जग मर्म ।
तिहां भाख्यो उपगार हित, जैन जवाहर धर्म ॥५२२॥

अर्थ —दया के सिंधु शांतचित शिवपुरके बसने वाले त्रिभुवन पति इन्द्रों के पूजनिये श्री अरिहंत प्रभु को मैं नमस्कार करता हूँ॥ ५२१॥ सर्वज्ञ केवल ज्ञान के धारक, सर्वदर्शी केवल दर्शन के धारक जिन्होंने, ज्ञात है जगत का धर्म उन्हीं महाप्रभु ने भाषित किया है, उपकार के लिये जैनधर्म जवाहर के समान है ॥५२२॥

दोहा—सबते थोड़े पुरुष नर, त्रिय ताते सख्यात ।
बादर अग्नि प्रजापति, असख्यात गुण थात ॥५२३॥
देव अनुत्तर पास के, ताते गुणे असख्या ।
तिह ते नव ग्रीवेक के, ऊपर गुण सख्या ॥५२४॥
तिहते मध्यम हेठ इम, अच्युत आरणत हेर ।
पाणत आणत लग सभी, गुण सखिज्ज गिणेर ॥५२५
असखिज्ज गुण पहु दसे, सप्तम खित्त छठीर ।
पञ्च आठ में सात में, पचमि नरके जोर ॥५२६
लन्तक दिव चउथी नर्के, ताते पचम स्वर्ग ।
तीजो नर्क चतुर्थ दिव, त्रितिय कल्प सुर वर्ग ॥५२७

द्र_ुविया नरक नर गर्भ विन, दुतिय कल्प सुरतार ।
गुण असखयपण बीस [illegible] बोल कहै जिनराय ॥५२
द्रु_तिय कल्प त्रिय प्रथम सुर, तातिय गुण मखेंव ।
ताते भवणे देव गण, गुण असरय भाएव ॥५२६
ताते देवी सखेज्ञ गुण, असंखेज गुण ठान ।
धुर नरके पखी पुरुष, बोल वती सम जान ॥५३०
खेचरी थलचर, थलचरी, जलचर खेलचर नीय ।
व्यन्तर व्यतराणी तथा, जोतिक सुर तिह तीय ॥५३
खेचर थलचर जलचरी, लिंग नपु सक तीन ।
गुणसख्या क्रमक्रमाहि गिण, चउता लीस प्रवीन ५३
चउरिंद्रिपप ज्जत्तगा, ताते गुण सरघोत ।
पचि द्रुपपजत्तगा, विसेसा हिए जात ॥५३२
बेते इन्द्रिय प्रजापति, विसेसा हीए होई ।
पाचेन्द्रिय अपजत्तगा, असंखिज्ज गुण होई ॥५३४
चउवे ते इन्द्रिय धरा, अपजत्तग तिण जीव ।
विसेसा हिया तीन में, बावन बोल कहीव ॥५३५
बादर पचप्रजापति, अपअत्तगछे जान ।
असखिज्ज गुण इक दसे, तेसठ में पहिचान ॥५३६
बन पत्तेय निगोद भू, जल बाऊपर्ण एह ।
तेउपत्तेय निगोद भू, नीर पवन छै तेह ॥५३७
अपजत्तग सूखम अगनि, गुण असरय चउ सठ ।

अपज्जत्तग भू सूक्ष्मे, विसेसाहि पणसठ ॥५३८
अपज्जत्तग जल वाउये, सूक्षम म भी एम ।
सूक्षम तेऊ प्रजापति सख्याते गुण तम ॥५३६
सूक्षम पुढवी जल पवन, प्रजापतिए घोल ।
विसेसाहिए लख लहो, इगसचर मो टोल ॥५४०
गुण असख्य अपज्जत्तगा, सूक्षम जीव निगोद ।
गुण सखज्ज सो प्रजापति, लखो ज्ञान घर मोद ५४१
तिहते अधिक अनन्त है, पडिवाई सिद्ध देव ।
सिद्ध प्रभु बादर पणे, प्रजापति अधिकेय ॥५४२
गुण अनन्त [illegible] बहु जिये, सचत्तरमो जान ।
प्रजापति बादर सभी, विसेसा हीय मान ॥५४३
अपज्जत्तग बन बादरे, असखिज्ज गुण होई ।
अपज्जत्तग बादर सभी, विसेसाहिए सोई ॥५४४
विसेसाहिए सब कहै, बादर जिनवर देव ।
अपज्जत्तग बन सूक्ष्म में, गुण असख्य मण एव ॥५४५
सब सूक्षम अपज्जत्तगा, विसेसाहिए जीव ।
सूक्षम पणे प्रजापति, गुण सखिज्ज सदीव ॥५४६॥
प्रजापति सूक्षम सभी, विसेसाहिए जान ।
सब सूक्षम इम ही अधिक, पट असीवा मो ठान ॥५४७
बारह पोला माहि कहुं, विसेसाहिए होण ।
सब निगोद वनस्पति, एकेंद्रिय तिम जोय ५४८॥

मिच्छा दिट्ठी अवीरतीय, सकषाईछउमत्थ ।
सजोगी समारीया, सर्व जीव इम अर्थ ॥५४९
ईह विधि बोलां उठानवे, पजरखां सो जाण ।
इण में वरते बासठा, लख इरज सधर ध्यान ॥५५०
एकिंद्रिय सूक्ष्म इतर, विगलिंद्रियतिहु जाति ।
सन्नि असन्नि पंनिंद्रिया, सात बोल बहु भांति ॥५५१
प्रजापति अप्रजापति, , इम चउ दस जिह भेव ।
छहु गुण ठाणे चउदे कहे, जोग पंच दस एव ॥५५२
उपयोग बारह सहित, लेश्या छहु के साथ ।
अल्पा बहुत सो बासठा, कहा मुनिश्वर नाथ ॥५५३
बोल बोल में बासठा, लखो भांति बहुहोई ।
* समकितधारी सद है, सो ओडक शिव होइ ॥५५४

अर्थ—१सब से थोड़े पुरुष मनुष्य २ स्त्रीयें उनसे संख्यात गुणी ३ बादर अग्नि प्रजापत असंख्यात गुणा हैं ॥२२३॥ ४अनुत्तर विमान के देवता उनसे असंख्यात गुणे ५ नोनवमनेग के ऊपर की त्रिक के देवता सख्यात गुणा६ मध्यम त्रिक के देवता सख्यात गुणे, ७निचे के त्रिक के देवता सख्यात गुणे, ८ बारहमें देवलोक के देवता संख्यात गुणा, ९ ग्यारमें देवलोक के देवता संख्यात गुणे, १० दसवे देवलोक के देवता संख्यात गुणा, ११ नवमें देवलोक के देवता सख्यात गुण, १२ सातवी नर्क नारकी असंख्यात गुणा, १३–छठी नर्क के नारकी असंख्यात गुणे, १४– आठवीं देवलोक के

देवता असख्यात गुणे, १४–सातवें देवलोक के देवता असंख्यात गुणे १६–पाचवीं नर्क के नारकी असंख्यात गुणे, १७–छठे देवलोक के देवता असख्यात गुणे, १८–चौथी नर्क के नार्की असंख्यात गुणे, पाचवें देवलोक के देवता असख्यात गुणे, १६–तीसरी नर्क के नार्की असंख्यात गुणे, २०–चौथे देवलोक के देवता असंख्यात गुणे, २१–तीसरे देवलोक के देवता असख्यात गुणे, २२–दूसरी नर्क के नार्की असख्यात गुणे, २३–समोलम मनुष्य असख्यात गुणे, २४ दूसरे देवलोक के देवता असख्यात गुणे, २५–दूसरे देवलोक के देवी सख्यात गुणे २६ पहले देवलोक के देवता संख्यात गुणे, २७ पहले देवलोक की देवी सख्यात गुणी, २८ भवनपति देवता स[illegible] गुणे, २६ भवनपतियों क[illegible] ी सख्यात गुणी, ३० पहली नर्क के नार्की असख्यात गुणे, ३१ खेचर तिर्यन्चपुरुष ३२ असंख्यात गुणे ३३ थलचर पुरुष तिर्यंच संख्यात गुणा, ३४ थलचर [illegible] संख्यात गुणी, ३५ जलचर पुरुष तिर्यन्च संख्यात गुणा [illegible] चर तियन्चणी[illegible] गुणी, ३७ वान व्यन्तर देवता [illegible], ३८ वान व्यन्तर देवी सख्यात गुणी, ३६ ज्योतिषी देवता [illegible] ४० ज्योतिषियों की देवी संख्यात गुणी ४१ खेचर तिर्यन्च नपुंसक संख्यात गुणे, ४२ थलचर नपुंसक तियन्च[illegible] ४३ जल चर नपुंसक तिर्यंच संख्यात गुणे ४४ चौरि[illegible] गुणे, ४५ पंचेन्द्रिय पर्याप्ता विशेषाधिक, ४६ बेइन्द्रिय पर्याप्ता विशे[illegible] षाधिक, ४७ तेन्द्रीय पर्याप्ता विशेषाधिक, ४८ पंचेन्द्रिय [illegible] असख्यात गुणा, ४६ चौरिन्द्रिय अपर्याप्ता वि[illegible], ५० तेइन्द्रिय

अपर्याप्ता विशेषादिक, ५१ बेंद्रिय अपर्याप्ता विशेषादिक, ५२ बादर प्रत्येक वनस्पतिकाय पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५३ बादर निगोद पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५४ बादर पृथ्वीकाय पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५५ बादर अपकाय पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५६ बादर वाउकाया पर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५७ तेउ काया पर्याप्ता असंख्यातगुणा, ५८ बादर प्रत्येक वनास्पति काय का अपर्याप्ता असंख्यात गुणा, ५९ बादर निगोद का अपर्याप्ता असंख्यात गुणा, ६० बादर पृथ्वी काय अपर्याप्ता असंख्यात गुणा, ६१ बादर अपकाया अपर्याप्ता असंख्यात गुणा, ६२ बादर वाउकाया अपर्याप्ता असंख्यात गुणा, ६३ सूक्ष्म तेउकाया अपर्याप्ता असंख्यात गुणा, ६४ पृथ्वी काया अपर्याप्त विशेषादिक, ६५ सूक्ष्म अपकाया अपर्याप्त विशेषादिक, ६६ सूक्ष्म वाउ काया अपर्याप्ता विशेषादिक, ६७ सूक्ष्म तेउकाय पर्याप्ता संख्यातगुणा, ६८ सूक्ष्म पृथ्वी काया पर्याप्ता विशेषादिक, ६९ सूक्ष्म अपकाया पर्याप्ता विशेषादिक, ७० सूक्ष्म वाउकाया पर्याप्ता विशेषादि, ७१ सूक्ष्म निगोद अपर्याप्ता असंख्यात गुणा, ७२ सूक्ष्म निगोद पर्याप्ता संख्यात गुणा, ७३ अभव्य जीव अनन्त गुणा ७४ पडिवाई सम्यक दृष्टि अनन्त गुणे ७५ श्री सिद्ध भगवान भी अनन्त गुणा, ७६ बादर वनास्पति काया अनन्तकाया अनन्त गुणा, ७७ बादर पर्याप्ता विशेषादिक, ७८ बादर वनास्पति अपर्याप्ता विशेषादिक, ७९ बादर का अपर्याप्ता विशेषादिक, ८० समुचय बादर जीव विशेषादिक, ८१ सूक्ष्म वनास्पति अपर्याप्ता असंख्यात गुणा ८२ सूक्ष्म अपर्याप्ता विशेषादिक ८३ सूक्ष्म वनास्पति पर्याप्ता

धर्मंख्यात गुणा, ८७ सूक्ष्म का अपर्याप्ता विशेषाधिक, ८८ समुच्चय सूक्ष्म जीव विशेषाधिक, ८६ भव्य सिद्धिया जीव विशेषाधिक, ८७ निगोदिया जीव विशेषाधिक, ८८ वनास्पतिकाया विशेषाधिक ८६ एकेन्द्रिय जीव विशेषाधिक,, ६० तिर्यचयोनि के जीव विशेषाधिक , ६१ मिथ्या दृष्टि जीव विशेषाधिक, ६२ अव्रती जीव विशेषाधिक, ६३ सकषाई जीव विशेषाधि, ६४ छद्मस्त जीव विशेषाधिक ६५ सयोगी जीव विशेषाधि, ६६ ससारी जीव विशेषाधिक, ६७ स्थावर विशेषाधिक, ६८ सब जीव विशेषाधिक ॥५२४ से लेकर ५४६ तक के दोहा का सम्पूर्ण हुवा है। इस प्रकार के बोल अठानवे पन्नवणा सूत्र से जान लेना। इन्हीं में बासठ बोल भी समझ लेना हरनस रायने धर के ध्यान से ॥५५०॥ एकेन्द्रिय के चार भेद सूक्ष्म बादर पर्याप्ता अपर्याप्ता विकलेन्द्रिय के तीन भेद बेंद्रि तेंद्रीयचौरिंद्रिय संनि असंनि पचेंद्रिय इनकापर्याप्ता अपर्याप्ता यहचौदह भेदहुवे जीवों क ५५० ५५१। चौदह गुण स्थान भी योग पन्दरहर, उपयोग बारह ही लेश्या भी छे के मिला कर अल्पा बहुत्व जो हैं सब बासठिया का है। मुनिश्वरनाथ जिनदेव जी ने ॥ ५५२-५५१ ॥ प्रत्येक बोल में बासठ २ निरो तर होते हैं सम्यक् धारक जो हैं उन्ही को है, श्रद्धा। सो ही उत्कृष्टापद शिव प्राप्त करते हैं ॥५५४॥

दोहा—नमस्कार भगवान को, करो सुगुरु की सेव।
कर्म, आठ के भेद अब, कहो विमरजिनदेव ॥५५५

अर्थ —नमस्कार करके भगवान को करता हूँ सेवा सद्गुरु की

म और शरण लेकर आष्ट कर्मों के भेद उपभेद कहते हैं जोकि श्री जिनेश्वरदेव जी ने कहा है उन्हीं का स्मरण करके ॥५५५॥

॥ मरहटा छन्द ॥

सुण ज्ञाना वरणी दरसना वरणी और वेदनी थाउ ।
मोहनी नमाय गोत्रान्तराय अष्ट कर्म इह नाउ ॥५५६॥
अष्ट कर्म उतपाता शिव मगघाती इह बधण संसार ।
इह हव सुख पावै सिद्ध रहावै श्रीजिन कहयो विचार ॥५५७

अर्थ—ज्ञानावरणीय, दर्शाना वरणीय, वेदनीय मोहनीय, और आयुष्य, नाम गौत्र, अन्तराय, कर्म यह आठों के नाम हैं ॥५८६॥ इन आठों ही कर्मों की उत्पत्ति से शिवमार्ग (मुक्तिमार्ग) घातक है और संसार बन्ध का कारण हैं, इन्हीं को नाश करने से अविचल सुख की प्राप्ती होती है श्री जिनेश्वरदेवजी ने अपने मुखारविन्द से कथन किया है ॥५५७॥

॥ कवित्त ॥

मति ज्ञाना वरणी पहली सुण श्रुति ज्ञानावरणी दुतीय ।
औव ज्ञानावरणी तीजीमन पर्यव ज्ञानावरणीय ॥
पचम केवल ज्ञाना वरणी जो पच सोइ ज्ञानवरणीय ।
पांचों खये भए केवल घर जिन अरिहंत सर्वज्ञानीय ॥५५८

अर्थ—ज्ञाना वरणीय की पाँच प्रकृति—मतिज्ञाना

वरणीय श्रुति ज्ञाना वरणीय, अवधि ज्ञानावरणी, मन पर्यवज्ञाना वरणीय और केवल ज्ञाना वरणीय, जो ज रा मा द्रा प्रकृतियों को क्षय करता है उसको केवल ज्ञान हो जाता है और अरिहन्त कहलाते हैं, जो इन्हों में से कुछ प्रकृति क्षय करते हैं उसको ज्ञान प्रगट हो जाता है ॥५५८॥

चक्षु दरसणा वरणी कहिए बीजी नाम सुणोजु अचक्षु।
औध दरसणा वरणी, तीजी केवल दरसणा वरणप्रत्यक्षु ॥
निद्रा अरु निद्रा निद्रा फुनिप्रचला, प्रचरा प्रचला अचु।
थानद्धी नवदरसणा वरणी वरणा क्षय सर्वदरसीपदलचु ॥५५६

अर्थ—दर्शना वरणीय की नवप्रकृति—चक्षुदर्शना वरणीय, अचक्षु दर्शना वरणीय, केवल दर्शनावरणीय, अवधि दर्शना वरणीय निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, स्तियाधि। दर्शना वरणीय कर्म क्षय होने से सर्वदर्शीपद प्राप्त करते हैं ॥५५६॥



श्री जिन शासन धर्म समिति के सदस्यों की नामावली।

१ शम्भूमल टेकचन्द रोहतक मण्डी।
२ परमतराय तेजुराम नम्बरदार मियाँ वंचल (करनाल)
३ गणपतराय चुन्नीलाल जैन रतिया (हिसार)
४ जैन श्री संघ रतिया (हिसार)
५ भागमल कस्तूरीलाल नारंग मण्डी (हिसार)
६ हरिश्चन्द्र जैन रोहतक मण्डी।
७ बनवारीलाल वेशोराम जैन रतिया (हिसार)
८ बाबूराम भूराराम कलानौर (रोहतक)
९ सिरसन मोतिहारीसिंह जैन भिवानी (हिसार)
१० रामजीलाल गोपीचन्द्र जैन टोहाना (हिसार)
११ धर्मीराम भगवानदास जैन सुजानपुर लोधी (पेप्सू)
१२ तेलूराम घसीमल जैन रतिया (हिसार)
१३ धर्मीमल प्यारेलाल जैन रतिया (हिसार)
१४ मिलखीराम बिहारीलाल जैन रतिया (हिसार)
१५ भगतराम रूपचन्द जैन रतिया हिसार)
१६ प्रेमसुखदास रावतमल गौढोलेरा बड़ा पो० सादुलगढ़ (
१७ धूलचन्द मेघराज जैन रतिया (हिसार)
१८ दसराज देशराज जैन रतिया (हिसार)
१९ राजाराम हरीदास जैन रतिया (हिसार)
२० सीताराम जिनदास रतिया (हिसार)
२१ मदनलाल प्रेमचन्द जाखल मण्डी (हिसार)
२२ कानमल मगीनाराम जाखल मण्डी (हिसार)
२३ शान्तिलाल कीर्तिकुमार जैन रतिया (हिसार)
२४ आत्माराम तेजराम रतिया (हिसार)
२५ मेहरचन्द रोशनलाल जैन झुम्बा (फिरोजपुर)
२६ हीरालाल काशीराम जैन मलोट मण्डी (फिरोजपुर)